अंक 3 | फरवरी, 2017

आई वंडर...

रीडिस्कवरिंग स्कूल साइंस

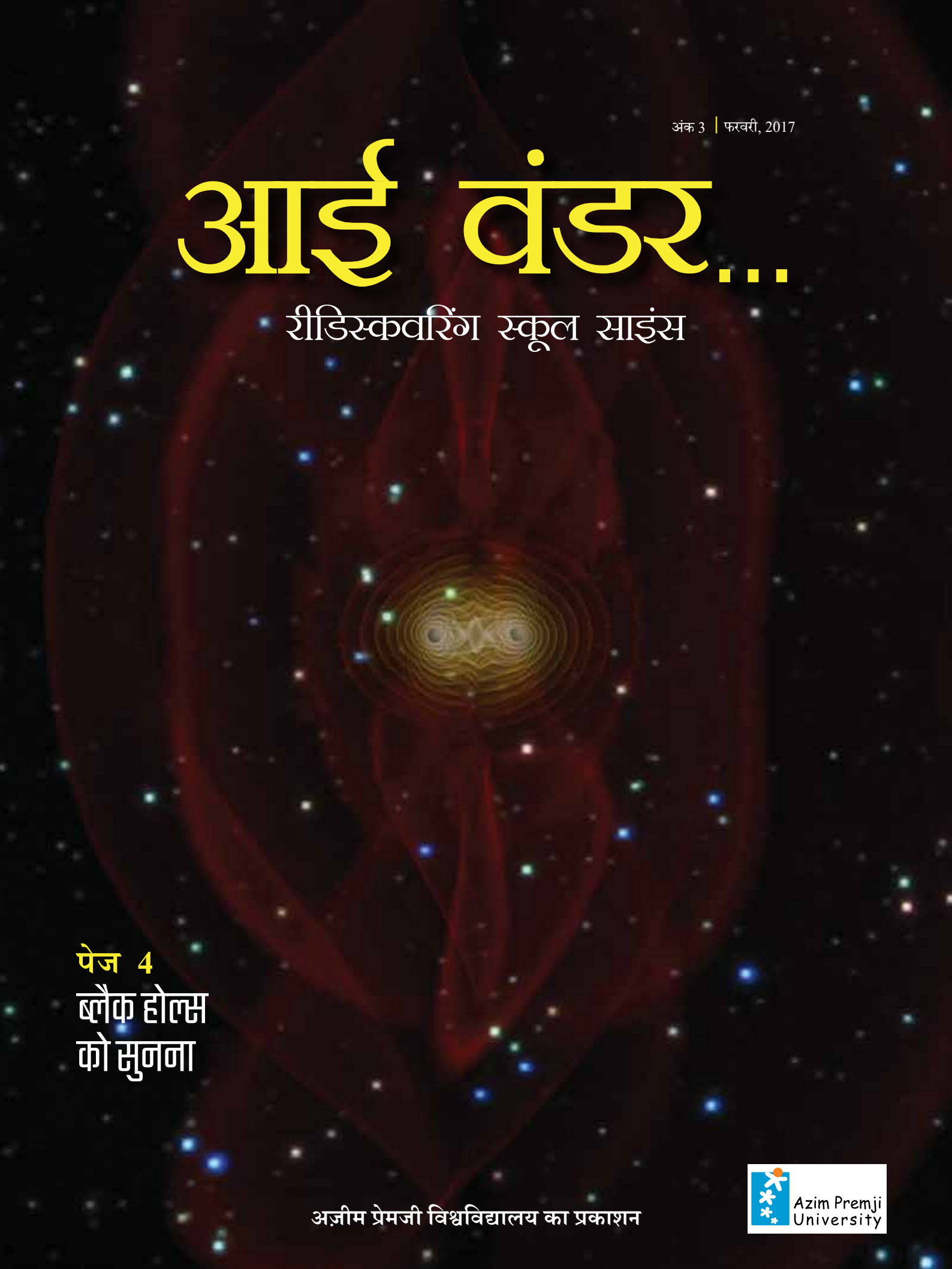

पेज 4

ब्लैक होल्स को सुनना

अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय का प्रकाशन

Azim Premji University

i wonder
No. 134, Doddakannelli
Next to Wipro Corporate Office
Sarjapur Road, Bangalore - 560 035. India
Tel: +91 80 6614 9000/01/02 Fax: +91 806614 4903
www.azimpremjifoundation.org

Also visit Azim Premji University website at
www.azimpremjiuniversity.edu.in

A soft copy of this issue can be downloaded from
www.http://azimpremjiuniversity.edu.in/SitePages/resources-iwonder.aspx
https://anuvadasampada.azimpremjiuniversity.edu.in/view/type/periodicals.html

आई वंडर...
रीडिस्कवरिंग स्कूल साइंस

सम्पादक
रामगोपाल (राम जी) वल्लत, चित्रा रवि

सम्पादक मण्डल
आनन्द नारायणन, चन्द्रिका मुरलीधर, गीता अय्यर, हृदय कान्त दीवान, जयलक्ष्मी अय्यर, जुल्फ़िकार अली, राधा गोपालन, राजाराम नित्यानन्द, रीतिका सूद, रिचर्ड फर्नाडीज़, सौरभ सोम, सुशील जोशी, यास्मीन जयतीर्थ

सलाहकार
फाल्गुनी सारंगी, मनोज पी., एस.गिरिधर

हिन्दी अनुवाद
भरत त्रिपाठी, अरविन्द गुप्ते, भरत पूरे, भोलेश्वर दुबे, किशोर पंवार

कॉपी एडिटर (हिन्दी)
कविता तिवारी

हिन्दी अंक सम्पादन
राजेश उत्साही

प्रकाशन समन्वयक
स्नेहा कुमारी

चित्रांकन
विद्या कमलेश

अँग्रेज़ी डिज़ाइन
ज़िंक एवं ब्रोकली

हिन्दी अंक लेआउट
आदर्श प्रा.लि. भोपाल

फोटो सौजन्य
मुख्य आवरण : 3-D simulation of merging black holes, through the detection of gravitational waves. Henze, NASA. URL: https://www.nasa.gov/centers/ goddard/universe/gwave.html. Licence: Public Domain.
पिछला आवरण : Archaeopteryx bavarica. Luidger, Wikimedia Commons. URL: https://en.wikipedia.org/wiki/File:Archaeopteryx_bavarica_Detail.jpg. License: CC-BY-SA.

आभार
इस अंक को प्रकाशन योग्य बनाने के लिए हम प्रोफ़ेसर सत्यजीत मायॅर एवं डॉ. स्मिता जैन, इण्डिया बायोसाइंस,नेशनल सेंटर फॉर बायलोजिकल साइंसेस,बेंगलूरु; प्रोफ़ेसर पुण्य मिश्र, अरिजोना स्टेट यूनिवर्सिटी,यूएस तथा प्रोफ़ेसर एंजेला कैलाबेरी बर्टन, मिशीगन स्टेट यूनिवर्सिटी,यूएस का विशेष आभार व्यक्त करते हैं।

License
All articles in this magazine are licensed under a Creative Commons-Attribution-Non Commercial 4.0 International License

कृपया ध्यान दें : इस अंक में प्रकाशित लेख मूलत: आई वंडर...(अँग्रेज़ी) अंक 3 फरवरी, 2017 के लेखों का हिन्दी अनुवाद हैं। लेखों में व्यक्त विचार और दृष्टिकोण लेखकों के अपने हैं। उनसे अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय या अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

सम्पादक की मेज़ से

विज्ञान का धक्का पाकर मनुष्यता अन्तरिक्ष भर की यात्रा करने वाली ऐसी सभ्यता बनने के सिरे पर खड़ी है, जिसकी 'आँखें' दूर के तारों पर मज़बूती से लगी हैं, और पैर सौरमण्डल के दूसरे ग्रहों की ओर अपने शुरुआती छोटे-छोटे क़दम बढ़ा रहे हैं। इस मोड़ पर यह ध्यान रखना ज़रूरी है कि विज्ञान की शिक्षा अब विद्यार्थियों को, सिर्फ़ इस तरह से तथ्यों की भरमार बताने तक सीमित नहीं रह सकती, जैसे कि उनका होना तो निर्धारित ही था। इसकी बजाय, जैसा कि **विज्ञान का महत्त्व क्यों है** लेख में भी ज़ोर दिया गया है, विज्ञान शिक्षा की भूमिका बच्चों को उस वैज्ञानिक प्रक्रिया को समझने के योग्य बनाने की है, जिसकी बदौलत सबसे विश्वसनीय लगने वाली परिकल्पनाओं को ठोस तथ्यों के द्वारा प्रमाणित किया गया है और फिर सिद्धान्तों की तरह प्रस्तुत किया गया। विज्ञान की शिक्षा की भूमिका बच्चों को इस बात के लिए प्रेरित करने की भी है, कि वे इस प्रक्रिया का उपयोग करें, न सिर्फ़ वैज्ञानिक खोजों में, बल्कि उनकी रोज़मर्रा की ज़िन्दगी में। विज्ञान के प्रभावी शिक्षक इस प्रक्रिया की ख़ूबसूरती को, और इसके द्वारा सामने आने वाले अचम्भों को अपने विद्यार्थियों के साथ बाँट सकते हैं, क्योंकि, अक्सर, इनमें से हर एक 'तथ्य' कई वैज्ञानिकों द्वारा दशकों तक, और कभी-कभी तो सदियों तक किए गए कामों का समागम और चरमोत्कर्ष होता है। अक्सर, इन वैज्ञानिकों को कई दूसरे वैज्ञानिकों के कामों से मदद मिली है जिनमें से कुछ तो अपनी परिकल्पनाओं को सिद्ध करने के प्रयास में अन्धी गलियों में घूमते रह गए। इसके अलावा एक और अनोखी बात है कि इनमें से कई वैज्ञानिकों ने विज्ञान की एक-दूसरे से असम्बद्ध लगती शाखाओं में काम किया है, और शायद वे एक-दूसरे से असम्बद्ध सवालों के जवाब तलाशते रहे हैं!

सबसे बुनियादी सवालों (काल और आकाश की, पदार्थ और ऊर्जा की, या फिर हमारी पृथ्वी के अस्तित्व और जीवन की उत्पत्ति से जुड़े सवाल) के सबसे विश्वसनीय जवाबों को तलाशने में भी विज्ञान की इस सहयोगात्मक प्रकृति से मदद मिली है। अक्सर, दुनिया भर के सैकड़ों वैज्ञानिकों ने जिगसॉ पहेली के अलग-अलग टुकड़ों को सामने रखा है जो मिलकर हमारे सामने पूरी बड़ी तस्वीर रखते हैं। हमने **उत्पत्तियों** पर आधारित विषयवस्तु वाले खण्ड में इस स्थिति को सामने रखने का प्रयास किया है। विज्ञान का कोई भी विद्यार्थी जिगसॉ पहेली के इन सैकड़ों टुकड़ों में से हर एक का महत्त्व भी उसी तरह समझेगा, जैसे कि आखिर में सामने आने वाली पूरी तस्वीर का होता है।

जब हम इस बात की पड़ताल करते हैं कि इन जवाबों तक कैसे पहुँचा गया होगा, तो हमें नई खोजों में प्रौद्योगिकी की भूमिका का भी एहसास हो जाता है। प्रौद्योगिकी में होने वाली हर उन्नति से वैज्ञानिकों को प्रकृति को देखने के लिए और 'इन्द्रियाँ' मिल जाती हैं, और इस तरह उन्हें बहुत संशोधित, और पूरी तरह से नए, तथ्य भी मिल जाते हैं। कभी-कभी ये नए तथ्य मौजूदा 'तथ्यों' को बदल देते हैं, जिससे वैज्ञानिकों में ऐसी नई परिकल्पना को विकसित और सिद्ध करने की अफ़रा-तफ़री मच जाती है जो सभी नए ज्ञात प्रेक्षणों पर माफ़िक बैठती हो। इस अंक के कई खण्ड जिनमें, **भौतिकी में उभरती प्रवृत्तियाँ, इतिहास के आख्यान, भारत में विज्ञान की सुविधाएँ** और **मैं वैज्ञानिक हूँ** शामिल हैं, इस बात को चिन्हांकित करते हैं कि किस तरह प्रौद्योगिकी ने ब्रह्माण्ड की और हमारे आस-पास की प्रकृति की, हमारी वर्तमान समझ को बनाने में हमारी मदद की है।

विज्ञान की यह ख़ूबसूरती है कि उसमें कोई अन्तिम सत्य नहीं होता। नई प्रौद्योगिकियों के विकसित होते जाने और नई खोजों के सामने आते जाने के साथ नए रहस्य भी उभरते हैं, जिन्हें समझने के लिए और सहयोगात्मक कार्यों की तथा और अधिक उन्नत प्रौद्योगिकियों की ज़रूरत होती है। इसलिए विज्ञान, ब्रह्माण्ड की प्रकृति को समझने की तथा मनुष्यता इसके असीमित संसाधनों को किस प्रकार सर्वश्रेष्ठ ढंग से उपयोग में ला सकती है इस बात को समझने की, एक कभी न ख़त्म होने वाली तलाश है। हम आशा करते हैं कि **आई वंडर** का यह अंक हमारे प्रत्येक पाठक के भीतर इस तलाश में निकल पड़ने की चिंगारी सुलगाएगा।

आप किस तरह विज्ञान सीखने, सिखाने और करने के इस सवाल से जूझते हैं? अपने विचार और अनुभव हमसे iwonder@apu.edu.in पर साझा करें ।

राम जी वल्लत
सम्पादक

अनुवाद : भरत त्रिपाठी

इस अंक में

भौतिकी में उभरती प्रवृत्तियाँ

4
ब्लैक होल्स को सुनना
परमेश्वरन अजीत

10
डार्क मैटर पर प्रकाश
अमिताभ मुखर्जी

15
बाह्य अन्तरिक्ष में अन्य संसारों की खोज
सुमा एन मूर्ति

22
मंगल पर मानव बस्ती
मार्स वन के साथ साक्षात्कार

28
स्क्रैमजैट : अन्तरिक्ष की यात्रा की लागत को कम करने के लिए इसरो की भविष्यवादी प्रौद्योगिकी
टी वी वेंकटेश्वरन

विज्ञान की प्रकृति

34
क्यों महत्त्वपूर्ण है विज्ञान?
अनिल कुमार चल्ला और रीतिका सूद

शिक्षण : मानो कि धरती मायने रखती है

38
कचरे से ख़ज़ाना : सोने की खदान आपके बग़ीचे में
राधिका पद्मनाभन

इतिहास के आख्यान

43
आवर्त सारणी रसायनविज्ञान के इतिहास की ओर खुलने वाली खिड़की!
सविता लाडागे और तेजस जोशी

विज्ञान की प्रयोगशाला

51
बल की वैकल्पिक अवधारणाओं की पड़ताल
सौरभ सोम

पोस्टर
कम्पोस्ट खाद बनाने की शुरुआत
राधा गोपालन

विज्ञान आँगन में

58
परागणकर्ता : पौधों के प्रवर्धक
मीनाक्षी पन्त

विज्ञान शिक्षक काम पर

65
कला और पारिस्थितिकी
अभिषेका कृष्णगोपाल

भारत में विज्ञान की सुविधाएँ

71
रेडियो खगोलशास्त्र और वृहत मीटरवेव रेडियो दूरदर्शक
जयराम एन चेंगालूर

भौतिकी में उभरती प्रवृत्तियाँ

82
विज्ञान के शिक्षकों को सामाजिक न्याय का ध्यान क्यों रखना चाहिए
डे ग्रीनबर्ग

मैं एक वैज्ञानिक हूँ

87
मेरे जीवन का एक सप्ताह
आफ़ताब दीवान

पोस्टर
दस बातें जो आप नहीं जानते हैं समुद्री सूक्ष्मजीवों के बारे में
माहिरा काकाजीवाला

उत्पत्ति

91
बिग बैंग
आनन्द नारायणन

100
तत्वों की उत्पत्ति
श्रीनिवासन कृष्णन

113
उत्पत्ति ग्रहों के संसारों की
आनन्द नारायणन

125
जीवन की उत्पत्ति रसायनविज्ञान से जीवविज्ञान
नीरजा व्ही. बापट, चैतन्य व्ही. मुंगी एवं सुधा राजमणी

विज्ञान संचार

130
जीवविज्ञान शिक्षा के एशियाई संगठन का छब्बीसवाँ द्विवार्षिक सम्मेलन एक प्रतिवेदन
रीतिका सूद और गीता अय्यर

ब्लैक होल्स को सुनना

परमेश्वरन अजीत

हाल ही में हुई गुरुत्वाकर्षी तरंगों (ग्रेविटेशनल वेव्स) की खोज ने न केवल आइंस्टीन की एक सदी पुरानी भविष्यवाणी की पुष्टि की है, बल्कि उसने ब्रह्माण्ड को देखने के एक बिलकुल नए मार्ग को खोल दिया है। यह लेख इस खोज की रोमांचक कथा को बयान करता है, तथा यह भी बताता है कि उसकी पृष्ठभूमि में क्या-क्या हुआ था और उसमें आगे क्या होने की सम्भावनाएँ हैं।

एक सुदूर आकाशगंगा (गैलेक्सी) में लगभग 1.3 अरब वर्ष पहले, दो विराट ब्लैक होल, क़रीब-क़रीब प्रकाश की चाल जितनी तेज़ चाल से गति करते हुए एक-दूसरे में मिल गए और इस तरह एक और अति विराट ब्लैक होल का जन्म हुआ। इस शक्तिशाली घटना ने एक सैकेण्ड के भी एक अंश में लगभग तीन सूर्यों के द्रव्यमान के बराबर ऊर्जा उत्सर्जित की। यदि इस ऊर्जा को प्रकाश में परिवर्तित किया गया होता, तो इसकी चमक के आगे दिखाई देने वाले समस्त ब्रह्माण्ड की चमक (अर्थात ब्रह्माण्ड के समस्त तारों की चमक) एक क्षणांश के लिए बुझ-सी गई होती। परन्तु, ब्लैक होल्स के इस मिलाप ने कोई प्रकाश पैदा नहीं किया। इसकी बजाय इसने आकाश-समय (स्पेसटाइम) में शक्तिशाली तरंगें पैदा कीं, जो गुरुत्वाकर्षी तरंगें कहलाती हैं।

पृथ्वी पर ये तरंगें 14 सितम्बर 2015 को, 1.3 अरब प्रकाश वर्षों की यात्रा करने के बाद पहुँचीं। अमेरिका में लेज़र इंटरफेरोमीट्रिक ग्रेविटेशनल वेव्स ऑब्जर्वेटरी (लीगो) में लगे दो शानदार उपकरणों ने आकाश-समय में उठी इन लघु तरंगों को पकड़ा। जब वैज्ञानिकों ने 12 फरवरी 2016 को इस खोज की घोषणा की तो इसने जनसामान्य की कल्पनाओं में और बड़ी तरंगों को पैदा किया। न्यूयॉर्क टाइम्स ने इसका वर्णन "ब्रह्माण्ड के पार से सुनी गई चहचहाहट" के रूप में किया। वैज्ञानिकों ने लीगो में जिस परिघटना को घटते हुए पकड़ा था वह वही व्यापक सापेक्षता सिद्धान्त (जनरल थ्योरी ऑफ रिलेटिविटी) थी जिसकी भविष्यवाणी अल्बर्ट आइंस्टीन ने सैद्धान्तिक रूप से लगभग एक सदी पहले, उनके गुरुत्वाकर्षण सम्बन्धी सिद्धान्त के एक परिणाम के रूप में कर दी थी।

गुरुत्वाकर्षी तरंगें

गुरुत्वाकर्षी तरंगों का अस्तित्व होना आइंस्टीन के व्यापक सापेक्षता सिद्धान्त (1915) के कुछ सबसे रहस्यमय निष्कर्षों में से एक है। आधुनिक भौतिकशास्त्र के स्तम्भों में से एक माने जाने वाला व्यापक सापेक्षता का सिद्धान्त, गुरुत्वाकर्षण का

बॉक्स-1 : गुरुत्वाकर्षण के कारण प्रकाश का झुकाव

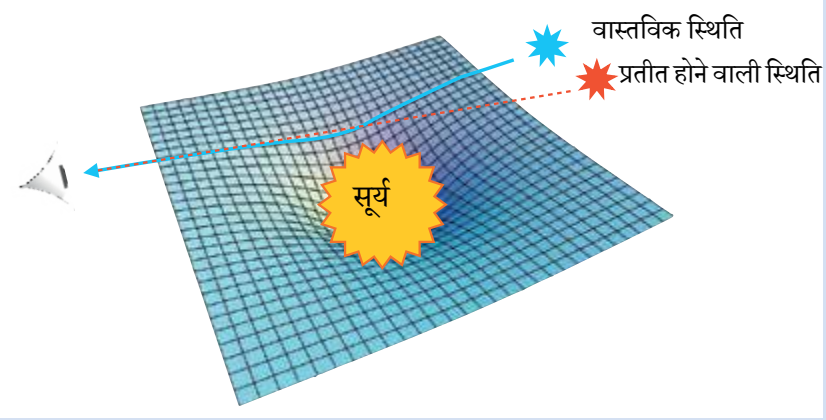

यह चित्र आकाश-समय के वितान को युक्तिपूर्वक आड़ी और खड़ी समानान्तर रेखाओं के काटने से बने एक दो आयामी तल के रूप में दर्शाता है। सूर्य अपने आस-पास के इस आकाश-समय के वितान को थोड़ा वक्र बना देता है जिससे किसी तारे और प्रेक्षक के बीच की सबसे छोटी दूरी एक सीधी रेखा नहीं रह जाती। चूँकि तारे का प्रकाश, प्रेक्षक और स्रोत के बीच की सबसे छोटी दूरी वाला मार्ग चुनता है, इसलिए वह आकाश-समय के वितान में झुक जाता है, जिसके फलस्वरूप तारे की प्रतीत होने वाली स्थिति थोड़ी खिसक जाती है। किसी तारे का जो प्रकाश सूर्य के अंग के पास से गुज़रेगा उसमें सबसे ज़्यादा विचलन (लगभग 1.75/3600 डिग्री का) होगा। इसलिए, सूर्य के सबसे नज़दीक स्थित तारों की प्रतीत होने वाली स्थिति में सबसे ज़्यादा विचलन होता है।

वह सबसे सटीक वर्णन है जो आज हमें उपलब्ध है। इस सिद्धान्त के अनुसार, कोई भी विशालकाय पिण्ड (या ऊर्जा के अन्य रूप, जैसे कि विद्युत चुम्बकीय विकिरण) उसके आस-पास के आकाश-समय में वक्रता पैदा कर देता है। आकाश-समय की इस वक्रता का अनुसरण करता हुआ प्रकाश, जो किसी सपाट आकाश-समय में सीधी रेखा में गति करता है, किसी विशालकाय पिण्ड के निकट झुकने लगता है।

इस प्रभाव का सबसे पहला प्रेक्षण ब्रिटिश खगोल वैज्ञानिक, आर्थर एडिंग्टन के द्वारा, 1919 के पूर्ण सूर्यग्रहण के दौरान किया गया था। तारों के प्रकाश के झुकाव के कारण सूर्य के नज़दीक स्थित तारों की प्रतीत होने वाली स्थिति, उनकी वास्तविक मूल स्थिति की तुलना

बॉक्स-2 : वैश्विक स्थिति निर्धारण प्रणाली (ग्लोबल पोजीशनिंग सिस्टम) तथा गुरुत्वाकर्षण के कारण होने वाला समय का विस्तारण

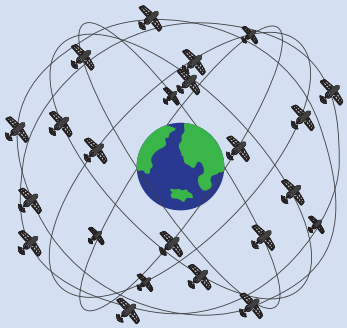

ग्लोबल पोजीशनिंग सिस्टम (जीपीएस) पृथ्वी की परिक्रमा करने वाले उपग्रहों की एक व्यवस्था पर आधारित होता है, जिसके लिए पृथ्वी एक सन्दर्भ बिन्दु का काम करती है। इन उपग्रहों में बहुत बारीक़ी से समय निर्धारित करने वाली परमाणु घड़ियाँ होती हैं, और ये उपग्रह निरन्तर अपनी स्थिति और समय का प्रसारण करते रहते हैं। यदि हमें एक ही समय पर कम-से-कम चार उपग्रहों से संकेत प्राप्त हों, तो हम प्रकाश की ज्ञात नियत चाल का उपयोग करते हुए, पृथ्वी पर अपनी त्रिआयामी स्थिति की गणना कर सकते हैं। समय का मापन किसी सन्दर्भ घड़ी द्वारा किया जा सकता है। जीपीएस की मदद से हम 10 मीटर तक की शुद्धता की सीमा तक पृथ्वी पर अपनी स्थिति का निर्धारण कर सकते हैं।

परन्तु, व्यापक सापेक्षता के अनुसार गुरुत्वाकर्षण समय को धीमा कर देता है। इसके परिणामस्वरूप, उपग्रह के भीतर स्थित घड़ी की तुलना में, पृथ्वी की सतह पर स्थित वैसी ही घड़ी प्रतिदिन लगभग 3 माइक्रोसैकेण्ड पिछड़ जाएगी। ग़ौर करें कि यह समय उससे काफ़ी ज़्यादा है जितना समय प्रकाश को 10 मीटर की दूरी तय करने में लगेगा। इस तरह जीपीएस के संकेत ग्रहण करने वाले उपकरणों को अपनी स्थिति का सही निर्धारण करने के लिए इस सूक्ष्म प्रभाव को अपनी गणना में शामिल करना पड़ता है।

इस एक तरीके के द्वारा व्यापक सापेक्षता के सिद्धान्त ने हमारे दैनिक जीवन में प्रवेश कर लिया है।

में बदल गई थी, और एडिंग्टन ने पाया कि यह बदलाव आइंस्टीन की भविष्यवाणी के अनुरूप था (**बॉक्स-1** देखें)। आइंस्टीन का सिद्धान्त यह निष्कर्ष भी व्यक्त करता है कि गुरुत्वाकर्षण समय को वक्र बना देता है, अर्थात किसी विशालकाय पिण्ड के निकट समय अपेक्षाकृत धीमी गति से चलता है। इस प्रभाव का प्रेक्षण न केवल अनेक खगोलीय घटनाओं और प्रयोगशाला के परीक्षणों में किया जाता है, बल्कि वैश्विक स्थिति निर्धारण प्रणाली (ग्लोबल पोजीशनिंग सिस्टम) या जीपीएस को भी ठीक से काम करने के लिए इस प्रभाव को समाहित करने की ज़रूरत होती है (**बॉक्स-2** देखें)।

किसी गुरुत्वाकर्षी पिण्ड के बाहर के आकाश-समय में होने वाली वक्रता की मात्रा उस पिण्ड के द्रव्यमान (या ऊर्जा) तथा उससे दूरी पर निर्भर करती है। उदाहरण के लिए, पृथ्वी के द्रव्यमान के कारण होने वाली आकाश-समय की वक्रता अत्यन्त कम होती है, लेकिन फिर भी बारीक़ी से काम करने वाले उपकरणों, जैसे कि जीपीएस, को इन प्रभावों को अपनी गणना में शामिल करना पड़ता है। इसके विपरीत, अत्यन्त विराट और सघन खगोल पिण्डों, जैसे कि ब्लैक होल और न्यूट्रॉन तारों के आस-पास बहुत बड़ी मात्रा में होने वाली वक्रता को देखा जा सकता है। विशालकाय तारों के जीवनकाल का अन्त होने पर (जब उनका नाभिकीय ईंधन चुक जाता है) गुरुत्वाकर्षण के कारण उनके सिमट जाने से ब्लैक होल के निर्मित होने की अपेक्षा की जाती है। उदाहरण के लिए, अपने सूर्य के बराबर द्रव्यमान वाले एक ब्लैक होल की त्रिज्या सिर्फ़ कुछ किलोमीटर की होती है (जबकि याद करें कि सूर्य की त्रिज्या लगभग 700,000 किलोमीटर है)।

जब एक अत्यधिक द्रव्यमान वाले सघन पिण्ड के वेग में त्वरण होता है, तब वह न केवल आकाश-समय की वक्रता को उसकी गति का अनुसरण करने पर मजबूर करता है, बल्कि इस वक्रता में ऐसे कम्पन पैदा करता है जो अपने स्रोत से अलग होकर बाहर की ओर सम्प्रेषित होते हैं। इस तरह से गुरुत्वाकर्षी तरंगों के पैदा होने की प्रक्रिया आवेशित कणों के त्वरण के फलस्वरूप विद्युत चुम्बकीय तरंगों के उत्पन्न होने के समान ही होती है। फ़र्क़ बस यह है कि गुरुत्वाकर्षी तरंगों के मामले में यह कम्पन स्वयं आकाश-समय की ज्यामितीय संरचना में ही होते हैं।

व्यापक सापेक्षता के क्षेत्र समीकरणों की जाँच-पड़ताल करने के दौरान 1916 में आइंस्टीन ने पाया कि उनके ऐसे गणितीय हलों की सम्भावना थी जो प्रकाश की चाल से संचरण करने वाली गुरुत्वाकर्षी तरंगों को निरूपित करते थे। परन्तु, गणितीय रूप से सम्भव इन घटनाओं का वास्तविक भौतिक संसार में कोई अस्तित्व है या नहीं, यह बात

बॉक्स-3 : लेज़र इंटरफेरोमीटर का उपयोग करते हुए गुरुत्वाकर्षी तरंगों को पकड़ना

एक माइकेल्सन इंटरफेरोमीटर में, एक लेज़र किरण-पुंज को विभाजित करके उसे दो आयतीय (ओरथोगोनल) भुजाओं में भेज दिया जाता है, जिन्हें फिर दो दर्पणों के द्वारा परावर्तित करके फिर से संयोजित होने दिया जाता है।

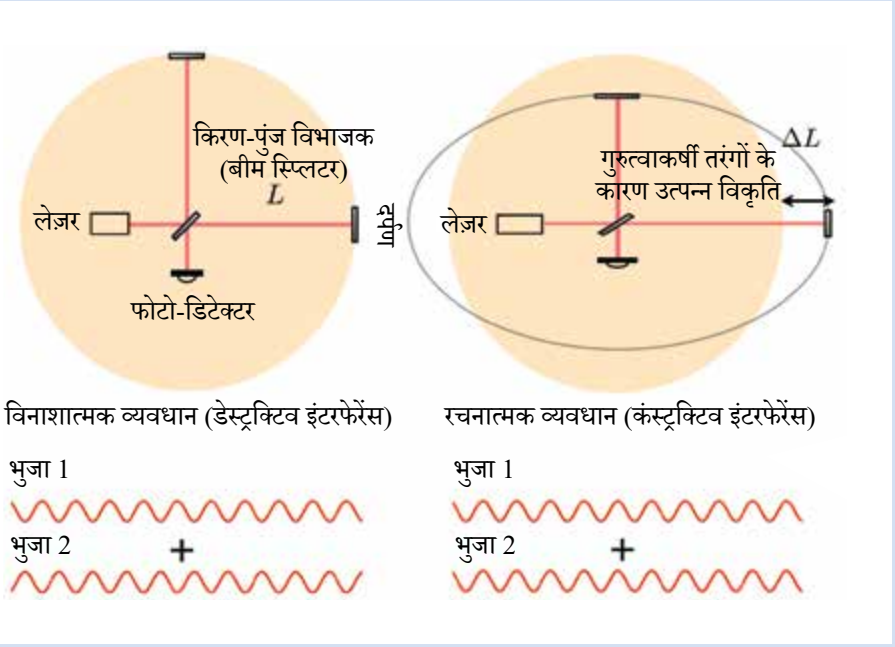

आरम्भ में, दोनों भुजाओं की लम्बाई को इस तरह व्यवस्थित किया जाता है कि दोनों किरण पुंज एक-दूसरे के लिए विनाशात्मक व्यवधान का काम करते हैं (चित्र में बाईं ओर)। पर जब एक गुरुत्वाकर्षी तरंग इंटरफेरोमीटर के तल के लम्बवत गुज़रेगी, तो वह एक भुजा की लम्बाई को बढ़ा देगी, और दूसरी भुजा की लम्बाई को कम कर देगी। चूँकि प्रकाश की चाल एक सार्वभौमिक स्थिरांक है, इसलिए यह परिवर्तन दोनों भुजाओं में प्रकाश के जाने-लौटने की यात्रा में लगने वाले समय में एक सापेक्षिक अन्तर पैदा कर देगा। फिर दोनों प्रकाश पुंजों के बीच होने वाला इंटरफेरेंस परिणामी प्रकाश की शक्ति में परिवर्तन कर देगा जिसे एक फोटो-डिटेक्टर का इस्तेमाल करके पढ़ा जा सकता है।

1950 के दशक तक विवादास्पद बनी रही। ऐसे भी दौर आए जब स्वयं आइंस्टीन को उनके अस्तित्व पर सन्देह होने लगा। पर फिर, 1950 और 1960 के दशकों में हुए बहुत-से सैद्धान्तिक शोध कार्यों ने यह स्थापित किया कि गुरुत्वाकर्षी तरंगों का वास्तव में भौतिक अस्तित्व होता है। उदाहरण के लिए, बहुत कुछ विद्युत चुम्बकीय तरंगों की तरह वे भी उनके स्रोत से ऊर्जा को दूर ले जा सकती हैं। फिर, 1975 में, रसेल हल्स तथा जोसेफ टेलर ने रेडियो प्रेक्षणों के द्वारा एक बाइनरी पल्सार सिस्टम की खोज की। यह तंत्र ऐसे दो न्यूट्रॉन तारों से बना है जो लगभग 8 घण्टों के अन्तराल से एक-दूसरे की परिक्रमा कर रहे हैं। यदि यह तंत्र गुरुत्वाकर्षी तरंगों का विकिरण कर रहा है, तो ऊर्जा के क्षय के कारण उनकी परिक्रमा की कक्षीय दूरी घटना चाहिए। कुछ वर्षों तक किए गए रेडियो प्रेक्षणों का उपयोग करते हुए जो मापन किए गए उन्होंने परिक्रमा काल में एक सुसंगत कमी दर्शाई जो व्यापक सापेक्षता की अपेक्षित भविष्यवाणी से एकदम सटीक रूप से मेल खाती थी। यह इस सिद्धान्त की एक उल्लेखनीय विजय थी, जिसने किसी भी सन्देह के परे इस तथ्य को स्थापित कर दिया कि गुरुत्वाकर्षी तरंगें वास्तविक हैं। इस बाइनरी पल्सार की खोज के लिए हल्स तथा टेलर को 1993 का भौतिकशास्त्र का नोबेल पुरस्कार प्रदान किया गया।

तरंग को पकड़ना

हालाँकि बाइनरी पल्सार तंत्र हमें गुरुत्वाकर्षी तरंगों के प्रभाव का प्रेक्षण करने की सुविधा प्रदान करते हैं, परन्तु हमने उनसे उत्पन्न होने वाली गुरुत्वाकर्षी तरंगों का वास्तव में प्रेक्षण नहीं किया है। बाइनरी पल्सारों के प्रेक्षणों से मिली सफलता ने वैज्ञानिकों को प्रत्यक्ष रूप से गुरुत्वाकर्षी तरंगों का प्रेक्षण कर पाने की सम्भावना पर गम्भीर रूप से विचार करने के लिए प्रेरित किया।

सैद्धान्तिक गणनाओं ने दर्शाया कि

व्यापक सापेक्षता के क्षेत्र समीकरणों की जाँच-पड़ताल करने के दौरान 1916 में आइंस्टीन ने पाया कि उनके ऐसे गणितीय हलों की सम्भावना थी जो प्रकाश की चाल से संचरण करने वाली गुरुत्वाकर्षी तरंगों को निरूपित करते थे। परन्तु, गणितीय रूप से सम्भव इन घटनाओं का वास्तविक भौतिक संसार में कोई अस्तित्व है या नहीं, यह बात 1950 के दशक तक विवादास्पद बनी रही। ऐसे भी दौर आए जब स्वयं आइंस्टीन को उनके अस्तित्व पर सन्देह होने लगा। पर फिर, 1950 और 1960 के दशकों में हुए बहुत-से सैद्धान्तिक शोध कार्य ने यह स्थापित किया कि गुरुत्वाकर्षी तरंगों का वास्तव में भौतिक अस्तित्व होता है।

अत्यधिक तीव्र वेग से विचरण करने वाले विराट द्रव्यमान वाले सघन पिण्डों के साथ घटने वाली खगोलीय भौतिक घटनाएँ गुरुत्वाकर्षी तरंगों को पैदा करती हैं जिन्हें सम्भावित रूप से पृथ्वी पर से किए गए प्रेक्षणों में पकड़ा जा सकता है। विराट द्रव्यमान वाले तारों का उनके जीवनकाल का अन्त होने पर ध्वस्त होना, ब्लैक होल्स के बाइनरी सिस्टम या न्यूट्रॉन तारे, तेज़ी-से घूमते हुए विकृत न्यूट्रॉन तारे, और स्वयं बिग बैंग (महाविस्फोट) इत्यादि ऐसी घटनाओं के उदाहरणों में शामिल हैं। इसके अलावा, इन तरंगों जैसी घटनाओं का अस्तित्व होने के पक्ष में और भी मज़बूत प्रेक्षणीय साक्ष्य थे। गुरुत्वाकर्षी तरंगों को पकड़ने के प्रायोगिक प्रयास 1960 के दशक में ही आरम्भ हो गए थे, जिनमें जोसेफ वेबर ने रेजोनेंट बार डिटेक्टरों का उपयोग किया था। पर, बड़े पैमाने वाले लेज़र इंटरफेरोमीटर का उपयोग गुरुत्वाकर्षी तरंगों को पकड़ने वाले एंटीना के रूप में करने के विचार ने इस प्रयास को क्रान्तिकारी मोड़ दिया।

अपने स्रोत से बहुत दूर जाने वाली गुरुत्वाकर्षी तरंगों को आकाश की वक्रता में आई समय पर निर्भर विकृतियों की तरह समझा जा सकता है। ये उस तरह से आकाश को विकृत करती हैं जो कि ज्वार-भाटे के बलों की विशेषता होती है। जिस प्रकार चन्द्रमा ज्वार-भाटे की लहरों को पैदा करके पृथ्वी की गोलाकार आकृति को बिगाड़ता है, उसी प्रकार गुरुत्वाकर्षी तरंगें "परीक्षण कणों" के एक गोलाकार वलय को अण्डाकार वृत्तों (इलिप्स) के रूप में विकृत कर देंगी (सिवाय इसके कि गुरुत्वाकर्षी तरंगों के द्वारा पैदा की गई ज्वार-भाटे जैसी विकृति विशुद्ध रूप से अनुप्रस्थ, अर्थात तरंगों के संचरण की दिशा के लम्बवत होती है)। यही वह प्रमुख बात है जो गुरुत्वाकर्षी तरंगों को पकड़ने के लिए लेज़र इंटरफेरोमीटर को एक आदर्श उपकरण बनाती है (**बॉक्स-3** देखें)।

इंटरफेरोमीटरी एक सुस्थापित तकनीक है जिसका आविष्कार उन्नीसवीं सदी के अन्तिम दौर में अल्बर्ट माइकेल्सन ने किया था। गुरुत्वाकर्षी तरंगों को पकड़ने के उपकरण की तरह इसका इस्तेमाल करने में समस्या यह आती है कि गुरुत्वाकर्षी तरंगों के गुज़रने के फलस्वरूप भुजाओं की लम्बाई में पैदा होने वाली विकृतियाँ सूक्ष्म स्तर की होती हैं। उदाहरण के लिए, हमारे पड़ोस के एक आकाशगंगा समूह (क्लस्टर) वर्गो (कन्या) में दो न्यूट्रॉन तारों के विलय के कारण इंटरफेरोमीटर की भुजाओं की लम्बाई में लगभग 10^{-21} मीटर का बहुत ही सूक्ष्म परिवर्तन होगा! इसका मतलब है कि इस घटना को पकड़ने के लिए हमें लम्बाई में 10^{-21} मीटर जितने सूक्ष्म परिवर्तनों को नापने की आवश्यकता होगी। इसलिए, यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि गुरुत्वाकर्षी तरंगों को पकड़ना एक कठिन कार्य है। इस समस्या के समाधान का एक तरीक़ा ऐसे इंटरफेरोमीटर का इस्तेमाल करना है जिसकी भुजाओं की लम्बाई, सामान्य मेज़ पर स्थापित होने वाले 1 मीटर के उपकरण की अपेक्षा बहुत ज़्यादा हो, तब गुरुत्वाकर्षी

तरंगों के कारण भुजाओं की लम्बाई में पैदा होने वाला चरम परिवर्तन भी ज़्यादा होगा। इसीलिए, गुरुत्वाकर्षी तरंगों को पकड़ने वाले आधुनिक माइकेल्सन इंटरफेरोमीटर किलोमीटर के पैमाने वाले होते हैं। परन्तु, हमें फिर भी उनकी भुजाओं की लम्बाई में 10^{-18} मीटर जितने सूक्ष्म परिवर्तनों को नापना पड़ता है - जो कि आकार में एक परमाणु नाभिक से भी बहुत छोटा है। सामान्यतया इंटरफेरोमीटर को प्रकाश की 'स्याह' और 'चमकदार' किनारियों के बीच की दूरी को नापने के लिए निर्मित किया जाता है, जिसका मतलब है कि उनमें लम्बाई के पैमाने उपयोग की जाने वाली प्रकाश की तरंगों की लम्बाई (तरंगदैर्ध्य) के अनुरूप होते हैं। पर, पिछले तीन दशकों में हुई प्रगति के फलस्वरूप, गुरुत्वाकर्षी तरंगों को पकड़ने वाले आधुनिक उपकरण, इंटरफेरोमीटर से निकलने वाले प्रकाश की चमक में होने वाले सूक्ष्म परिवर्तनों को पकड़कर, इस तरंगदैर्ध्य के काफ़ी सूक्ष्म अंशों (लगभग 10^{-12} मीटर) को भी नाप लेते हैं।

हालाँकि एक इंटरफेरोमीटर उसके तल के लम्बवत आने वाली गुरुत्वाकर्षी तरंगों के प्रति सबसे अधिक संवेदनशील होता है, परन्तु वह लगभग सभी अन्य दिशाओं से आने वाले संकेतों के लिए भी संवेदनशील होता है। यह ऐसा ऐंटीना होता है जो कि वास्तव में पूरे आकाश से आने वाले संकेतों को पकड़ सकता है। यह एक दूरदर्शी यंत्र (टेलिस्कोप) से भिन्न होता है जिसकी दिशा किसी तारे या आकाशगंगा को देखने के लिए आकाश के एक छोटे-से भाग की ओर ही रखी जा सकती है। एक ओर, इसकी यह विशेषता हमें कुछ ही ऐंटीना का उपयोग करके पूरे आकाश का प्रेक्षण करने की सुविधा देती है। परन्तु दूसरी ओर, इसके कारण, एक ही ऐंटीना का उपयोग करने पर, संकेतों के स्रोत की स्थिति का पता लगाना कठिन हो जाता है। इसके बजाय, भौगोलिक रूप से अलग-अलग स्थानों पर लगे संकेतों को पकड़ने वाले उपकरणों से प्राप्त जानकारियों को संयोजित करके स्रोत की स्थिति का पता लगाया जाता है। चूँकि गुरुत्वाकर्षी तरंगें प्रकाश की चाल से संचरण करती हैं, इसलिए भूमण्डल के विभिन्न स्थानों पर लगे डिटेक्टरों तक संकेतों के पहुँचने में लगने वाले अलग-अलग समयों के बीच का अन्तर हमें आकाश में स्रोत की स्थिति को फिर से निर्मित करने की सुविधा देता है। यह वैसा ही है जैसे कि एक उल्लू अपने शिकार का पता उसकी ध्वनि के अपने कानों तक पहुँचने में लगने वाले समय के आधार पर लगाता है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि विभिन्न डिटेक्टरों के बीच की दूरी जितनी अधिक होगी उतनी ही ज़्यादा शुद्धता से किसी गुरुत्वाकर्षी तरंग के स्रोत की स्थिति को निर्धारित किया जा सकता है। इस सन्दर्भ में, भारत में एक लीगो वेधशाला (ऑब्जर्वेटरी) को स्थापित करने की वर्तमान योजना, गुरुत्वाकर्षी तरंगों के डिटेक्टरों के मौजूदा अन्तर्राष्ट्रीय संजाल में एक महत्त्वपूर्ण योगदान देगी। चूँकि लीगो इण्डिया के लिए चुना गया स्थान, यूएसए और यूरोप में स्थित वर्तमान डिटेक्टरों से काफ़ी दूरी पर स्थित है, इसलिए वह गुरुत्वाकर्षी तरंगों के स्रोतों की आकाश में स्थिति को निर्धारित करने की सटीकता में बहुत सुधार कर देगी।

ब्रह्माण्ड को देखने की एक नई "इन्द्रिय"

गुरुत्वाकर्षी तरंगों को पकड़ने वाले विशाल इंटरफेरोमीट्रिक डिटेक्टर्स भूमण्डल के कई अलग-अलग स्थानों पर निर्मित किए गए हैं।

यूएसए में लगे ऐसे दो डिटेक्टरों में पिछले कुछ वर्षों में किए गए बड़े उन्नतिशील परिवर्तनों के फलस्वरूप सितम्बर 2015 से उन्होंने काफ़ी बेहतर संवेदनशीलता के साथ काम करना आरम्भ कर दिया है। एक-दूसरे से लगभग 3000 किलोमीटर की दूरी पर स्थित इन दोनों अत्याधुनिक लीगो डिटेक्टरों ने 14 सितम्बर 2015 को उन पर एक साथ पहुँचने वाला गुरुत्वाकर्षी तरंगों का संकेत पकड़ा। उनसे प्राप्त आँकड़ों के सावधानीपूर्वक किए गए विश्लेषण से ज्ञात हुआ कि वह संकेत ऐसे दो विराट ब्लैक होल्स के आपस में विलय से उत्पन्न हुआ था जो यहाँ से लगभग 1.3 अरब प्रकाश वर्ष दूर थे। गुरुत्वाकर्षी तरंगों को प्रत्यक्ष रूप से पकड़ने का पहला उदाहरण होने के अलावा, यह दो ब्लैक होल्स वाले बाइनरी तंत्र की भी पहली खोज है। ये ब्लैक होल खगोलवैज्ञानिकों के द्वारा अभी तक देखे गए तारीय-द्रव्यमान वाले ब्लैक होल्स की तुलना में उल्लेखनीय रूप से अधिक विशालकाय थे - वास्तव में, इनमें से प्रत्येक ब्लैक होल हमारे सूर्य की तुलना में लगभग 30 गुना अधिक द्रव्यमान वाला था! उनके विलय ने तीन सूर्यों के द्रव्यमान के समतुल्य ऊर्जा ($E = 3\ Mc^2$) पैदा की जो एक क्षणांश में गुरुत्वाकर्षी तरंगों के विकिरण के रूप में उत्सर्जित हो गई, जिसके उत्सर्जन के दौरान उसका चरम शक्ति स्तर 10^{49} वॉट का था! यह मानव जाति के द्वारा कभी भी देखी गई सबसे शक्तिशाली खगोल घटना थी। इसके बाद 26 दिसम्बर 2015 को फिर, ब्लैक होल्स के एक अन्य विलय से प्राप्त एक, दूसरा संकेत पकड़ा गया। इन देखे गए संकेतों की दर के आधार पर वैज्ञानिकों ने यह अनुमान लगाया है कि आने वाले वर्षों में ब्लैक होल्स के बाइनरी तंत्रों के द्वारा उत्सर्जित गुरुत्वाकर्षी तरंगों का प्रेक्षण अक्सर किया जा सकेगा।

खगोलविज्ञान का इतिहास, विस्मयकारी घटनाओं से भरी हुई कथा प्रस्तुत करता है। आकाशीय संसार को अपने दूरदर्शी से देखते हुए, गैलीलियो ने देखा कि प्राचीन लोगों की चन्द्रमा के एक पारदर्शी और एकदम गोलाकार पिण्ड होने की धारणा से बहुत भिन्न (वास्तव में वह बड़े पर्वतों और गहरे विशाल गड्ढों से भरा हुआ

था) शुक्र (वीनस) की भी चन्द्रमा की तरह विभिन्न कलाएँ (फेज़) होती हैं, और बृहस्पति (जुपीटर) के चारों ओर उसके उपग्रह परिक्रमा कर रहे थे। तब से, रेडियो, माइक्रोवेव, इंफ्रारैड, अल्ट्रावायलेट, एक्स-रे, तथा गामा-रे पर आधारित दूरदर्शियों ने खगोलविज्ञान का विस्तार विद्युत चुम्बकीय वर्णक्रम की अदृश्य रहने वाली तरंगदैर्ध्यों तक कर दिया है, और इस प्रकार ब्रह्माण्ड को देखने के लिए विभिन्न खिड़कियाँ खोल दी हैं। ब्रह्माण्ड किरणें (कॉस्मिक रे) तथा न्यूट्रिनों प्रेक्षणों ने खगोलविज्ञान को ऐसे सन्देश वाहकों तक फैला दिया है जो विद्युत चुम्बकीय तरंगों से पूर्णतया भिन्न हैं। और, लीगो ने प्रेक्षणों पर आधारित खगोलविज्ञान की सबसे नई शाखा को खोल दिया है - गुरुत्वाकर्षी तरंगों के इसके प्रेक्षण से प्राप्त संकेतों की आवृत्तियाँ सुने जाने वाले दायरे (ऑडियो बैण्ड) में आती हैं। इस तरह, गुरुत्वाकर्षी तरंगों का खगोलविज्ञान एक प्रकार से ब्रह्माण्ड को देखने की अपेक्षा ब्रह्माण्ड को सुनने जैसा ज़्यादा है। हम कह सकते हैं कि गुरुत्वाकर्षी तरंगों के प्रेक्षणों ने खगोलविज्ञान को एक और ऐसी "इन्द्रिय" प्रदान की है जिसके द्वारा ब्रह्माण्ड को देखा जा सकता है।

नोट: लेख के शीर्षक की पृष्ठभूमि में इस्तेमाल किए गए चित्र के लिए आभार : Caltech/MIT/LIGO Lab. URL: https://www.ligo.caltech.edu/image/ligo20150731c. License: Available for public use.

Further reading

1. Bernard F Schutz, Gravity from the Ground Up: An Introductory Guide to Gravity and General Relativity, Cambridge University Press (2003). URL: http://www.gravityfromthegroundup.org/
2. Kip S Thorne, Black Holes & Time Warps - Einstein's Outrageous Legacy, W. W. Norton & Company (1995).
3. Web resources on gravitational waves https://www.ligo.caltech.edu/page/learn-more.
4. Resources for students, teachers and the public: http://ligo.org/public.php.
5. Web portal on General Relativity and its applications: http://www.einstein-online.info/

परमेश्वरन अजीत टाटा मूलभूत अनुसंधान संस्थान, बेंगलूरु के अन्तर्राष्ट्रीय सैद्धान्तिक विज्ञान केन्द्र में भौतिकशास्त्री के रूप में कार्यरत हैं। वे लीगो साइंटिफिक गठबन्धन के सदस्य भी हैं। उनसे ajjith@icts.res.in पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** भरत त्रिपाठी

डार्क मैटर पर प्रकाश

अमिताभ मुखर्जी

डार्क मैटर (स्याह पदार्थ) क्या है? हम कैसे जानते हैं कि उसका अस्तित्व है? वह कहाँ पाया जाता है? यह लेख ऐसे सवालों की छानबीन करता है, और दिखाता है कि किस प्रकार ब्रह्माण्ड की सबसे विराट संरचनाओं के अध्ययन से हमें पदार्थ के सबसे छोटे घटकों के बारे में कुछ जानकारी प्राप्त होती है।

यदि हम ब्रह्माण्ड को उसकी समग्रता में देखें तो हमें ऐसे अनेक पिण्ड दिखते हैं जो प्रकाश उत्सर्जित करते हैं। इसके स्पष्ट उदाहरण हमारे सूर्य जैसे तारे हैं। इसके अलावा उसमें गैस के विशालकाय प्रकाशमान बादल और क्वासर जैसे रहस्यमय पिण्ड हैं। इन सभी को सामूहिक रूप से प्रकाशमान या चमकने वाला पदार्थ कहा जाता है।

परन्तु ब्रह्माण्ड में हर चीज़ प्रकाश उत्सर्जित नहीं करती। इसके उदाहरणों में हमारी पृथ्वी सहित सौर मण्डल के सभी ग्रह भी शामिल हैं। ऐसे पिण्डों को सामूहिक रूप से डार्क मैटर कहा जाता है। सौर मण्डल में बहुत थोड़ा-सा डार्क मैटर है - सारे ग्रह, क्षुद्रग्रह (एस्टॉरायड), पुच्छल तारे (कॉमेट) आदि मिलकर उसके द्रव्यमान का केवल 0.14 प्रतिशत हिस्सा होते हैं। फिर हमें डार्क मैटर की चिन्ता क्यों करना चाहिए, और क्यों वह अध्ययन का विषय होना चाहिए? इसका कारण यह है कि सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के पैमाने पर देखते हुए, हमारा सौर मण्डल तो बहुत छोटा है, पर सुदूर बाह्य अन्तरिक्ष में कई अन्य प्रकार का बहुत-सा डार्क मैटर है।

डार्क मैटर को प्रेक्षणों में पकड़ना

इस बारे में विस्तृत चर्चा करने से पहले, हम इस पर एक नज़र डालें कि डार्क मैटर को कैसे पहचाना जाता है। हालाँकि शनि जितने सुदूर ग्रह भी उनके द्वारा परावर्तित सूर्य के प्रकाश के कारण सिर्फ़ नंगी आँखों से ही दिखाई दे जाते हैं, परन्तु और अधिक दूर के पिण्डों को देखने में यह विधि काम नहीं करेगी।

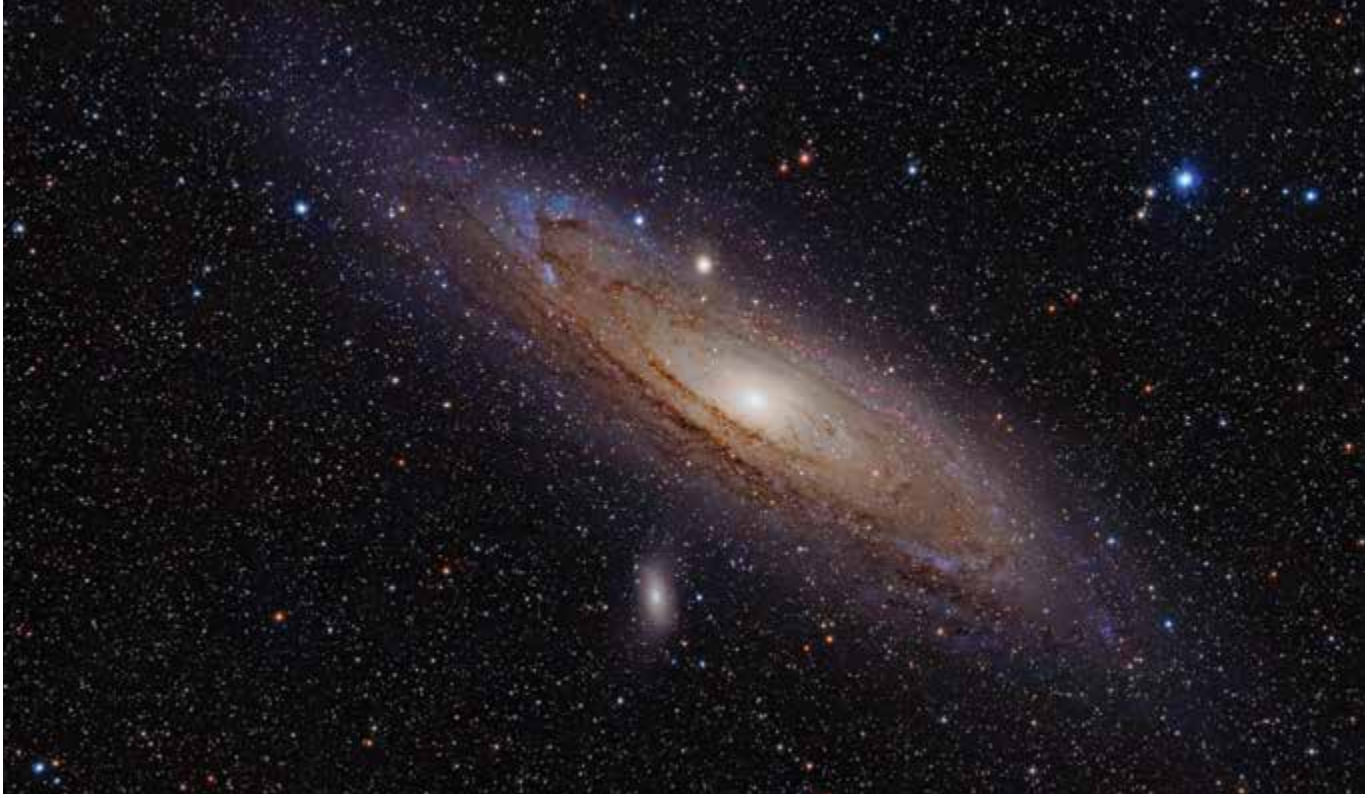

चित्र-1 : ऐण्ड्रोमेडा आकाशगंगा (गैलेक्सी) का हाल ही में लिया गया एक चित्र।
Source: Adam Evans, Wikimedia Commons. License: CC-BY. URL: https://en.wikipedia.org/wiki/File:Andromeda_Galaxy_(with_h-alpha).jpg.

और अधिक डार्क मैटर को देखने का एक तरीक़ा वह है जिसका उदाहरण उन्नीसवीं सदी में वरुण (नेपच्यून) की खोज की विधि में मिलता है। उस समय अरुण (यूरेनस) की परिक्रमा कक्षा में देखी गई अनियमितताओं ने इंगित किया कि उस ग्रह पर ऐसा गुरुत्वाकर्षी खिंचाव पड़ रहा था जिसे समझाया नहीं जा सकता था - शायद, वह किसी ऐसे ग्रह के कारण था जिसे तब तक खोजा नहीं गया था। उसकी अनुमानित स्थिति के नज़दीक ही, फिर 1846 में वरुण को दूरदर्शी (टेलिस्कोप) के द्वारा खोज लिया गया। दूसरे शब्दों में जब कोई पिण्ड प्रकाश उत्सर्जित नहीं करता है, तब भी उसके द्वारा डाले जाने गुरुत्वाकर्षी प्रभावों के कारण उसकी उपस्थिति का अनुमान लगाया जा सकता है। चूँकि गुरुत्वाकर्षण सर्वव्यापी है, इसलिए यह सम्भावना है कि अन्य प्रकार के डार्क मैटर, जो दूरियों के विभिन्न पैमानों पर स्थित हैं, भी अपने गुरुत्वाकर्षी प्रभावों के कारण अपनी मौजूदगी का एहसास करवा सकते हैं।

डार्क मैटर का अस्तित्व होने के प्रमाणों की अगली कड़ी हमें सर्पिलाकार (स्पाइरल) आकाशगंगाओं से मिलती है। हमारी मिल्की वे आकाशगंगा एक सर्पिलाकार आकाशगंगा है। और ऐसी ही ऐण्ड्रोमेडा आकाशगंगा भी है, जिसे एम 31 के नाम से भी जाना जाता है, और जिसकी सर्पिल भुजाएँ **चित्र-1** में दिखाई दे रही हैं। जैसा कि हम देख सकते हैं यह आकाशगंगा चपटी प्रतीत होती है जिसके केन्द्रीय तल के आस-पास तारे फैले हुए हैं, वे उसके केन्द्र में एक उभार जैसा निर्मित कर देते हैं। अधिकांश सर्पिलाकार आकाशगंगाएँ इसी तरह की दिखाई देती हैं।

अब इसका रोचक पहलू सामने आता है। किसी आकाशगंगा में स्थित तारे, आकाशगंगा के केन्द्र का चक्कर लगाने के दौरान, एक-दूसरे पर गुरुत्वाकर्षी खिंचाव डालते हैं। न्यूटन का गुरुत्वाकर्षण का नियम हमें इसकी गणना करने की सुविधा देता है कि किसी तारे के चक्कर लगाने की चाल केन्द्र से उसकी दूरी पर निर्भर करती है। एक सरल गणना यह दर्शाती है कि केन्द्र से दूरी के बढ़ने के साथ तारे के चक्कर लगाने की चाल घटती जाती है (हमारे सौर मण्डल के बारे में ही विचार करके देखें - सबसे भीतर का ग्रह बुध सूर्य के चारों ओर तेजी-से 47.87 किलोमीटर/ सैकेण्ड की चाल से चक्कर लगाता है, जबकि वरुण धीमे-धीमे 5.43 किलोमीटर/सैकेण्ड की चाल से घूमता है)। इस प्रकार, हम वास्तव में यह नाप सकते हैं कि आस-पास की आकाशगंगाओं, जैसे कि एम 31, में तारे कितनी तेज़ी-से चक्कर

बॉक्स-1 : ब्लैक होल क्या होता है?

ब्लैक होल अन्तरिक्ष में एक ऐसा स्थान होता है जहाँ गुरुत्वाकर्षी खिंचाव इतना शक्तिशाली होता है कि उसमें से प्रकाश भी बाहर नहीं निकल सकता। ऐसा गुरुत्वाकर्षी खिंचाव इस कारण होता है क्योंकि बहुत-सा पदार्थ एक छोटी-सी जगह में ठस गया होता है। यह तब हो सकता है जब किसी तारे का जीवन समाप्त हो रहा होता है। और चूँकि उसमें से कोई प्रकाश नहीं निकल सकता, इसलिए लोग ब्लैक होल्स को देख नहीं सकते - वे अदृश्य रहते हैं।

बॉक्स-2 : अतिसमरूपता (सुपरसिमिट्री) : कुछ सिद्धान्तकारों ने 1970 के दशक में सुझाव दिया कि प्रकृति में एक नई समरूपता हो सकती है, जिसे अतिसमरूपता कह सकते हैं, और जो मौजूदा बुनियादी कणों का सम्बन्ध ऐसे अन्य कणों से जोड़ सकती है जिन्हें अभी तक खोजा नहीं जा सका है। उदाहरण के लिए इलेक्ट्रॉन, जिसका घुमाव (स्पिन) आधा होता है, का एक सुपर जोड़ीदार हो सकता है जिसका घुमाव शून्य हो। सभी सुपर जोड़ीदारों का बहुत भारी होना ज़रूरी होगा क्योंकि अभी तक कणों के होने वाले टकरावों में वे दिखाई नहीं दिए हैं। यदि हम मानक प्रतिरूप को आगे बढ़ाकर उसमें अतिसमरूपता को समाहित करते हैं, तो हमें ऐसे प्रतिरूप मिलते हैं जिनमें अब तक अनखोजे बहुत-से कण होते हैं, जिनमें विम्प कण भी शामिल रहते हैं।

लगा रहे हैं। परन्तु, एम 31 में, और इस तरह की सैकड़ों अन्य आकाशगंगाओं में एक बिलकुल भिन्न बात देखी जाती है। जब हम आकाशगंगा के बाहरी किनारे की ओर बढ़ते हैं तो तारों के चक्कर लगाने की चाल कम होने के बजाय स्थिर बनी रहती है।

इस विसंगति को समझाने के दो प्रमुख तरीक़े हैं। पहला तो यह कि न्यूटन का गुरुत्वाकर्षण का नियम आकाशगंगाओं के पैमानों पर काम नहीं करता। जहाँ कुछ वैज्ञानिक मानते हैं कि इस समस्या का हल इसी दिशा में ही निहित है, लेकिन इस लेख में हम इस धारणा पर आगे चर्चा नहीं करेंगे। समाधान का दूसरा रास्ता है यह मानकर चलना कि न्यूटन का नियम तो काम करता है, परन्तु आकाशगंगा का कुल द्रव्यमान उससे ज़्यादा समान रूप से वितरित रहता है जितना कि वह प्रतीत होता है। इसके अलावा, आकाशगंगा का द्रव्यमान उसमें स्थित तारों के कुल द्रव्यमान से बहुत अधिक प्रतीत होता है। दूसरे शब्दों में, आकाशगंगा डार्क मैटर से भरी होती है। इस बात को एक चित्रात्मक तरीक़े से इस प्रकार कहा जा सकता है कि, दिखाई देने वाली चकरी के अलावा, आकाशगंगा का एक हेलो (आकाशगंगा के चारों ओर फैला गोला या सेहरा) भी होता है जो चपटा होने के बजाय कमोबेश गोलाकार होता है।

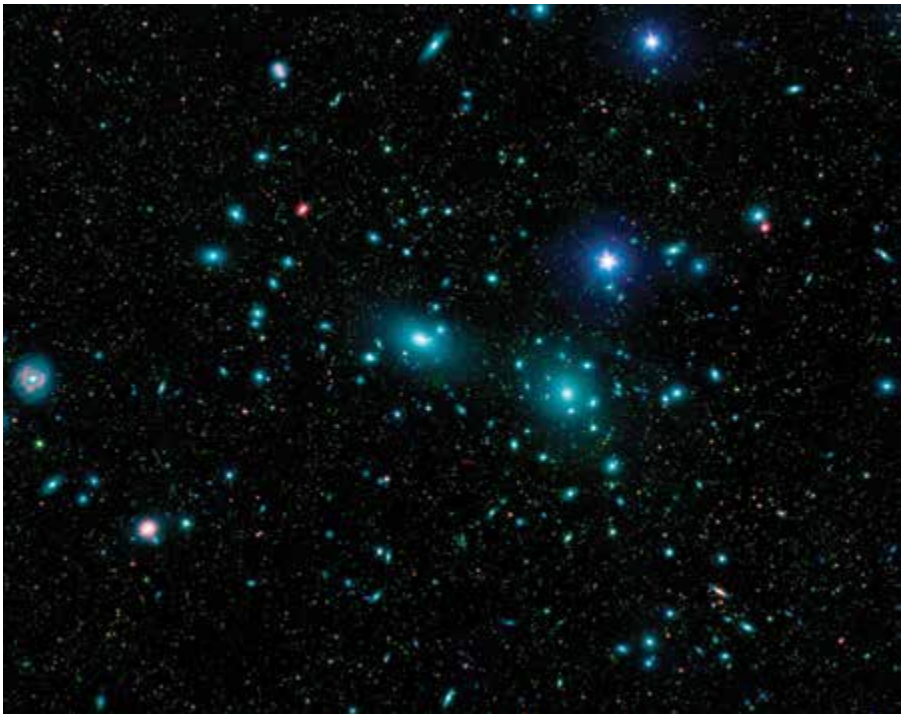

चित्र-2 : कोमा क्लस्टर की एक सम्मिलित तस्वीर।
Source: NASA / JPL-Caltech / L. Jenkins (GSFC), Wikimedia Commons. License: Public Domain.
URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Ssc2007-10a1.jpg.

आपके मन में सवाल उठ सकता है कि क्या यह बात ग़ैर-सर्पिलाकार आकाशगंगाओं के मामले में भी लागू होगी। अन्य महत्त्वपूर्ण प्रकार की आकाशगंगाओं - अण्डाकार (इलिप्टिकल) आकाशगंगाओं - में तारों की चाल के मापन से भी हम इसी निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि अधिकांश आकाशगंगाएँ डार्क मैटर से भरी हुई हैं। हमारी अपनी आकाशगंगा, मिल्की वे, के लिए लगाए गए अनुमान दर्शाते हैं कि उसके कुल द्रव्यमान का 80% और शायद यहाँ तक हो सकता है कि यह 95% हो - डार्क मैटर के हेलो के रूप में है।

आकाशगंगा के हेलो में डार्क मैटर

आकाशगंगा के हेलो में डार्क मैटर की प्रकृति ठीक-ठीक किस प्रकार की होती है? यह सवाल अभी भी अनसुलझा है। एक सम्भावना यह है कि यह हेलो, ग्रहों जैसे ऐसे पिण्डों या तारों से मिलकर बना होता है जो अभी भी निर्मित होने की प्रक्रिया से गुज़र रहे हैं। ब्लैक होल एक अन्य सम्भावना हैं।

ऐसे विशालकाय खगोलभौतिकीय सघन हेलो पिण्डों (मैसिव ऐस्ट्रोफिजिकिल कॉम्पैक्ट हेलो ऑब्जैक्ट्स) या माचो (वैज्ञानिकों को ऐसे संक्षिप्त नाम रखना अच्छा लगता है) में एक साझा विशेषता होती है कि वे 'साधारण' पदार्थ के बने होते हैं। जैसा कि हम जानते हैं साधारण पदार्थ बुनियादी रूप से प्रोटॉनों, न्यूट्रॉनों और इलेक्ट्रॉनों से मिलकर बना होता है, जिनमें इलेक्ट्रॉन बाक़ी दोनों प्रकार के कणों की तुलना में बहुत हल्के होते हैं। प्रोटॉन तथा न्यूट्रॉन एक विशेष प्रकार के प्रारम्भिक कण होते हैं जिन्हें बेरियोन कहा जाता है (यह ग्रीक शब्द *बेरिस* से निकला है जिसका अर्थ

होता है भारी), इसलिए साधारण पदार्थ को बेरियोनिक पदार्थ कहा जाता है। अब, यदि प्रस्तावित माचो नाम के ये पिण्ड बेरियोनिक पदार्थ से बने ग्रहों जैसे होंगे तो वे उन पर पड़ने वाले तारों के प्रकाश को परावर्तित करेंगे। चूँकि ऐसा माना जा सकता है कि हमारी आकाशगंगा माचो पिण्डों से भरी हुई है, तो उन्हें हमारे दूरदर्शियों से दिखाई देना चाहिए। परन्तु, उन्हें खोजने के लिए विशेष रूप से निर्मित किए गए प्रयास उन्हें ढूँढ़ पाने में असफल रहे हैं। इसके अलावा और भी अन्य तर्क दिए जाते हैं, और इन सबका कुल मिलाकर निष्कर्ष यही निकलता है कि माचो पिण्ड, यदि वाक़ई में उनका अस्तित्व है भी तो, हमारी आकाशगंगा के द्रव्यमान में बहुत थोड़ा-सा योगदान ही देते हैं।

परिणामस्वरूप, हम इस अपरिहार्य निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि आकाशगंगाओं का डार्क मैटर, हमारे सौर मण्डल के डार्क मैटर से बिलकुल अलग, किसी अनोखे प्रकार के कणों का बना होता है। इसके प्रस्तावित उम्मीदवारों में एक पसन्दीदा श्रेणी कमज़ोर पारस्परिक अन्तर्क्रियाएँ करने वाले विशाल कणों (वीकली इंटैरैक्टिंग मैसिव पार्टिकिल्स या विम्प्स - यह भी वैज्ञानिकों के द्वारा गढ़ा गया एक और नाम है) की है। प्रोटॉनों तथा न्यूट्रॉनों की तुलना में कई गुना भारी विम्प कण आपस में कमज़ोर नाभिकीय बलों और गुरुत्वाकर्षण के माध्यम से अन्तर्क्रियाएँ करते हैं। कण भौतिकी मानक प्रतिरूप (Standard Model of particle physics) जिसे 1983 में डब्ल्यू बोसोन कणों की खोज से लेकर 2012 में हिग्स बोसोन कणों की खोज तक भरपूर सफलता मिलती रही है, में इन नए प्रकार के कणों के लिए कोई जगह नहीं है। इसलिए यदि आकाशगंगाओं के हेलो बहुत हद तक विम्प कणों से मिलकर बने हैं, तो कण भौतिकी मानक प्रतिरूप के पार जाना होगा। अध्ययन के इस क्षेत्र को बहुत रोमांचक बनाने वाली ख़ूबी अति विशाल और अति सूक्ष्म के बीच चलने वाला यह खेल है - एक ओर आकाशगंगाओं के हेलो हैं जिनका आकार आमतौर पर लाखों प्रकाश वर्ष का होता है और जो संकेत देते हैं कि हमें प्रोटॉन की त्रिज्या से भी छोटे पैमानों पर काम करने वाले भौतिकशास्त्र के नियमों के बारे में फिर से सोचने की ज़रूरत है। दिलचस्प बात यह है कि सैद्धान्तिक भौतिकशास्त्री भी, पूर्णतया भिन्न कारणों से, यह सुझाव देते रहे हैं कि हमें मानक प्रतिरूप के आगे जाने की ज़रूरत है। इस सन्दर्भ में एक लोकप्रिय धारणा अतिसमरूपता (सुपरसिमिट्री) की है, और अतिसमरूपता वाले प्रतिरूप स्वाभाविक रूप से विम्प कणों की ओर ले जाते हैं।

आकाशगंगाओं के समूहों में डार्क मैटर

हालाँकि आकाशगंगाएँ बहुत विशाल होती हैं, परन्तु फिर भी वे ब्रह्माण्ड की सबसे विराट संरचनाएँ नहीं होतीं। अधिकांश आकाशगंगाएँ ऐसे समूहों (क्लस्टर्स) में होती हैं जिनमें 100 से लेकर 1000 आकाशगंगाएँ तक उनके पारस्परिक गुरुत्वाकर्षण द्वारा बँधी हुई रहती हैं। वहाँ दूरियों के पैमाने दिमाग़ को चकरा देने वाले होते हैं - एक सामान्य क्लस्टर का आकार 1 से 2 करोड़ प्रकाश वर्षों का होता है। **चित्र-2** कोमा क्लस्टर को दर्शाता है जिसका केन्द्र 32 करोड़ प्रकाश वर्ष दूर है। ग़ौर करें कि इस चित्र में तारे जैसा दिखाई देने वाला हर पिण्ड वास्तव में एक आकाशगंगा है, जिसमें आमतौर पर एक अरब या उससे भी अधिक तारे होते हैं।

जब गुरुत्वाकर्षण बलों के माध्यम से परस्पर अन्तर्क्रिया करने वाले पिण्डों से मिलकर बनी कोई संरचना बहुत लम्बे समय से अस्तित्व में हो, तो हम अपेक्षा करते हैं कि उसके सदस्यों की गति करने की औसत ऊर्जा कमोबेश उसी स्तर की होगी जितनी उनकी अन्तर्क्रिया की ऊर्जा होती है। वास्तव में, यह दिखाया जा सकता है कि औसत गतिज ऊर्जा (काइनेटिक ऐनर्जी) परिमाण में औसत स्थितिज ऊर्जा (पोटेंशियल ऐनर्जी) की लगभग आधी होती है। पर असलियत में हम कुछ बिलकुल अलग ही बात देखते हैं। अधिकांश क्लस्टर में मौजूद आकाशगंगाएँ अपेक्षा से कहीं अधिक तेज़ी-से गति करती प्रतीत होती हैं। पर अब तक आपने ऐसा होने के कारण का अनुमान लगा लिया होगा। गुरुत्वाकर्षी खिंचाव के अदृश्य स्रोत पूरे क्लस्टर में वितरित रहते हैं - संक्षेप में कहें तो यह डार्क मैटर हैं। वास्तव में, यह शब्द डार्क मैटर सबसे पहले स्विस खगोलवैज्ञानिक फ्रिट्ज़ ज्विकी द्वारा बहुत पहले 1933 में उसी कोमा क्लस्टर के उनके अध्ययनों के सिलसिले में इस्तेमाल किया गया गया था, जिसकी आधुनिक तस्वीर हमने **चित्र-2** में देखी। ज्विकी इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि उस क्लस्टर का द्रव्यमान उसमें निहित आकाशगंगाओं के द्रव्यमानों के कुल योग से 400 गुना अधिक था, जो यह दर्शाता था कि वह क्लस्टर ज़्यादातर डार्क मैटर से मिलकर बना हुआ था। इसका आधुनिक अनुमान इससे कुछ कम है, परन्तु फिर भी अब यह माना जाता है कि इस प्रकार के आकाशगंगा क्लस्टर के कुल द्रव्यमान का 90% डार्क मैटर का योगदान होता है।

निष्कर्ष

यह तो स्पष्ट है कि चूँकि डार्क मैटर समस्त ब्रह्माण्ड में इतने विराट पैमानों पर फैला हुआ है, इसलिए इसकी प्रबल सम्भावना है कि वह समग्र रूप से ब्रह्माण्ड (उसकी संरचना और साथ ही उसका विकास) की हमारी समझ निर्मित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाए। और वह ऐसा ही करता है - क्योंकि अब ब्रह्माण्ड वैज्ञानिकों का बहुमत यह मानता है कि डार्क मैटर ने ब्रह्माण्ड की जटिल संरचनाओं की उत्पत्ति में प्रमुख भूमिका निभाई है। पूरे ब्रह्माण्ड में व्याप्त पृष्ठभूमि का माइक्रोवेव विकिरण सूक्ष्म लहरों (विगल) को दर्शाता है। यह तथा आकाशगंगाओं और उनके क्लस्टर की रचना तथा उनका विकास इस प्रतिरूप

के अनुरूप है कि ब्रह्माण्ड के कुल पदार्थ का लगभग 85% भाग डार्क मैटर के द्रव्यमान का होता है।

प्लैंक उपग्रह (जिसके अभियान का लक्ष्य पृष्ठभूमि के माइक्रोवेव विकिरण की सूक्ष्म लहरों का अध्ययन करना था) से प्राप्त हुए सबसे ताज़ा आँकड़ों के अनुसार ब्रह्माण्ड में निहित ऊर्जा के परिमाण का वितरण इस प्रकार है : बेरियोनिक पदार्थ 4.9%, डार्क मैटर 26.8% तथा डार्क ऐनर्जी (स्याह ऊर्जा) 68.3%। यह आख़िरी राशि चौंकाने वाली प्रतीत हो सकती है क्योंकि हमने अभी तक इसकी बात नहीं की है। पर, चूँकि संचार माध्यमों में आने वाली ख़बरें अक्सर डार्क मैटर और डार्क ऐनर्जी की बात करती हैं, इसलिए इस बात पर ध्यान देना ज़रूरी है कि ये दोनों बिलकुल अलग चीज़ें हैं।

सारांश में, विभिन्न प्रकार का डार्क मैटर ब्रह्माण्ड में दूरी के विभिन्न पैमानों पर फैला हुआ पाया जाता है। हमारी पृथ्वी, और हम ख़ुद भी, डार्क मैटर की इस कथा का हिस्सा हैं। परन्तु, ग्रह इत्यादि बेरियोनिक पदार्थ से मिलकर बने हैं जबकि बाह्य अन्तरिक्ष में फैला हुआ अधिकांश डार्क मैटर गैर-बेरियोनिक प्रकार का है। उसकी ठीक-ठीक प्रकृति वर्तमान अध्ययन का विषय है, और वह हमारी विराट की समझ - ब्रह्माण्ड विज्ञान - को हमारी अति सूक्ष्म की समझ कण भौतिकी से जोड़ती है। यह एक ऐसी बात है जिसकी किसी ने सौ साल पहले कल्पना भी नहीं की होगी। हम भाग्यशाली हैं कि हम ऐसे रोमांचक दौर में जी रहे हैं!

अमिताभ मुखर्जी दिल्ली विश्वविद्यालय के भौतिकी तथा खगोलभौतिकी विभाग में प्राध्यापक हैं। उनका ईमेल amimukh@gmail.com है।
अनुवाद : भरत त्रिपाठी

बाह्य अन्तरिक्ष में अन्य संसारों की खोज

सुमा एन मूर्ति

क्या हमारे सौर मण्डल के बाहर भी कोई अन्य संसार हैं? हम उनकी खोज कैसे करते हैं? हम उनसे क्या सीख सकते हैं? इस लेख में लेखिका दिखाती हैं कि किस प्रकार प्रौद्योगिकी में हाल ही में हुई प्रगति के विभिन्न पहलुओं ने ग़ैर-सौरीय ग्रहों (ऐक्जोप्लैनेट) की तलाश को इतना रोमांचक बना दिया है, जितनी यह पहले कभी भी नहीं थी।

सौर मण्डल के अनूठेपन, और उसमें भी विशेष रूप से पृथ्वी के अनोखे होने के सवालों ने मनुष्य के मन को युगों से परेशान किया हुआ है। हमारे अपने ग्रह तंत्र के बाहर ब्रह्माण्ड में ऐसे अन्य ग्रह तंत्रों का अस्तित्व हो सकता है, यह सम्भावना सबसे पहले सोलहवीं शताब्दी में इटली के दार्शनिक जियोदानो ब्रूनो के द्वारा ज़ाहिर की गई थी। ब्रूनो के अनुसार सुदूर स्थित तारे हमारे अपने सूर्य के ही जैसे हो सकते थे, जिनके अपने ग्रह हों और यहाँ तक कि उन पर जीवन भी हो। इसी प्रकार के विचार व्यक्त करते हुए, सर आइज़ेक न्यूटन ने उनकी प्रशंसित कृति *प्रिंसिपिया* के 1713 में प्रकाशित संस्करण के अन्तिम भाग में ग़ैर-सौरीय ग्रहों की ओर इशारा करते हुए कहा था कि :

"... सूर्य, ग्रहों और पुच्छल तारों से बना यह बेहद ख़ूबसूरत तंत्र किसी बुद्धिमान और शक्तिशाली सत्ता की सम्मति और शासन से ही निर्मित हुआ हो सकता है। और यदि स्थिर तारे इसी तरह के अन्य तंत्रों के केन्द्र हैं तो वे भी उसी तरह की सम्मति से निर्मित हुए होने के कारण उसी एक सत्ता के शासन के अन्तर्गत होंगे, ख़ास तौर पर इसलिए कि स्थिर तारों के प्रकाश की प्रकृति भी हमारे सूर्य के प्रकाश जैसी ही है, और हर तंत्र से प्रकाश दूसरे तंत्रों में जाता है...।"

सौर मण्डल के बाहर के, या ग़ैर-सौरीय ग्रह (जैसा कि आजकल उन्हें कहा जाता है) को ऐसे ग्रह के रूप में परिभाषित किया जाता है, जो सूर्य की बजाय किसी दूसरे तारे की परिक्रमा करता है। हालाँकि ग़ैर-सौरीय ग्रहों को देखने के दावे कई लोगों ने किए, ऐसे पहले

बॉक्स-1 : इतिहास का एक टुकड़ा

संसार भर में प्रसिद्ध अरेसीबो दूरदर्शी को मरम्मत के लिए 1990 के दशक के शुरुआती वर्षों में बन्द कर दिया गया था। वह खगोलविज्ञान समुदाय के सामान्य उपयोग के लिए उपलब्ध नहीं था। खगोल वैज्ञानिक वोल्सजैन ने इस दुर्लभ अवसर का लाभ उठाया और इस दूरदर्शी का उपयोग पल्सार तारों की खोज करने के लिए किया। उनके प्रयास के परिणामस्वरूप पल्सार PSR B1257 + 12 की खोज हुई और बाद में उसके चक्कर लगाते हुए ग्रहों का अस्तित्व भी उजागर हुआ।

लगभग उसी समय, प्रोफेसर मैथ्यू बेल्स के नेतृत्व में खगोल वैज्ञानिकों के एक अन्य दल ने दावा किया कि उन्होंने पल्सार PSR 1829-10 का चक्कर लगाते हुए एक अन्य ग्रह को खोज लिया था। अमेरिकन ऐस्ट्रोनोमिकल सोसाइटी ने इन दो रोमांचक खोजों पर चर्चा करने के लिए जनवरी 1992 में अटलाण्टा में एक बैठक का आयोजन किया।

परन्तु, इस बैठक के आयोजित हो पाने के पहले, बेल्स के नेतृत्व वाले दल को पता चला कि उनकी खोज वास्तव में एक भूल थी जो तारों के बीच के माध्यम के कुछ प्रभावों की उपेक्षा करने के कारण हुई थी। वैज्ञानिक नैतिकता और ईमानदारी का अद्भुत प्रदर्शन करते हुए बेल्स ने सार्वजनिक रूप से इस भूल को बैठक में स्वीकार किया। इसकी वैज्ञानिक समुदाय ने बख़ूबी सराहना की। अन्ततः वोल्सजैन और फ्रेल को ग़ैर-सौरीय ग्रहों के पहले समूह की खोज करने का श्रेय दिया गया।

(इस पूरी घटना का वोल्सजैन के ख़ुद के शब्दों में विस्तृत विवरण पढ़ने के लिए इस वैबसाइट पर जाएँ – www.sciencedirect.com/science/article/pii/S1387647311000418)।

दावे जिनकी पुष्टि की जा सकी है, 1992 में किए गए जब खगोलवैज्ञानिकों ऐलेक्ज़ेण्डर वोल्सजैन तथा डेल फ्रेल ने एक पल्सार (तेज़ी-से घूमता हुआ एक तारा जो अपने जीवनकाल के लगभग अन्तिम चरण में था, और जिसे PSR B1257 + 12 नाम दिया गया था) के चारों ओर चक्कर लगाते हुए 3 ग्रहों को देखा। इसके तीन साल बाद, स्विस खगोल वैज्ञानिक डिडिए क्वेलोज तथा माइकल मेयर ने एक और ग़ैर-सौरीय ग्रह को खोज निकाला जो हमारे अपने सूर्य के ही जैसे 51 Peg नामक एक पीले तारे के चक्कर लगा रहा था। इसके उपरान्त 1996 में पॉल बटलर तथा जैफ मार्सी के नेतृत्व में अमरीकी खगोलवैज्ञानिकों के एक दल ने दो अन्य ग़ैर-सौरीय ग्रहों को खोज निकाला। इस दल ने आगे चलकर, इसके अगले दशक के अन्त तक ज्ञात किए गए कुल 100 ग़ैर-सौरीय ग्रहों में से 70 को खोज निकाला। 2009 में कैप्लर स्पेस दूरदर्शी की शुरुआत ने इस क्षेत्र में एक क्रान्ति ला दी है। इस दूरदर्शी का उन खगोलवैज्ञानिकों के द्वारा बहुत अधिक जानकारियाँ हासिल करने के लिए उपयोग किया गया है जो उसके द्वारा अन्य ग़ैर-सौरीय ग्रहों के सुरागों की खोज कर रहे हैं।

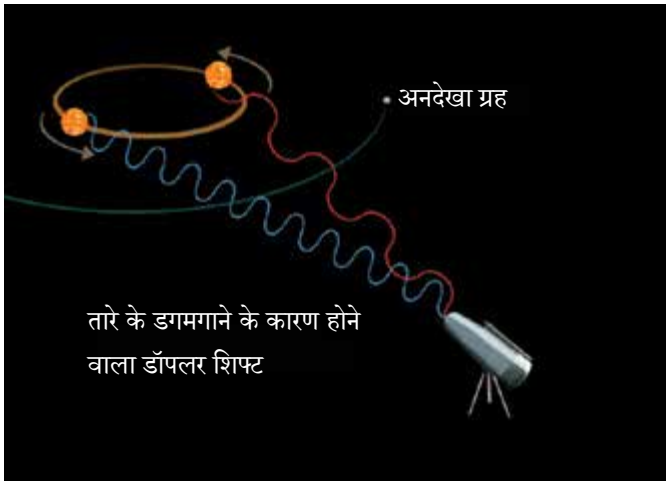

चित्र-1 : गति करते हुए एक तारे को प्रेक्षण में पकड़ना। तारा, ग्रह मण्डल के द्रव्यमान के केन्द्र की परिक्रमा करता है। जब वह हमारी ओर आता है तो उसका प्रकाश 'ब्लू शिफ्ट वाला' होता है, और जब वह हमसे दूर जाता है तब वह 'रैड शिफ्ट वाला' होता है।
Credits: NASA, Night Sky Network. URL: https://nightsky.jpl.nasa.gov/news-display.cfm?News_ID=682. License: Public domain.

बॉक्स-2 : डॉपलर प्रभाव

क्या आपने किसी ऐम्बुलेंस के साइरन या तेज़ी-से चलती हुई मोटरबाइक की आवाज़ की तीव्रता में उस समय अचानक होने वाले परिवर्तन पर ग़ौर किया है जब वह आपके नज़दीक आ रही होती है, और फिर आपके पास से गुज़रकर दूर जा रही होती है? डॉपलर प्रभाव नामक इस प्रभाव का वर्णन ध्वनि, प्रकाश या अन्य तरंगों की आवृत्ति में उस समय होने वाली वृद्धि (या कमी) के रूप में किया जाता है जब उसका स्रोत और प्रेक्षक एक-दूसरे के नज़दीक आ रहे (या एक-दूसरे से दूर जा रहे) होते हैं। खगोलवैज्ञानिक इस प्रभाव का उपयोग उस चाल को निर्धारित करने के लिए करते हैं जिससे तारे या आकाशगंगाएँ पृथ्वी पर स्थित हम प्रेक्षकों के निकट आ रहे होते हैं या दूर जा रहे होते हैं, और इसको हमें उनसे प्राप्त होने वाले प्रकाश की आवृत्ति में बदलाव की डिग्री के रूप में पहचाना जाता है। इस तरह, हमसे दूर जा रहे तारे प्रकाश की अधिक तरंगदैर्ध्यों की ओर बदलाव दर्शाते हैं, जिसे रैड शिफ्ट कहा जाता है। जबकि हमारे नज़दीक आते हुए तारे प्रकाश की कम तरंगदैर्ध्यों की ओर बदलाव दर्शाते हैं, जिसे ब्लू शिफ्ट कहा जाता है।

हम ग़ैर-सौरीय ग्रहों को कैसे खोज लेते हैं?

ग़ैर-सौरीय ग्रहों को ढूँढ़ने के लिए खगोल वैज्ञानिक कई प्रकार की विधियों का उपयोग करते हैं। इनमें से कई अप्रत्यक्ष विधियाँ होती

हैं और वे ग़ैर-सौरीय ग्रहों की उपस्थिति का पता यह देखने के द्वारा लगाती हैं कि वे अपने मेज़बान तारे और उसकी गतिविधियों को किस प्रकार प्रभावित करते हैं। ऐसा इसलिए करना पड़ता है, क्योंकि, कुछ अपवादों को छोड़कर, मेज़बान तारे इतनी दूर और इतने चमकदार होते हैं कि वे अपने ग्रहीय संगी-साथियों की चमक को फीका कर देते हैं।

यह हमारे अपने सौर मण्डल जैसा ही है जिसमें दृश्य तरंगदैर्ध्यों (वेवलैंग्थ) के पैमाने पर सूर्य की चमक बृहस्पति से एक अरब गुना ज़्यादा होती है। दूसरे शब्दों में, यदि हम सौर मण्डल को कहीं दूर से देखें तो, हम सूर्य से प्राप्त होने वाले हर 1,000,000,000 प्रकाश कणों की तुलना में बृहस्पति से प्राप्त केवल 1 प्रकाश कण को देख सकेंगे। इसके विपरीत, यदि हम सूर्य और बृहस्पति को सिर्फ़ 15 प्रकाश वर्षों की दूरी से ही देखें तो वे दोनों एक-दूसरे से 1 डिग्री के केवल 1/3600 वें अंश से ही अलग प्रतीत होंगे, जो कि लगभग एक बाल की मोटाई के बराबर होता है! जैसा कि आप इस उदाहरण से देख सकते हैं, ऐसी परिस्थितियों में किसी बड़े ग्रह की छवि हासिल करना उतना ही चुनौती भरा कार्य होता है जितना कि किसी बहुत तेज़ प्रकाश स्रोत (फ्लड लाइट) के बहुत पास में मौजूद किसी जुगनू की फोटो लेना होगा!

उन संसारों को (और यदि उनमें कोई निवासी हों, तो उन्हें) सचमुच में उनकी समग्रता में "देखने" में समर्थ होने के लिए हमें उससे कहीं उन्नत प्रौद्योगिकी की ज़रूरत होगी जितनी कि हमें आज उपलब्ध है। उस समय तक, जब तक कि ऐसे सुधार नहीं होते, हम वर्तमान प्रौद्योगिकी के द्वारा सम्भव विधियों के द्वारा ग़ैर-सौरीय ग्रहों की मौजूदगी का अनुमान लगाते रहेंगे। इस प्रयोजन के लिए जिन सबसे आम विधियों का हम वर्तमान में उपयोग करते हैं उनका वर्णन नीचे किया गया है।

बॉक्स-3 : अन्तरिक्ष में क्यों जाएँ?

पृथ्वी का वायुमण्डल बाह्य आकाश की छवियों को विकृत कर देता है, जिसके कारण हमारे द्वारा किए गए मापनों की शुद्धता सीमित हो जाती है। पृथ्वी के वायुमण्डल के बाहर किसी दूरदर्शी को स्थापित करने से यह बाधा दूर हो जाती है। चूँकि अन्तरिक्ष प्रेक्षणों के लिए एक स्थिर मंच प्रदान करता है, इसलिए बहुत सटीक खगोलविज्ञान के लिए आवश्यक अति सूक्ष्म मापों को प्राप्त करना सम्भव हो जाता है (तुलना के लिए **चित्र-2** को देखें)।

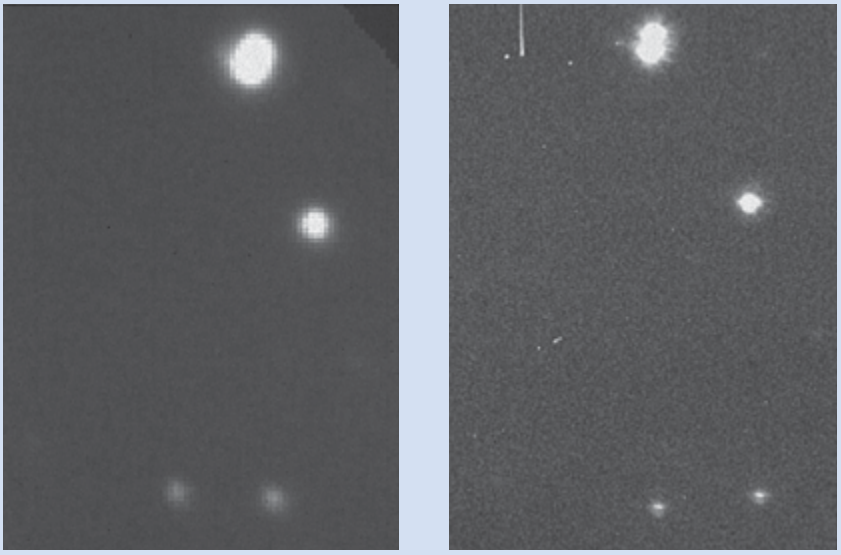

चित्र-2 : धरातल बनाम अन्तरिक्ष। यहाँ आकाश के एक क्षेत्र की लास कम्पानास, चिली स्थित वेधशाला द्वारा ली गई तस्वीर (बाईं ओर) तथा हबल स्पेस दूरदर्शी से अन्तरिक्ष से ली गई तस्वीर (दाईं ओर) की तुलना दर्शाई गई है। क्या आपने ग़ौर किया कि बेहतर स्पष्टता के अलावा हबल द्वारा ली गई तस्वीर में ज़्यादा तारे भी दिखाई दे रहे हैं?
Source: NASA. URL: https://www.nasa.gov/content/hubbles-first-light. License: Public domain.

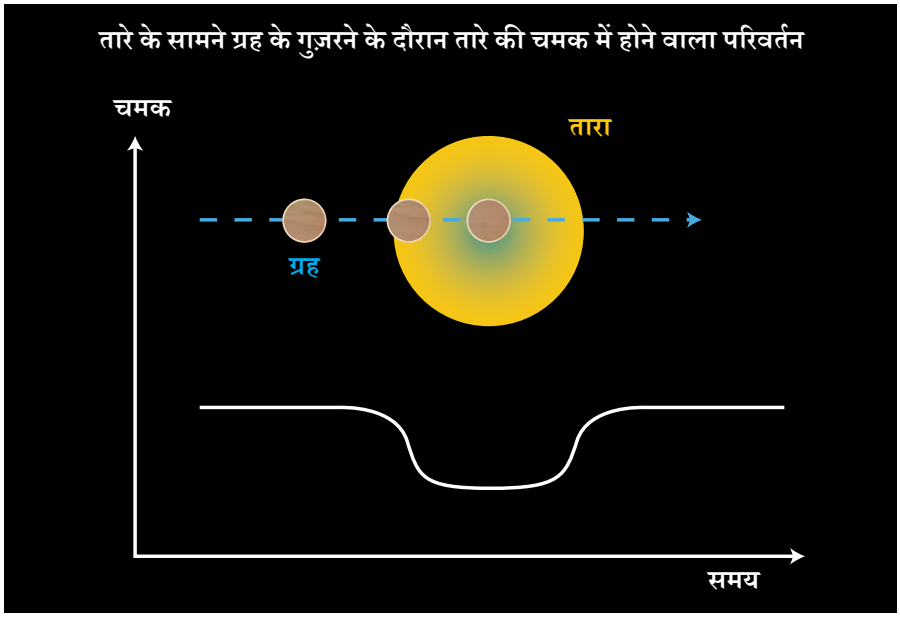

चित्र-3 : संक्रमण के दौरान प्रेक्षण में पकड़ा गया! यह चित्र दर्शाता है कि तारे की चमक में तब परिवर्तन होता है जब ग्रह उसके सामने से होकर गुज़रता है। जब ग्रह तारे पर ग्रहण लगाना आरम्भ करता है तब हम उसकी चमक में धीरे-धीरे आई कमी देखते हैं, जो तब तक स्थिर रहती है जब तक ग्रह तारे के सामने रहता है और फिर बाद में वह अपनी मूल स्थिति में वापिस आ जाती है।
Credits: SuperWASP, NASA. URL: http://www.superwasp.org/how.htm. License: Public domain.

बॉक्स-4 : टैबी का तारा!

तारे KIC 8462852 को उसके खगोल वैज्ञानिकों में लोकप्रिय नाम टैबी के तारे की तरह जाना जाता है। इसका नाम इसका सबसे पहले अध्ययन करने वाली खगोल वैज्ञानिक टैबेथा एस बोयाजियान के नाम पर पड़ा। इस तारे को कैप्लर दूरदर्शी ने पकड़ा था जिसने यह भी दिखाया कि यह तारा चमक के बढ़ने और घटने के बहुत अजीब दौर दर्शाता था। इस तारे के ऐसे अजीब व्यवहार ने पृथ्वी से परे जीवन खोजने के उत्साही लोगों को कुछ समय तक रोमांचित रखा। जब इन परिवर्तनों को प्राकृतिक कारणों से घटने वाले परिवर्तनों की तरह समझाने के प्रयास विफल हो गए, तब वैज्ञानिकों ने सुझाया कि उनका कारण डायसन्स स्वार्म्स (डायसन के झुण्ड) कहलाने वाली ऐसी संरचनाएँ थीं जिन्हें किसी उन्नत सभ्यता ने तारे की ऊर्जा का दोहन करने के लिए बनाया था। परन्तु, सर्च फॉर ऐक्स्ट्रा-टैरस्ट्रियल इंटैलीजेंस(SETI) (परग्रही बुद्धिमत्ता की खोज) में जुटी टीम के इस तारे से किन्हीं संकेतों को प्राप्त करने के प्रयासों के परिणाम नकारात्मक रहे हैं।

त्रिज्यीय वेग पर नज़र रखना (Radial Velocity Tracking)

ग़ैर-सौरीय ग्रहों को खोज निकालने की यह एक बहुत सफल विधि है। दरअसल, खगोल वैज्ञानिकों क्वेलोज तथा मेयर ने इसका ही उपयोग एक सामान्य (ग़ैर-पल्सार) तारे का चक्कर लगाने वाले पहले ग़ैर-सौरीय ग्रह को खोजने के लिए किया था। यदि परिक्रमा करने वाला ग्रह विशालकाय होता है तो मातृ तारे पर उसके गुरुत्वाकर्षी खिंचाव के कारण मातृ तारा डगमगाने लग सकता है। मेज़बान तारे की इस हल्की डगमगाहट, जिसे डॉपलर प्रभाव के कारण मदद मिलती है (**बॉक्स -2** देखें), का उपयोग ग़ैर-सौरीय ग्रहों की मौजूदगी को पकड़ने के लिए किया जा सकता है।

बृहस्पति जैसे गैस से बने विशालकाय ग्रह उनके मेज़बान तारे में दसियों मीटर प्रति सैकेण्ड से डगमगाने के वेग पैदा कर देते हैं। वर्तमान प्रौद्योगिकीय विधियाँ हमें आधा मीटर प्रति सैकेण्ड जितने धीमे वेग (हम आराम से घूमते समय इसी

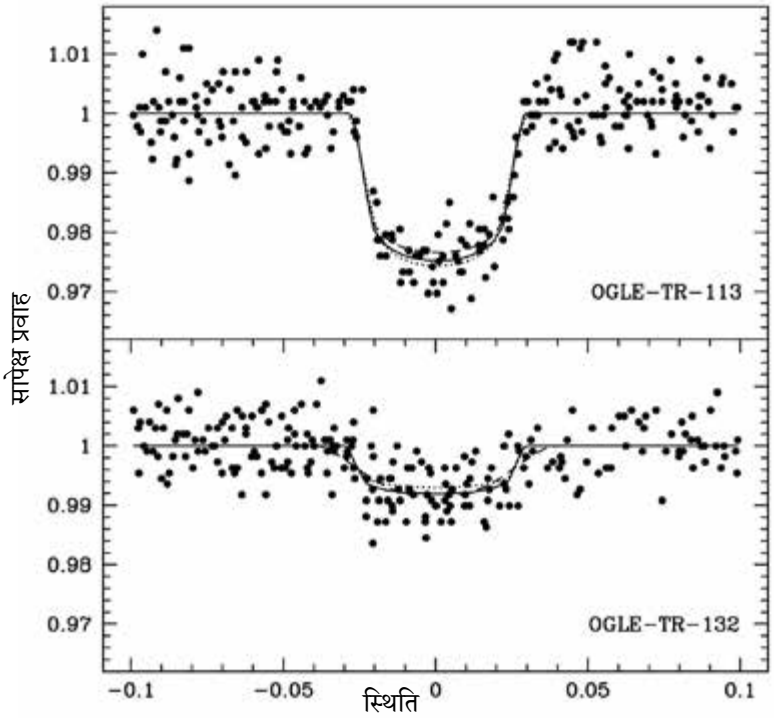

चित्र-4 : वास्तविक दुनिया में विज्ञान। इस चित्र में दिख रहे काले बिन्दु दर्शाते हैं कि ग्रहों की मेज़बानी करने वाले किसी तारे की बदलती हुई चमक वास्तव में कैसी प्रतीत होती है।

Credits: ESO. URL: https://www.eso.org/public/news/eso0415/. License: Public domain.

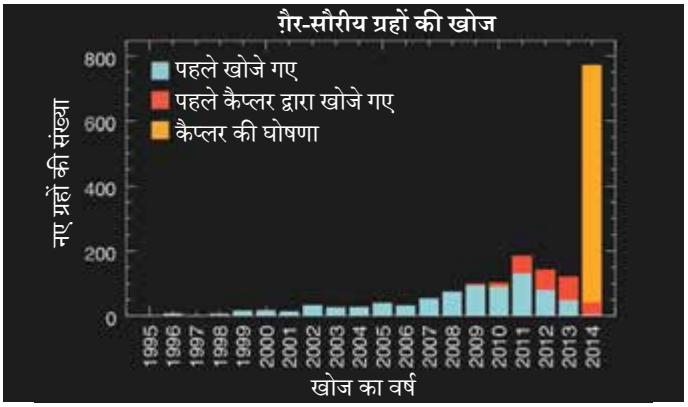

चित्र 5: कैप्लर का धमाकेदार प्रवेश - यह आयतचित्र (हिस्टोग्राम) 1995 के बाद से खोजे गए ग़ैर-सौरीय ग्रहों की संख्या दर्शाता है। खोजों की संख्या में उस वक्त आए अचानक उछाल पर ग़ौर करें जब कैप्लर की टीम ने लगभग एक हज़ार ग्रहों की खोज की घोषणा की।

Credits: NASA. URL: https://www.nasa.gov/content/exoplanet-discoveries. License: Public domain.

चित्र-6 : एक ग्रैविटेशनल लैंस का प्रतिरूप : जिस तरह से एक शराब का गिलास पृष्ठभूमि में जल रही मोमबत्ती के प्रकाश को विकृत करता है, यह लगभग वैसा ही होता है जिस तरह कोई विशाल द्रव्यमान वाला पिण्ड प्रकाश को विकृत करता है।

Credits: KIPAC, Kavli Insitute of Particle Physics and Cosmology. URL: http://kipacweb.stanford.edu/research/gravitational_lensing. License: Public domain.

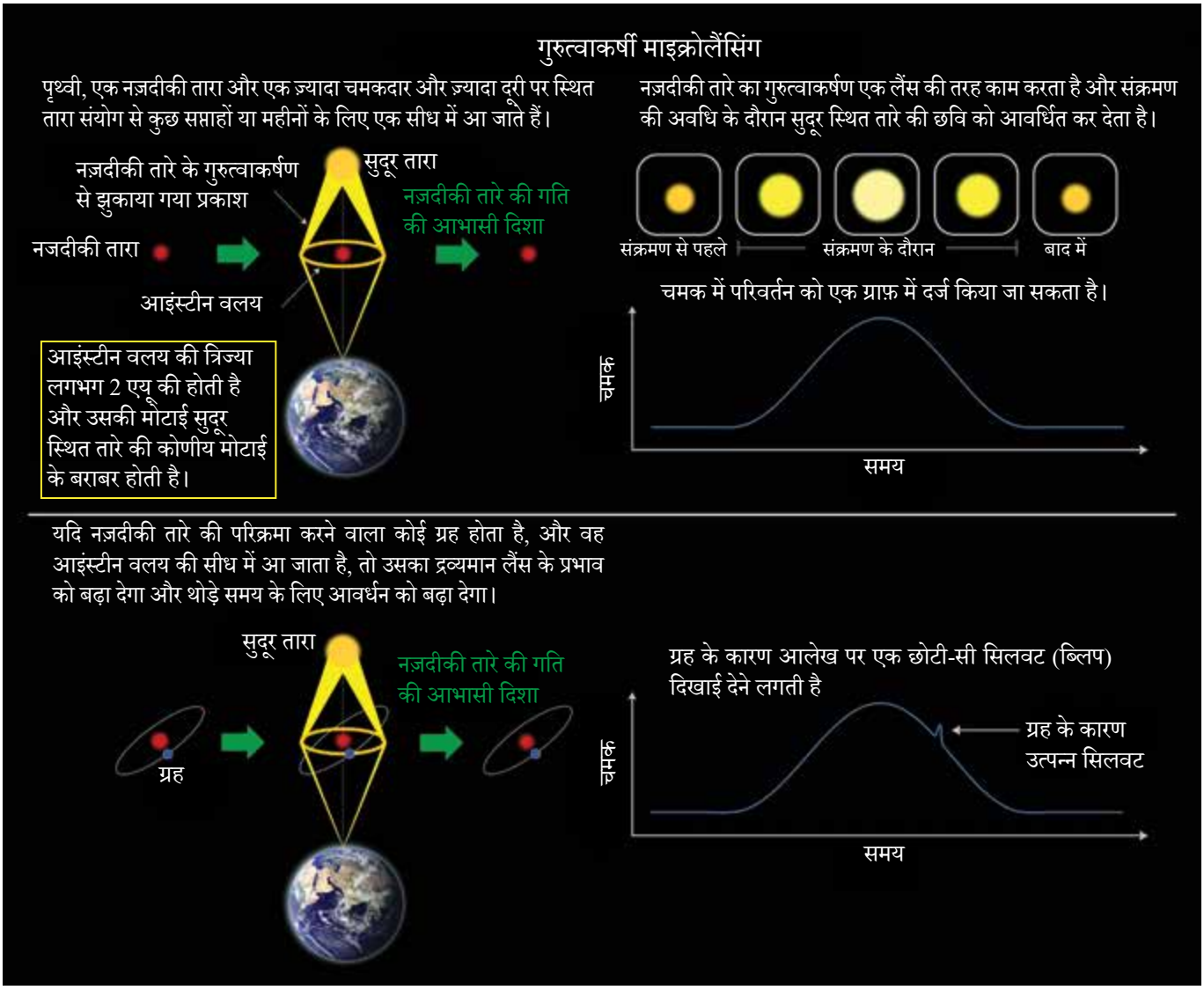

चित्र-7 : माइक्रोलैंसिंग का विवरण । गुरुत्वाकर्षी माइक्रोलैंसिंग की तकनीक इस प्रकार काम करती है।
Credits: LCOGT, IFLSCIENCE. URL: https://lco.global/files/spacebook/Gravitational%20Microlensing%20timeline.png. License: Public domain.

रफ्तार से चलते हैं) तक को पकड़ने की सुविधा देती हैं। इस तकनीक में होने वाली हर प्रगति दूसरे ग्रह मण्डलों में अपेक्षाकृत कहीं अधिक छोटे और चट्टानी ग्रहों, जैसे कि पृथ्वी, को खोज पाने की सम्भावना को बढ़ा देती है।

खगोलमिति (ऐस्ट्रोमीट्री)

खगोलमिति एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें आकाश में तारों की स्थिति को अधिक-से-अधिक सम्भव शुद्धता से निर्धारित करने का काम होता है। जैसा कि हमने पहले देखा है, किसी ग्रह की उपस्थिति उसके तारे

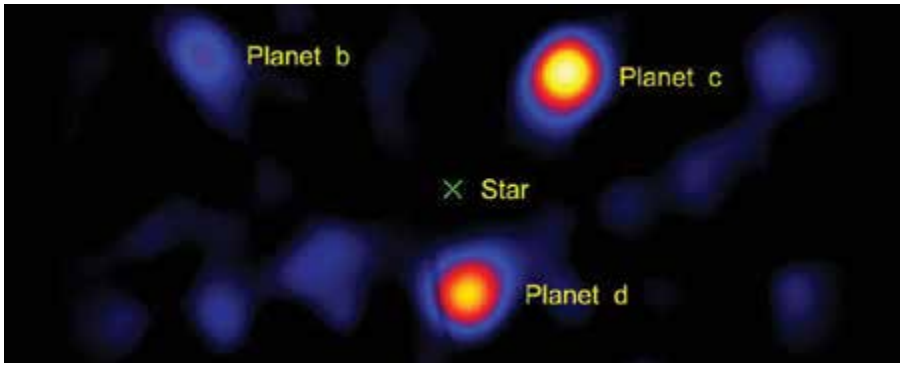

चित्र-8 : पड़ोसियों की तस्वीरें लेना! यह चित्र हमें तीन ग्रहों - जो HR8799b, c तथा d कहलाते हैं, और जो सभी एक ही तारे की परिक्रमा करते हैं जिसका नाम HR8799 है - से प्राप्त होने वाले प्रकाश को दर्शाता है। तारा उस स्थान पर स्थित है जिसे "X" से दर्शाया गया है। तीनों ग्रह, जो बृहस्पति के समान गैस दानव माने जाते हैं, पर इनका द्रव्यमान बृहस्पति से भी अधिक माना जाता है।
Credits: NASA/JPL-Caltech/Palomar Observatory. URL: http://www.nasa.gov/topics/universe/features/exoplanet20100414-a.html. License: Public domain.

में थोड़ी डगमगाहट पैदा कर देती है। यह डगमगाहट आकाश में उस तारे की स्थिति में सूक्ष्म बदलाव की तरह प्रगट होती है। चूँकि यह स्थिति परिवर्तन बहुत सूक्ष्म होता है, इसलिए हमें बहुत उच्च सटीकता से उसे नापने वाले परिष्कृत उपकरणों की ज़रूरत होती है। यही कारण है कि ग़ैर-सौरीय ग्रहों की उपस्थिति की इस विधि के द्वारा 2009 तक पुष्टि नहीं की जा सकी थी।

खगोलमिति को 2013 में महत्त्व मिलने लगा जब यूरोपियन स्पेस एजेंसी ने गाया नामक अन्तरिक्ष वेधशाला को विशुद्ध रूप से खगोलविज्ञान के उद्देश्यों के लिए बाह्य आकाश में स्थापित किया। गाया से अपेक्षा की जाती है कि वह अपने लगभग 10 वर्ष के जीवनकाल में लगभग 70,000 ग़ैर-सौरीय ग्रहों को खोजने और उनकी परिक्रमा कक्षाओं की विशेषताएँ बताने में हमें समर्थ बनाएगी।

संक्रमण (Transit) विधि

ग़ैर-सौरीय ग्रहों को प्रेक्षण में पकड़ने के लिए हम संक्रमण विधि का उपयोग तब करते हैं जब कोई तारा और उसका ग्रह हमारे सामने से गुज़रते समय पृथ्वी से इस तरह एक सीधी रेखा में होते हैं कि ग्रह उसके तारे को ढँककर ग्रहण जैसी स्थिति बना देता है।

इस ग्रहण के दौरान तारे की चमक थोड़ी-सी फीकी पड़ जाती है। चमक में आई इस कमी को, उस तारे के तंत्र का लम्बे समय से अध्ययन कर रहे, उच्च रैजोल्यूशन वाले दूरदर्शियों से किए गए प्रेक्षणों के द्वारा पकड़ लिया जाता है। यह विधि ऐसे बड़े ग्रहों के मामले में सबसे अच्छी तरह काम करती है जिनकी परिक्रमा कक्षा मातृ तारे के नज़दीक होती है, क्योंकि ऐसी स्थिति तारे की चमक में ज़्यादा कमी पैदा करती है और इसलिए उसे पकड़ना भी ज़्यादा आसान होता है।

इस विधि से अभी तक सबसे अधिक संख्या में ग़ैर-सौरीय ग्रहों को खोज निकालने में सफलता मिली है - विशेष रूप से पृथ्वी जैसे

बॉक्स-5 : उन्हें काम करते देखना!

यदि आप प्रेक्षण द्वारा ग्रहों का पता लगाने की यहाँ वर्णित सभी तकनीकों को वाकई में 'देखना' चाहते हैं तो कृपया इस वैबसाइट पर जाएँ –https://exoplanets.nasa.gov/interactable/11/.

ग्रहों को खोजने में जिनमें हमारी दिलचस्पी सबसे ज़्यादा है। बहुत अधिक संख्या में ग्रहों को खोज निकाल पाने का मुख्य कारण 2009 में आरम्भ किया गया अन्तरिक्ष में स्थापित उपकरणों से संचालित कैप्लर अभियान है। यह अभियान संक्रमण विधि का उपयोग करते हुए पृथ्वी के आकार के या उससे छोटे ग़ैर-सौरीय ग्रहों को खोजने के लिए हमारी आकाशगंगा के कुछ हिस्सों का सर्वेक्षण करता है। कैप्लर अभियान ने अभी तक 4706 ग़ैर-सौरीय ग्रह होने के उम्मीदवार खोजे हैं जिनमें से 2330 के बारे में तो पुष्टि की जा चुकी है। कैप्लर अभियान का अन्तरिक्ष में आधारित होना ही उसकी शानदार सफलता का मुख्य कारण है।

गुरुत्वाकर्षी माइक्रोलैंसिंग (Gravitational Micro-Lensing)

व्यापक सापेक्षता सिद्धान्त हमें बताता है कि विशाल द्रव्यमान वाले पिण्ड उनके आस-पास के प्रकाश को झुका सकते हैं। यह प्रभाव जिसे ग्रैविटेशनल लैंसिंग कहा जाता है किसी सुदूर स्थित तारे के प्रकाश को तब आवर्धित कर देता है जब उसके पड़ोस का कोई धीमा तारा उसके सामने से गुजरता है। यह उसके जैसा प्रभाव है जो हम तब देखते हैं जब हम किसी शराब के गिलास की तली को एक जलती मोमबत्ती के सामने रखते हैं (जैसा **चित्र-5** में दिखाई देता है)।

पृष्ठभूमि में स्थित सुदूर तारे की चमक पहले बढ़ती है, और फिर जैसे-जैसे सामने का अदृश्य फीका तारा उसके सामने से गुज़रता है वह लगातार कम होती जाती है, बाद में जब सामने का तारा पूरी तरह से दूर हट जाता है तब वह वापिस अपने पहले जैसे स्थिर मान पर आ जाती है। यदि सामने के अदृश्य तारे की कोई ग्रह परिक्रमा कर रहा होता है, तब बीच में एक छोटा-सा अन्तराल ऐसा भी होगा जब यह ग्रह भी पृष्ठभूमि के तारे के लैंसिंग प्रभाव में अपना योगदान देगा (**चित्र-6** देखें)। इसे प्रेक्षण में पकड़ा जा सकता है और उससे ग़ैर-सौरीय ग्रहों की मौजूदगी का अनुमान लगाया जा सकता है।

प्रत्यक्ष इमेजिंग

जैसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका है, दृश्य सीमा के भीतर की तरंगदैर्ध्यों पर, हमारा सूर्य बृहस्पति की तुलना में लगभग एक अरब गुना अधिक चमकदार होता है। परन्तु, अवरक्त (इंफ्रारैड) तरंगदैर्ध्यों (जो दृश्य प्रकाश के तरंगदैर्ध्यों से ज़्यादा होती हैं) पर हमारा सूर्य केवल एक सौ गुना अधिक चमकदार होता है। यदि परिस्थितियाँ अनुकूल हों तो हम इन तरंगदैर्ध्यों पर ग्रह मण्डल का चित्र ले सकते हैं। उदाहरण के लिए, यदि कोई ग्रह उसके तारे से बहुत दूर है, और हम उस तारे से हमें प्राप्त होने वाले प्रकाश को बाधित कर देते हैं, तो कम चमक वाला ग्रह स्वयं को प्रगट कर देगा। सीधे प्रत्यक्ष इमेजिंग की इस विधि का उपयोग अभी हाल ही में बढ़ा है, और इसने अब तक हमें लगभग 33 ग्रहों को ढूँढ़ने में मदद की है।

बड़े क़दम बढ़ाना!

चूँकि हमारे सौर मण्डल का जीवन काल हमारे अपने जीवन कालों की तुलना में कल्पनातीत रूप से विराट है, इसलिए उसकी उत्पत्ति और विकास का अध्ययन, एक जीवन काल तो क्या, कई पीढ़ियों के निरन्तर शोधकार्य में भी कर पाना सम्भव नहीं है। इसे करने का सबसे अच्छा तरीक़ा उससे मिलते-जुलते ग्रह मण्डलों का उनके विकास के विभिन्न चरणों में अध्ययन करना, और फिर उनसे मिलने वाले प्रमाणों को जोड़कर एक पूरी तस्वीर बनाना है।

जैसा कि हमने अभी देखा, अन्य ग्रह

मण्डल कतई दुर्लभ नहीं हैं, और हमें उनका अध्ययन कर सकना चाहिए, बशर्ते कि हम उन्हें प्रेक्षणों के द्वारा पर्याप्त संख्याओं में, और विविधता में खोज सकें। वास्तव में, 1992 में हुई पहले ग़ैर-सौरीय ग्रह की खोज के बाद से हम बहुत आगे आ चुके हैं। वर्तमान प्रौद्योगिकी, जिसमें प्रसिद्ध हबल दूरदर्शी तथा कैप्लर मिशन शामिल हैं, ने हमारे सौर मण्डल के परे हज़ारों ग़ैर-सौरीय ग्रहों को पहले ही खोज लिया है, और उन्नति के हर क़दम के साथ हम और भी अन्य ग़ैर-सौरीय ग्रहों के बारे में जान सकते हैं।

नासा को 2017 में कभी एक संक्रमण करने वाले ग्रहों का सर्वेक्षण करने वाला उपग्रह (टीईएसएस - ट्रांजिटिंग ऐक्सोप्लैनेट सर्वे सैटेलाइट) प्रक्षेपित करने की उम्मीद है। इस सर्वेक्षण का उद्देश्य पृथ्वी के आकार के ग्रहों से लेकर बृहस्पति से भी बहुत बड़े ग्रहों तक को खोज निकालना है, जिनके मेज़बान तारे विभिन्न प्रकार के हैं। इसी प्रकार, जेम्स वैब अन्तरिक्ष दूरदर्शी, जिसे इसके बाद, 2018 में परिक्रमा कक्षा में स्थापित किए जाने की योजना है, ग़ैर-सौरीय ग्रहों के वातावरणों का अध्ययन करेगा और उन संसारों के परिवेशों पर प्रकाश डालेगा।

हम अब ऐसे तंत्रों को देख सकते हैं जिनका अभी-अभी जन्म हुआ है और उससे हम ग्रहों के निर्माण की प्रारम्भिक अवस्थाओं को समझ सकते हैं। उससे थोड़े अधिक पुराने तंत्र हमें ग्रहों के बीच होने वाली अन्तर्क्रियाओं के बारे में बता सकते हैं, और मृत तारों की परिक्रमा कर रहे चरम अवस्था वाले ग्रह हमें विकास के आगे के सम्भव मार्गों के बारे में बता सकते हैं। और जो सभी कुछ हम देखेंगे उसके आधार पर हम अपने सौर मण्डल के निर्मित होने के बारे में प्रस्तुत किए जा चुके सिद्धान्तों का परीक्षण कर सकते हैं। हम ग़ैर-सौरीय ग्रहों के वातावरणों का भी अध्ययन कर सकते हैं और बहुत हद तक उन पर वास कर सकने की परिस्थितियों को जान सकते हैं। लेकिन ज़्यादा महत्त्वपूर्ण बात यह है कि ग़ैर-सौरीय ग्रहों का अध्ययन बाह्य अन्तरिक्ष में वास कर सकने लायक संसारों और उन पर बुद्धिमान जीवन के अस्तित्व के बारे में हमारी जिज्ञासा का समाधान करने की दिशा में एक बड़ा क़दम है।

बॉक्स-6 : नागरिक वैज्ञानिक बनिए!

कैप्लर मिशन जैसी विशाल परियोजनाओं की खोजों के फलस्वरूप, हमारी मिल्की वे आकाशगंगा ने भी बहुत आसानी से ग़ैर-सौरीय ग्रहों की स्थितियों के रहस्य उजागर कर दिए हैं। विशाल परिमाण में आँकड़ों और जानकारियों का संग्रह किया गया है, परन्तु अब इन सबका सार्थक उपयोग कर पाने के लिए बड़ी संख्या में मानव संसाधन की आवश्यकता है। प्लैनेट हण्टर्स (ग्रहों के खोजी) एक ऐसी नागरिक परियोजना है, जो स्वरूपों को पहचानने की मानवीय क्षमता का उपयोग करते हुए ऐसे संकेतों को पकड़ने के काम में संलग्न है जो ग़ैर-सौरीय ग्रहों की मौजूदगी दर्शाते हैं। इस परियोजना के लगभग 300,000 स्वैच्छिक कार्यकर्ता हैं, और इसे कई ग्रहों की खोजों का श्रेय जाता है, और उनकी उपलब्धियों में टैबी के तारे का अजीब आचरण भी शामिल है। इसलिए यदि आप ग़ैर-सौरीय ग्रहों की खोज के अभियान में शामिल होने के लिए आतुर हैं तो प्लैनेट हण्टर्स के समूह को आपको अपना सदस्य बनाने में निश्चित ही ख़ुशी होगी। इसके लिए आप उनकी इस वैबसाइट www.planethunters.org पर जाएँ और नई दुनियाओं को खोजने में वैज्ञानिकों की मदद करें।

Note: Credits for the image used in the background of the article title: Kepler Mission Overview, NASA Ames/ W Stenzel, Wikimedia Commons. URL: https://en.wikipedia.org/wiki/File:NASA-KeplerSpaceTelescope-ArtistConcept-20141027.jpg. License: Public Domain.

Want to know more?

1. A (very) technical paper on the detection techniques: http://www.mpia.de/homes/ppvi/chapter/fischer.pdf.
2. About Kepler mission: http://kepler.nasa.gov/ and http://www.nature.com/nature/journal/v513/n7518/pdf/nature13781.pdf.
3. About Gaia mission: http://sci.esa.int/gaia/ and https://arxiv.org/pdf/1411.1173v1.pdf.
4. Some websites to tell you all about the recent gossip in the field: http://exoplanetarchive.ipac.caltech.edu/docs/counts_detail.html and https://exoplanets.nasa.gov/newworldsatlas/.
5. About some of the upcoming missions: https://tess.gsfc.nasa.gov/overview.html and http://www.jwst.nasa.gov/.

सुमा एन मूर्ति खगोलविज्ञान की विद्यार्थी हैं, और उन्होंने भारतीय अन्तरिक्ष विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संस्थान, तिरुअनन्तपुरम, से खगोलशास्त्र तथा खगोलभौतिकी में अपना स्नातकोत्तर अध्ययन कार्यक्रम पूरा किया है। **अनुवाद :** भरत त्रिपाठी

मंगल पर मानव बस्ती

मार्स वन के साथ साक्षात्कार

लगभग 70,000 वर्ष पहले मानव प्रजाति अफ़्रीका से बाहर निकली और अन्ततः पूरे भूमण्डल में फैल गई। आज मनुष्य जाति अगला बड़ा क़दम उठाने - दूसरे ग्रहों पर जाने और उनकी खोजबीन करने - के लिए तैयार है। इसकी शुरुआत करने के लिए, पृथ्वी से अपनी निकटता और समानता के कारण, मंगल (मार्स) ग्रह एक सहज विकल्प के तौर पर चुना गया है। बहुत से लोग मानते हैं कि अन्ततः मनुष्य जाति की नियति, अन्तरिक्ष में यात्रा करने वाली, पूरी आकाशगंगा और पूरे ब्रह्माण्ड में फैली हुई, अनेक ग्रहों पर वास करने वाली प्रजाति बनने की है। इस दशक ने मंगल की खोजबीन करने के लिए विभिन्न एजेंसियों के द्वारा प्रस्तावित कई अभियानों की रूपरेखाओं को देखा है - जिनमें मानव यात्रियों वाले मंगल अभियानों से लेकर मंगल पर स्थायी बस्तियाँ बसाना तक शामिल है। महत्त्वपूर्ण बात यह है कि इनमें से कई प्रस्ताव निजी कम्पनियों या फ़ाउण्डेशनों के हैं। निजी भागीदारों के इस क्षेत्र में प्रवेश ने मंगल के औपनिवेशीकरण के बारे में उत्साह को बहुत बढ़ा दिया है। मार्स वन ऐसा ही एक संगठन है जिसने आगामी दशकों में मंगल का औपनिवेशीकरण करने की एक योजना को ज़ाहिर किया है। यहाँ मार्स वन की टीम के साथ किए गए साक्षात्कार का ब्यौरा दिया गया है। इस साक्षात्कार का उद्देश्य मार्स वन की योजना का समर्थन करना नहीं है, बल्कि औपनिवेशीकरण के उनके प्रयासों में निहित कुछ रोचक सीखों को सामने लाना है। - *सम्पादक*

मार्स वन की समग्र परिकल्पना के बारे में हमें कुछ बताइए।

मार्स वन नॉट-फॉर-प्रॉफिट फ़ाउण्डेशन है जो मंगल ग्रह पर एक स्थायी मानव बस्ती स्थापित करने के उद्देश्य से काम कर रहा है। इस बस्ती में सावधानीपूर्वक चुने गए और प्रशिक्षित, कार्यदल के सदस्य होंगे। इस कार्यदल के प्रस्थान करने के पहले मंगल ग्रह पर कई मानवरहित अभियान भेजे जाएँगे। 2020 में इनके प्रक्षेपण का आरम्भ करते हुए इन मानवरहित अभियानों के द्वारा ग्रह पर रोवर्स (घूमने वाले मशीनी

चित्र-1 : मंगल पर प्रस्तावित योजनाबद्ध बस्ती का एक दृश्य।
Source: Bryan Versteeg, Mars One, URL: http://www.mars-one.com/

उपकरण), रसद सामग्री, जीवन को बनाए रखने वाली व्यवस्थाएँ (life support systems), और दूसरे ऐसे सभी सामान भेजे जाएँगे जिनकी एक आवास योग्य मानव बस्ती के लिए आवश्यकता पड़ेगी। जब यह बाह्यचौकी (outpost) पूरी तरह से काम करने लगेगी, तब चार अन्तरिक्ष यात्रियों का पहला कार्यदल मंगल ग्रह के लिए उनकी एकतरफ़ा यात्रा के लिए प्रस्थान करेगा। वे केवल मंगल को देखने भर के लिए नहीं जाएँगे, बल्कि वहाँ रहेंगे, छानबीन करेंगे और मंगल को मनुष्य जाति के लिए दूसरा घर बनाएँगे।

मंगल पर बड़े पैमाने की मानव आबादी को स्थापित करने में कितना लम्बा समय लगेगा?

2026 में आरम्भ करके, उसके बाद हर 26 माह के अन्तर से, एक नया कार्यदल मंगल के लिए प्रस्थान करेगा। केवल चार व्यक्तियों से शुरुआत करते हुए, आरम्भ में मानव बस्ती बहुत छोटी होगी, लेकिन हर 26 महीने के बाद चार व्यक्तियों का एक नया कार्यदल वहाँ पहुँचने से उनका समुदाय धीरे-धीरे बड़ा होता जाएगा।

अन्तरिक्ष यानों तथा मनुष्यों की अन्तरिक्ष उड़ानों की दृष्टि से प्रौद्योगिकी और अभियांत्रिकी के क्षेत्रों में मार्स वन के सामने क्या चुनौतियाँ हैं?

स्थायी बस्ती स्थापित करने में मार्स वन को ऐसी प्रौद्योगिकी को इस्तेमाल करने की सुविधा रहेगी जो कि मौजूदा प्रौद्योगिकी से बहुत भिन्न नहीं होगी। जहाँ एक ओर यह प्रौद्योगिकी तो पहले से मौजूद है, वहीं दूसरी ओर इस अभियान के लिए विशेष रूप से जिस हार्डवेयर (अन्तरिक्ष यान, मशीनें, उपकरण आदि) की आवश्यकता पड़ेगी, उसकी संरचना तय करने, उसे निर्मित करने और उसका व्यापक रूप से परीक्षण किए जाने की अभी भी ज़रूरत है। चूँकि मार्स वन कोई अन्तरिक्ष यान बनाने वाली (ऐरोस्पेस) कम्पनी नहीं है, इसलिए वह इस अभियान

चित्र-2 : मार्स लैण्डर
Source: Bryan Versteeg, Mars One, URL: http://www.mars-one.com/

के लिए ज़रूरी हार्डवेयर को स्वयं डिज़ाइन या निर्मित नहीं करेगी। इसकी बजाय ऐसे सारे उपकरण थर्ड पार्टी सप्लायर्स (आपूर्ति करने वाली बाहरी कम्पनियाँ) के द्वारा विकसित किए जाएँगे और उन्हें मार्स वन की स्थापित इकाइयों के साथ एकीकृत कर लिया जाएगा।

मार्स वन का डिज़ाइन इस समय प्रारम्भिक अवधारणात्मक अवस्था में है। अभियान के लिए आवश्यक उपकरणों आदि को निर्धारित कर लिया गया है और उनके बारे में दुनिया भर की स्थापित ऐरोस्पेस कम्पनियों से चर्चा कर ली गई है। सम्भावित समाधानों की पहचान कर ली गई है और अनुमानित लागत के आँकड़ों पर भी चर्चा की गई है। पहले चरण में, स्थायी बस्ती अभियान के लिए ज़रूरी हर प्रमुख व्यवस्था को तैयार करने के लिए स्थापित ऐरोस्पेस कम्पनियों के डिज़ाइन अध्ययनों के लिए मार्स वन धन प्रदान करेगा। मार्स वन के अभियान के डिज़ाइन को अवधारणात्मक डिज़ाइन अध्ययनों से मिले परिणामों के आधार पर संशोधित किया जाएगा। पैरागॉन स्पेस डेवेलपमेण्ट कार्पोरेशन तथा लॉकहीड मार्टिन के द्वारा प्राथमिक अध्ययन पहले ही पूरे किए जा चुके हैं।

मंगल पर बड़े पैमाने पर और छोटे पैमाने पर लम्बे समय तक बनाए रखे जाने वाला पारिस्थितिक तंत्र निर्मित करने की आपने क्या योजना बनाई है?

मार्स वन यह सुनिश्चित करने के लिए विशेष क़दम उठाएगा कि मंगल के पर्यावरण (जिसका हम अध्ययन करेंगे और जिस पर

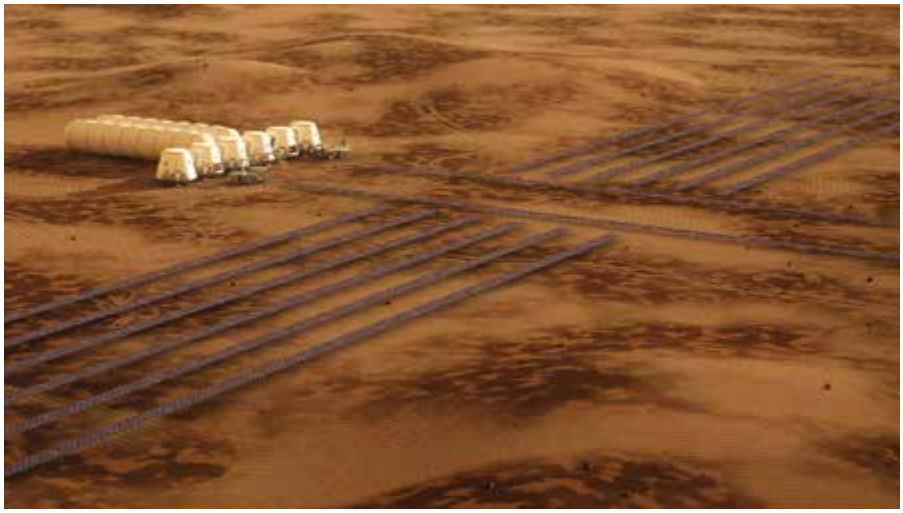

चित्र-3 : सौर पैनल
Source: Bryan Versteeg, Mars One, URL: http://www.mars-one.com/

हम निर्भर रहेंगे) को कोई नुक़सान न पहुँचे। मंगल की इस शुरुआती बस्ती को बाध्य किया जाएगा कि वे लगभग हर चीज़ का पुनर्चक्रण करें, ऊर्जा के उपयोग पर बारीक़ी से ध्यान दें, और पदार्थों तथा ऊर्जा के रिसाव को कम-से-कम करें। मंगल पर पोषक तत्वों का मिलना दुर्लभ है। उन्हें या तो पृथ्वी से आयात करना पड़ेगा या फिर मंगल की ज़मीन से या वातावरण से निकालना पड़ेगा। सौर पैनल, जिन्हें भी पृथ्वी से ही प्रक्षेपित किया जाएगा, इस बस्ती के लिए विद्युत का उत्पादन करेंगे। इस सबका यही मतलब कि पृथ्वी के औसत व्यक्ति की तुलना में मंगल के रहवासी का पारिस्थितिक पदचिह्न बहुत छोटा होगा।

इसके अलावा, ख़ुद इस बस्ती का विकास और उसकी गतिविधियाँ पृथ्वी पर जीवन को बनाए रखने के हमारे प्रयासों में ज़बरदस्त सुधार कर सकते हैं। मंगल पर हर चीज़ का पुनर्चक्रण करने की अनिवार्यता हमारे पुनर्चक्रण उद्योग को ज़बरदस्त प्रोत्साहन देगी, और ऐसा ही प्रोत्साहन हल्के सौर पैनलों की प्रौद्योगिकी की माँग द्वारा मिलेगा। मंगल पर फ़सलों को उगाने और पौधे लगाने के नए तरीक़े भी हमें पृथ्वी के लिए बहुत कुछ सिखा सकते हैं कि किसी दूसरे ग्रह के अनुभवों के द्वारा हमारे पर्यावरण को कैसे सुधारा जा सकता है।

मंगल पर हवा, पानी और भोजन की आत्मनिर्भरता को पाने के लिए आपकी क्या योजना है?

साँस लेने के लिए मुफ़ीद हवा कई चीज़ों से मिलकर बनती है। पृथ्वी पर जो साँस हम लेते हैं उसमें क़रीब 20% ऑक्सीजन होती है, लगभग 80% नाइट्रोजन तत्व होता है, और बहुत छोटी मात्रा आर्गन जैसी अन्य गैसों की भी होती है। मंगल पर, पानी को हाइड्रोजन और ऑक्सीजन में तोड़कर ऑक्सीजन पैदा की जा सकती है। इस ऑक्सीजन का उपयोग रहने के लिए बनाई जाने वाली इकाइयों में साँस लेने लायक

चित्र-4 : मार्स वन का खेत (फार्म)।
Source: Bryan Versteeg, Mars One, URL: http://www.mars-one.com/

वातावरण बनाने के लिए किया जाएगा। चूँकि इस बस्ती में बिजली बनाने के लिए सौर पैनलों का उपयोग किया जाएगा, तो उन परिस्थितियों के लिए, जब बिजली की उपलब्धता कम होगी, जैसे रात में या फिर धूल के बवण्डर के दौरान, ऑक्सीजन के एक हिस्से को संचित कर लिया जाएगा। नाइट्रोजन और आर्गन को मंगल के ही वायुमण्डल से निकाल लिया जाएगा और उन्हें वहाँ पर मनुष्यों के रहने योग्य स्थानों पर अक्रिय गैसों के रूप में छोड़ दिया जाएगा।

पानी को मंगल की भूमि से निकाला जा सकता है। मार्स वन किसी ख़ास क्षेत्र में, जहाँ की भूमि में पानी हो, एक रोवर (खोजी अन्तरिक्ष यान) भेजेगा, और रोवर मुख्यतः, उस क्षेत्र में पानी की मात्रा के आधार पर मानव बस्ती के लिए सही स्थान का ठीक-ठीक पता लगाएगा। हमारा मानना है कि यह क्षेत्र 40 से 45 डिग्री उत्तरी अक्षांश पर होगा। यह रोवर बर्फ़ से भरी मिट्टी को निकालकर उसे ऐसी लाइफ सपोर्ट इकाइयों में लगे जल निष्कर्षक में डाल देगा जो मानव बस्ती के लिए ऊर्जा, पानी और साँस लेने लायक वायु पैदा करती हैं। यह जल निष्कर्षक तब तक मिट्टी को गर्म करेगा जब तक कि पानी वाष्प न बन जाए। अब इस वाष्पीकृत पानी को संघनित करके उसका संग्रह किया जाएगा, सूखी मिट्टी को अलग कर दिया जाएगा, तथा और अधिक पानी निकालने के लिए इस प्रक्रिया को दोहराया जाएगा। प्रत्येक लाइफ सपोर्ट इकाई में लगभग 1500 लीटर आरक्षित पानी का संग्रह किया जाएगा जिसे बिजली की कमी वाले दिनों में उपयोग किया जा सके। चूँकि मंगल में गुरुत्वाकर्षण है, इसलिए पानी को उसी तरह से इस्तेमाल किया जा सकता है जैसे पृथ्वी पर किया जाता है। हर अन्तरिक्ष यात्री प्रतिदिन लगभग 50 लीटर पानी का उपयोग कर पाएगा। इस पानी का पुनर्चक्रण किया जाएगा, जिसमें मंगल की भूमि से पानी निकालने की तुलना में काफ़ी कम ऊर्जा लगती है। सिर्फ़ ऐसे पानी की जगह, जिसका पुनर्चक्रण नहीं किया जा सकता होगा, भूमि से निकाले गए पानी का इस्तेमाल किया जाएगा।

मंगल पर गए अन्तरिक्ष यात्री ग्रीनहाउस में ख़ुद अपना भोजन पैदा कर पाएँगे। मार्स वन पृथ्वी पर ही बनी किसी ऐसी छद्म सीमान्त बस्ती में, मंगल पर खाद्य उत्पादन के लिए ज़रूरी परिमाणों की पड़ताल करेगा, जहाँ चालक दल के सभी सदस्यों को प्रशिक्षित किया जाएगा कि वे ग्रीनहाउस के उपकरणों

अन्तरिक्ष यात्री के स्वास्थ्य और उसके प्रदर्शन को बनाए रखने के लिए उड़ान के भीतर व्यायाम के प्रति-उपायों की प्रभावशीलता का एक बढ़िया उदाहरण है अमरीकी अन्तरिक्ष यात्री शैनन ल्यूसिड का 188 दिन तक रूसी मीर अन्तरिक्ष स्टेशन में रहना। इस दौरान वे बहुत हद तक व्यायाम के प्रति-उपायों पर निर्भर रहीं। जब उनका मिशन पूरा हुआ तो वे 24 घण्टों के भीतर ही बिना किसी सहायता के चलने लगीं।

Source: NASA, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Shannon_Matilda_Wells_Lucid_1978.jpg. License: Public Domain.

को चला सकें। इस बात को सुनिश्चित करने के लिए कि जब पहला चालक दल मंगल पर पहुँचे तो उनके लिए खाना तैयार हो, मनुष्यों के वहाँ उतरने से भी पहले आपूर्ति मिशन पर पृथ्वी से उनके लिए संग्रहित भोजन भेजा जाएगा। इस संग्रहित भोजन को किफ़ायत के साथ इस्तेमाल किया जाएगा ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि इसका अधिकांश हिस्सा तो आपातकालीन राशन के रूप में काम आ सके। आवास स्थान का लगभग $80m^2$ हिस्सा वनस्पति लगाने के लिए उपलब्ध रहेगा। पहला चालक दल, दूसरे चालक दल के निवास स्थान को भी खाद्य पदार्थ उगाने के काम में ला सकेगा क्योंकि दूसरे चालक दल का हार्डवेयर, पहले चालक दल के वहाँ उतरने के कुछ सप्ताह बाद ही उतर जाएगा। खाद्योत्पादन बाहर की बजाय भीतर, कृत्रिम रोशनी में होगा। आवास स्थान के ऊपर मंगल की मिट्टी की मोटी परत विकिरण से पौधों (और अन्तरिक्ष यात्रियों) की रक्षा करेगी। पौधों के लिए ज़रूरी कार्बन डाईऑक्साइड मंगल के वायुमण्डल से प्राप्त हो जाएगी, और मंगल की भूमि में से खींचकर, या दूसरे उद्देश्यों से पुनर्चक्रित करके पानी की उपलब्धता को भी सुनिश्चित किया जाएगा। पौधों के लिए ज़रूरी पोषक तत्वों को या तो पृथ्वी से आयात किया जा सकता है या फिर उन्हें मानव मल के पुनर्चक्रण द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। पौधों के अखाद्य हिस्सों का पुनर्चक्रण किया जाएगा, या उनका तब तक के लिए संग्रह किया जाएगा जब तक कि पृथ्वी से और अधिक उन्नत पुनर्चक्रण उपकरणों को वहाँ न भेज दिया जाए। नई फ़सलों के अलावा, बहुत सम्भव है कि शैवाल और कीड़े-मकोड़े भी मंगल पर मनुष्य के नियमित आहार का हिस्सा हों। वनस्पति के उत्पादन का जो भी अतिरिक्त हिस्सा होगा उसे अगले आपूर्ति मिशन के आने तक गुज़ारा करने के लिए आपातकालीन राशन के रूप में पृथ्वी से आए हुए भोजन के साथ संग्रहित किया जाएगा।

कम गुरुत्वाकर्षण होने की शारीरिक और स्वास्थ्य सम्बन्धी चुनौतियाँ क्या हैं, और इनसे निपटने की आपकी क्या योजना है?

अन्तरिक्ष उड़ान मिशनों के दौरान, और मंगल पर उतरने पर, दोनों ही समय अन्तरिक्ष यात्रियों को कम हुए गुरुत्वाकर्षण के प्रभाव झेलना पड़ेंगे (मंगल पर पृथ्वी से 62% कम गुरुत्वाकर्षण है)। विस्तृत अवधि के अन्तरिक्ष उड़ान मिशनों के दौरान कम हुए गुरुत्वाकर्षण के कारण अन्तरिक्ष यात्रियों का प्रतिकूलन हो सकता है - पेशियों के द्रव्यमान और क्षमता में गिरावट, वायुजीवी (ऐरोबिक) क्षमता में कमी और अस्थि घनत्व का नुक़सान - और कई अन्य शारीरिक बदलाव हो सकते हैं। जब मार्स वन के अन्तरिक्ष यात्री पहली बार मंगल की सतह पर उतरेंगे, तो कम-से-कम वे सिद्धान्त रूप में तो, मंगल पर अपना मिशन पूरा करके पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण में वापस लौटने वाले किसी अन्तरिक्ष यात्री की तुलना में ज़्यादा स्वस्थ और सबल होंगे। अन्तर्राष्ट्रीय

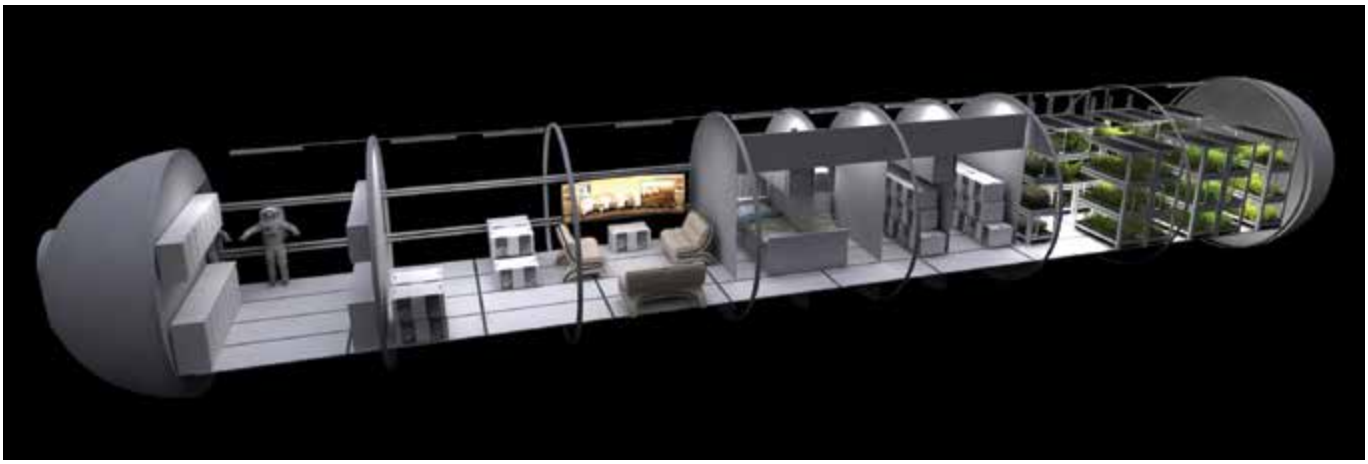

चित्र-5 : मार्स वन आवास स्थल।
Source: Bryan Versteeg, Mars One, URL: http://www.mars-one.com/

चित्र-6 : मार्स वन आवास स्थल – नज़दीक का दृश्य।
Source: Bryan Versteeg, Mars One, URL: http://www.mars-one.com/

अन्तरिक्ष स्टेशन के, अन्तरिक्ष यात्रियों के 4-6 महीने की अवधि वाले मिशनों के, एक हालिया अध्ययन में यह पता चला है कि अन्तरिक्ष यात्रियों की पेशियों की क्षमता में 30% की अधिकतम क्षति (और पेशियों के द्रव्यमान की 15% अधिकतम क्षति) होती है।

मार्स वन का लक्ष्य है सुगठित और वैज्ञानिक रूप से मान्य ऐसे प्रति-उपायों (काउण्टर मैजर्स) के कार्यक्रम द्वारा इन आँकड़ों को नीचे लाना। इन उपायों में और भी बहुत कुछ होने के साथ ऐसे व्यायाम, दवाएँ और पोषण तत्व शामिल रहेंगे जिन्हें इन प्रभावों को कम करते पाया गया है। इस क्षेत्र में निरन्तर शोध और उन्नति होने से मनुष्य को ले जाने वाले प्रथम प्रक्षेपण से पहले लगभग 10 सालों के तैयारी के समय में ही निश्चित ही और अधिक प्रभावशाली प्रति-उपाय सामने आएँगे। मार्स वन, सबसे उपयुक्त अन्तरिक्ष यात्रियों व प्रति-उपायों को देखने-समझने और चुनने के लिए, प्रथम औपनिवेशीकरण मिशन के प्रक्षेपण से पूर्व के दशक का भी लाभ उठाएगा ताकि एक सुरक्षित और सफल मिशन को सुनिश्चित किया जा सके। एक बार मंगल पर पहुँचने पर, अन्तरिक्ष यात्री गुरुत्वाकर्षण के बल का लाभ ले पाएँगे और उन्हें पुनः अनुकूलन की प्रक्रिया में सहायता मिलेगी जिससे उनकी अस्थियों का पुनर्गठन होगा और वे मज़बूत होंगी।

क्या मंगल पर उपनिवेश बसाने वाले प्रारम्भिक लोगों पर अकेलेपन के कोई मनोवैज्ञानिक प्रभाव होंगे? इन प्रभावों को कम करने के लिए आपकी क्या योजना है?

इस यात्रा को सफल बनाने के लिए इसमें शामिल स्त्री और पुरुषों को प्रौद्योगिकी की उन्नति से ज़्यादा और भी बहुत कुछ की ज़रूरत पड़ेगी। प्रौद्योगिकी उन्हें मंगल तक तो पहुँचा देगी, लेकिन आपसी सहयोग ही वह ज़रूरत है जिससे यह सुनिश्चित होगा कि ये लोग इस यात्रा को पूरा कर पाएँ, और सफलतापूर्वक मंगल पर एक समाज का निर्माण शुरू कर पाएँ।

हमने अपनी योजना की चर्चा अनुभवी और सम्मानित मनोवैज्ञानिकों के साथ की है। मार्स वन के दल के एक सदस्य हैं डॉ. नॉर्बर्ट क्राफ्ट, जिन्होंने नासा और जाक्सा (जापानी अन्तरिक्ष अन्वेषण अभिकरण) में अन्तरिक्ष यात्रियों के चयन पर काम किया है। उनकी विशेषज्ञता का प्रमुख क्षेत्र है लम्बी अवधि की अन्तरिक्ष उड़ान के नकारात्मक प्रभावों से निपटने के शारीरिक और मनोवैज्ञानिक प्रति-उपाय विकसित करना।

मंगल पर सफलतापूर्वक टिके रहने की कुंजी में बहुत बारीक़ी से गुज़री चयन प्रक्रिया, और विस्तृत प्रशिक्षण कार्यक्रम शामिल रहेंगे जहाँ समूह प्रशिक्षण की भूमिका बहुत महत्त्वपूर्ण होगी। मार्स वन सर्वश्रेष्ठ व्यक्तियों की तलाश में नहीं है, बल्कि सर्वश्रेष्ठ चालक दल की तलाश में है। ऐसे बहुत से लोग हैं जो मंगल के मिशन के लिए उपयुक्त नहीं होंगे। मंगल तक की यात्रा के दौरान, और वहाँ पहुँचने पर, ये लोग एक-दूसरे के साथ दिन के पूरे 24 घण्टे बिताएँगे। इसी अवधि के दौरान सरल-से-सरल चीज़ें करना भी कष्टप्रद लगने लग सकता है। इस प्रकार की स्थिति से निपटने के लिए एक ख़ास तरह की सामूहिक स्फूर्ति और ऊर्जा की ज़रूरत होती है और मार्स वन का काम है ऐसे लोगों की तलाश करना जो इस चुनौती पर ख़रा उतरने के लिए सबसे सक्षम हैं।

मंगल पर, चालक दल को व्यस्त रखना भी उनके लिए सबसे अच्छा रहेगा, और यह तय है कि वे व्यस्त रहेंगे। वे अपने आवास स्थानों में सुधार करेंगे और स्थानीय सामग्री से, तथा पृथ्वी से आई नई इकाइयों से उन्हें विस्तार देंगे। वे शोध में लगे रहेंगे - अपने व्यक्तिगत शोध में भी, और दूसरों के शोध (उदाहरण के लिए विश्वविद्यालयों) के लिए आँकड़ों के एकत्रण में भी। वे दो साल बाद

आने वाले दूसरे चालक दल के लिए बस्ती को तैयार भी करेंगे। इसके अलावा, उनके लिए मनोरंजन भी ज़रूरी होगा, चाहे वह मानसिक हो, शारीरिक या रचनात्मक, जैसे कि खेल, कला, गेम आदि। हर दो सालों में एक नए चालक दल के आने से यह बस्ती धीरे-धीरे एक छोटा-सा गाँव बन जाएगी, और अधिक-से-अधिक लोगों के रहने के लिए एक आकर्षक जगह भी बन जाएगी।

मंगल की कम गुरुत्वाकर्षण, निम्न वायुमण्डलीय दाब वाली दशाओं में क्या कुछ ख़ास रोचक वैज्ञानिक प्रयोग करने की योजनाएँ हैं?

मंगल पर अत्यधिक शोधकार्य किए जाएँगे। उदाहरण के लिए, अन्तरिक्ष यात्री इस बात पर शोध करेंगे कि 38% गुरुत्वाकर्षण वाले क्षेत्र में रहने से उनके शरीर में कैसी प्रतिक्रिया और बदलाव होते हैं, या किस तरह खाद्य फ़सलें और अन्य पौधे कम गुरुत्वाकर्षण की स्थिति में, वनस्पति उत्पादन की जल संवर्धन (हाइड्रोपोनिक) इकाइयों या अन्य प्रौद्योगिकियों का प्रयोग करके बढ़ते हैं। मंगल के प्राचीन और मौजूदा भूविज्ञान को समझने के लिए इस शोध अध्ययन में इस बस्ती से इतर अन्वेषण भी शामिल होंगे। निश्चित ही, बहुत-सा शोध तो इसी बात पर केन्द्रित होगा कि क्या कभी मंगल पर जीवन था, या क्या अभी वहाँ जीवन है।

अगर मंगल को उपनिवेश बनाने का लक्ष्य सफल हो जाता है, तो एक दिन मंगल पर बच्चों का जन्म भी होगा। क्या मंगल की दशाएँ इन बच्चों में स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याएँ पैदा करेंगी?

कम गुरुत्वाकर्षण की स्थिति में गर्भ धारण करने की मनुष्य की क्षमता के बारे में कोई जानकारी नहीं है। न ही इस विषय में पर्याप्त शोध उपलब्ध है कि क्या ऐसी परिस्थितियों में भ्रूण का सामान्य विकास हो सकता है या नहीं। इसके अलावा, यह बात तो निश्चित है कि मंगल की बस्ती बच्चों के रहने के लिए उपयुक्त जगह नहीं होगी। मंगल पर रहने वाले अन्तरिक्ष यात्रियों का समूह बहुत छोटा होगा, और वे सब-के-सब अपनी बाह्य चौकियों पर ज़रूरी काम में व्यस्त रहेंगे। और इस मानव बस्ती में एकदम बुनियादी स्वास्थ्य सेवाएँ ही होंगी, उससे ज़्यादा कुछ नहीं। इसलिए, मार्स वन इस बस्ती के प्रारम्भिक रहवासियों को यह सलाह देगा कि वे बच्चे पैदा न करने का प्रयास करें। लेकिन, मंगल पर एक सच्ची, स्थायी, आत्मनिर्भर बस्ती बसाने के लिए मार्स वन इस बात को समझता है कि वहाँ बच्चों का होना बहुत ज़रूरी है। इसलिए, यह शोध का एक महत्त्वपूर्ण क्षेत्र होगा।

क्या मार्स वन को व्यावसायिक तौर पर व्यावहारिक और लाभदायक मिशन बनाने की कोई योजना है?

बहुत सम्भव है कि मंगल पर पहली मानव बस्ती बसाना इक्कीसवीं सदी का निर्णायक क्षण, और हमारे जीवन काल का सबसे रोमांचक समय हो। सम्भावना है कि दुनिया भर के लोग इस मिशन को अपना सहयोग देना चाहेंगे, और वे लोग हमारे, मंगल पर मानव मिशन को दान देकर अपना सहयोग दे भी रहे हैं। मार्स वन को हर महीने 100 से ज़्यादा देशों से दान प्राप्त होता है। हालाँकि हम यह अपेक्षा करते हैं कि मंगल पर हमारे पहले मनुष्य-रहित मिशन के उतरने तक दान से हुई आय से हमारे मिशन को काफ़ी हद तक सहारा मिल जाएगा, लेकिन यह पूरे मिशन का ख़र्च उठाने के लिए पर्याप्त नहीं होगी। इसलिए मार्स वन के मिशन के एक बड़े हिस्से का ख़र्चा निजी क्षेत्र से प्राप्त होने वाले निवेश के द्वारा पूरा होगा। निवेशों को प्राप्त करने के लिए, मार्स वन फ़ाउण्डेशन ने मार्स वन वैंचर्स की स्थापना की है जो लाभ अर्जित करने वाली कम्पनी है और निवेशकों को इसके शेयर ख़रीदने का मौक़ा देती है। मार्स वन वैंचर्स के पास मार्स वन मिशन के मीडिया व बौद्धिक सम्पदा के एकमात्र अधिकार हैं, और वह इनका मुद्रीकरण करेगा ताकि मिशन को सहारा मिल सके और शेयर धारकों को अपने निवेश पर प्रतिलाभ प्राप्त हो। निवेश पर प्रतिलाभ कई राजस्व धाराओं से प्राप्त होगा, जिनमें मीडिया पर प्रकाशन और अभिव्यक्ति, ब्राण्ड साझेदारियाँ, बौद्धिक सम्पदा अधिकार, व्यापार और व्यवसाय से जुड़े कई और विषय शामिल हैं।

क्या आपने राष्ट्रीय अन्तरिक्ष शोध संगठनों के साथ साझेदारियाँ की हैं?

फ़िलहाल तो राष्ट्रीय या अन्तर्राष्ट्रीय अन्तरिक्ष संगठनों के साथ कोई साझेदारियाँ नहीं हैं, लेकिन हमने नासा के साथ भविष्य में सम्भावित साझेदारियों के बारे में कई बार शुरुआती बातचीत की है।

भारत का कोई स्कूली शिक्षक इस प्रयास में किस प्रकार मदद कर सकता है?

भारत के स्कूली शिक्षक अपनी कक्षाओं में मार्स वन के मिशन की योजनाओं की चर्चा करके इसमें मदद कर सकते हैं। इससे मार्स वन के कार्यक्रम के बारे में जानकारी का प्रसार होगा और उसके बारे में जागरूकता बढ़ेगी। और यह सिर्फ़ मार्स वन के लिए ही महत्त्वपूर्ण नहीं है बल्कि सामान्यतया भी, अन्तरिक्ष उद्योग में होने वाली प्रगति के लिए महत्त्वपूर्ण है। विद्यार्थियों के विकास पर शिक्षकों का बहुत ही सकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है, और शिक्षक छोटे लड़के, लड़कियों को प्रेरित कर सकते हैं कि वे अपने सपनों के पीछे जाएँ और ख़ुद भी इंजीनियर, वैज्ञानिक व अन्तरिक्ष यात्री बनकर दिखाएँ!

अनुवाद : भरत त्रिपाठी

Note: Credits for the image used in the background of the article title: Settlement camera, Bryan Versteeg, Mars One, URL: http://www.mars-one.com/.

स्क्रैमजैट : अन्तरिक्ष की यात्रा की लागत को कम करने के लिए इसरो की भविष्यवादी प्रौद्योगिकी

टी वी वेंकटेश्वरन

स्क्रैमजैट इंजन क्या होते हैं? वे पारम्परिक, एक बार इस्तेमाल करके फेंक दिए जाने वाले रॉकेट प्रक्षेपण यान से किस प्रकार भिन्न हैं? यह लेख पाठकों को इस नई प्रौद्योगिकी से अवगत कराता है और इससे पृथ्वी की निचली कक्षा में कम लागत वाले अन्तरिक्ष प्रक्षेपण दे पाने वाले उपयोग की पड़ताल करता है।

28 अगस्त 2016 को, भारतीय अन्तरिक्ष अनुसन्धान संगठन (इसरो) ने देश में ही बने दोहरी प्रणाली वाले रैमजेट [Dual Mode Ramjet (DMRJ)] स्क्रैमजैट इंजनों की उड़ानों का सफल प्रदर्शन किया। भारत भी अब, उपग्रहों जैसी अन्तरिक्ष की सम्पत्तियों को पृथ्वी की निचली कक्षा में छोड़ने के लिए भरोसेमन्द, सुरक्षित, किफ़ायती और दोबारा उपयोग किए जा सकने वाले प्रक्षेपण यान बनाने की खोज में लगे अगुआ देशों (अमरीका, रूस और यूरोप) की विशिष्ट मण्डली का सदस्य बन गया है।

मौजूदा प्रौद्योगिकी की सीमाएँ

मौजूदा प्रक्षेपण यान मुख्यतः कई चरणों वाले, बस एक बार उपयोग होने वाले हैं जो ऑक्सीकारकों को अपने साथ ले जाते हैं, और इन सब कारणों से ये ख़र्चीले, जोख़िम भरे और भारी-भरकम हो जाते हैं।

बॉक्स-1 : पृथ्वी की निचली कक्षा क्या है?

अधिकांश संचार उपग्रह, पृथ्वी की सतह से लगभग 36000 किलोमीटर ऊपर भू-समकालिक कक्षा [Geosynchronous Orbit (GSO)] में स्थापित हैं। इस ऊँचाई पर स्थापित उपग्रह पृथ्वी का एक चक्कर लगाने में लगभग 23 घण्टे 56 मिनट और 4 सैकेण्ड का समय लेगा जो कि पृथ्वी के नक्षत्र घूर्णन काल के बराबर होता है।

इसके विपरीत, ग्लोबल पोजीशनिंग सिस्टम (जीपीएस), रूसी ग्लोनास और कुछ अन्य अन्तरिक्ष परिवेश अनुसन्धान उपग्रहों को पृथ्वी की सतह से क़रीब 1200-35790 किलोमीटर दूर स्थित मध्यम भू कक्षा [Medium Earth Orbit (MEO)] में स्थापित किया गया है। एमईओ उपग्रहों की कक्षीय अवधि लगभग 2 से लेकर क़रीब-क़रीब 24 घण्टों तक की होती है।

लेकिन, अगर आप अन्तरिक्ष स्टेशन बनाना चाहें और लोगों को पृथ्वी से वहाँ लाना और वापस छोड़ना भी करना चाहें, तो आप यही चाहेंगे कि यह स्टेशन पृथ्वी के ज़्यादा क़रीब हो। यह बात सुदूर संवेदन उपग्रह पर भी लागू होती है, अगर आप पृथ्वी की सतह की क़रीब से तस्वीरें लेने में उसका उपयोग करने की योजना बना रहे हों तो। इसलिए इस तरह के उपग्रहों को आमतौर पर पृथ्वी की निचली कक्षा [Low Earth Orbit (LEO)] में स्थापित किया जाता है, जो पृथ्वी की सतह से लगभग 200-1200 किलोमीटर की दूरी पर है। यह उपग्रह पृथ्वी का एक चक्कर लगाने में लगभग 80 से 130 मिनट लगाते हैं।

उड़ान भरने से पहले रॉकेट के द्रव्यमान का लगभग 85-90% भाग प्रोपैलर (नोदक या आगे ढकेलने वाला) का होता है, और लगभग सिर्फ़ 1% द्रव्यमान पृथ्वी का चक्कर लगाने वाले उपग्रह का होता है। एक बार ईंधन के जलने के बाद बाक़ी चीज़ें, जिनमें सहयोगी ढाँचा, टैंक, पम्प, इंजन आदि होते हैं, अनुपयोगी हो जाती हैं। इस सारे अतिरिक्त भार को अन्तरिक्ष में ले जाने से बचने के लिए रॉकेटों में अक्सर कई चरण, या खण्ड होते हैं, और अपने-अपने उपयोग के बाद इनमें से हर एक गिरकर अलग हो जाता है। सामान्यतया, एक चरण-खण्ड में ईंधन के ख़त्म हो जाने के बाद, रॉकेट का वह चरण, उसकी खोल और मोटरों को महासागरों में फेंक दिया जाता है।

हर चरण के जल चुकने के बाद, उसे यान से अलग करना होता है, और अगले चरण को सुलगाना पड़ता है। यह प्रक्रिया, बिना चूक और देरी के, क्रमवार, हर चरण के साथ करना पड़ती है जिसके कारण वर्तमान प्रौद्योगिकी ख़र्चीली होने के साथ जोख़िम से भरी हुई भी है। जितने ज़्यादा चरण होंगे, असफल होने की उतनी ही अधिक गुंजाइश होती है। इस पूरे क्रम में छोटी-सी देरी या दुर्घटना तबाही कर सकती है। जनवरी 1986 में नासा के अन्तरिक्ष शटल चैलेंजर पर एक हादसा हुआ था, जिसमें सात अन्तरिक्ष यात्री मारे गए थे। इसने दुनिया को हिलाकर रख दिया था। यह हादसा इसलिए हुआ था क्योंकि दो चरणों को जोड़ने वाले रबर-ओ-रिंगस उन्हें पूरी तरह सील बन्द नहीं कर पाए थे।

अपने अन्तिम चरणों के सिवाय, जब कोई रॉकेट पृथ्वी के वायुमण्डल की कगार पर पहुँचता है, तो ऑक्सीजन प्रचुर मात्रा में उसे चारों ओर से घेर लेती है। इसके बावजूद, कई रॉकेट उनका अपना ईंधन और उसे जलाने वाले ऑक्सीकारक, दोनों को साथ लेकर चलते हैं। इससे उनकी संरचना भारी-भरकम और अप्रभावी हो जाती है, क्योंकि रॉकेट द्वारा पैदा किए गए धक्के का आधे से ज़्यादा हिस्सा ऑक्सीकारक को उठाने में चला जाता है।

अगर हम ऐसे पुनर्उपयोगी इंजन के साथ प्रक्षेपण यान बना सकते जो कम-से-कम पृथ्वी के सघन वायुमण्डल के भीतर की

चित्र-1 : स्क्रैमजैट इंजन का प्रक्षेपण
Credits: Scramjet engine gallery, ISRO. URL: http://www.isro.gov.in/launchers/scramjet-engine-td-gallery. License: Public Domain.

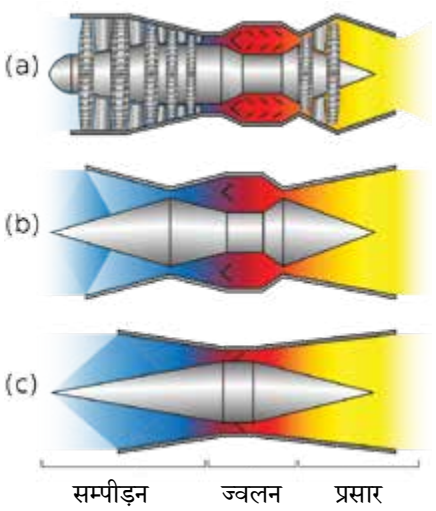

चित्र-2 : रैमजैट और स्क्रैमजैट दो प्रकार के विकसित जैट इंजन हैं। जैट इंजन के विपरीत, रैमजैट और स्क्रैमजैट इंजनों में कोई चलायमान भाग नहीं होता, और इसलिए, वे सुरक्षित होते हैं। तीनों प्रकार के जैट इंजन ज्वलन के लिए वायुमण्डल की ऑक्सीजन का प्रयोग करते हैं।
Credits: GreyTrafalgar, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Turbo_ram_scramjet_comparative_diagram.svg. License: Public Domain.

अधिकांश उड़ान के दौरान किसी तरह से वायुमण्डल की ऑक्सीजन का उपयोग कर लेता, तो अन्तरिक्ष में यात्रा करने की लागत बहुत हद तक घट जाती। इसलिए इस बात में कोई आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि अन्तरिक्ष की यात्रा करने की क्षमता रखने वाले दुनिया भर के देश ऐसी प्रौद्योगिकी की तलाश में लगे हुए हैं।

दोहरी प्रणाली वाले रैमजैट-स्क्रैमजैट इंजन क्या होते हैं?

एक साधारण जैट इंजन उसी सिद्धान्त पर काम करता है, जिस पर रॉकेट करता है, लेकिन इसके दो महत्त्वपूर्ण अपवाद हैं। जैट इंजन पुनर्उपयोगी होते हैं, और ईंधन जलाने के लिए वायुमण्डल की ऑक्सीजन का इस्तेमाल करते हैं।

जैट इंजन की डिज़ाइन काफ़ी सरल होती है। प्रचुर मात्रा में ऑक्सीजन से भरी वायुमण्डल की हवा को घूमने वाली (रोटरी) ब्लेडों

द्वारा दबाया जाता है और ज्वलन चैम्बर (combustion chamber) में लाया जाता है। इस गर्म, सम्पीड़ित (compressed air) हवा में ईंधन भर दिया जाता है ताकि वह जल सके, जिससे यह पूरा मिश्रण काफ़ी हद तक फैल जाता है। यह गैस बहुत तेज़ चाल के साथ निकास टोंटी (नॉजल) से बाहर निकलती है, जिससे वह धक्का पैदा होता है (न्यूटन के तीसरे नियम के अनुसार) जो जैट को ऊपर की ओर धकेलता है।

रैमजैट और स्क्रैमजैट, जैट इंजनों के ही ऐसे विकसित प्रकार हैं जिन्हें अन्तरिक्ष की उड़ानों के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है। सबसे तेज़ जैट विमान क़रीब 0.8 किलोमीटर प्रति सैकेण्ड की चाल से उड़ सकता है, जबकि अन्तरिक्ष की उड़ान के लिए यह ज़रूरी है कि 8 किलोमीटर प्रति सैकेण्ड की चाल प्राप्त की जाए। ऐसा आवेग प्रदान कर सकने वाले जैट इंजन, रैमजैट कहलाते हैं। दूसरे शब्दों में, रैमजैट और ज़्यादा विकसित, हवा को भीतर खींचने वाले (air-breathing) ऐसे इंजन हैं जिन्हें ज्वलन चैम्बर में सम्पीड़ित हवा लाने के लिए रोटरी ब्लेडों की ज़रूरत नहीं पड़ती। इसकी बजाय, सम्पीड़ित हवा को ख़ासतौर से डिज़ाइन की गई प्रवेशिकाओं के द्वारा भीतर खींचा जाता है, और इसके साथ-ही-साथ, यान सुपरसॉनिक चाल से आगे बढ़ता जाता है। एक स्क्रैमजैट या "सुपरसॉनिक कम्बस्टिंग रैमजैट", रैमजैट का एक विकसित और अनूठा प्रकार है जो यही सिद्धान्त अपनाता है लेकिन हाइपरसॉनिक (सुपरसॉनिक से भी तेज़) चाल पर श्रेष्ठतम ढंग से काम करता है।

स्क्रैमजैट के उपयोग से जुड़ी चुनौती!

हालाँकि किसी स्क्रैमजैट की डिज़ाइन बड़ी ही सरल प्रतीत होती है, पर उसका परिचालन मुश्किल और प्रौद्योगिकीय रूप से चुनौतियों भरा होता है।

हवा को दबाने के लिए रोटरी ब्लेडों के न होने से, रैमजैट और स्क्रैमजैट, दोनों प्रकार के इंजन अपनी प्रवेशिकाओं के द्वारा भीतर आने वाली हवा को दबाने के लिए अपने सापेक्ष वेग का इस्तेमाल करते हैं। ज़मीन पर, प्रवेशिकाओं में आने वाली हवा का कोई उल्लेखनीय सापेक्ष वेग नहीं होगा। इसलिए, जिस तरह हम कमज़ोर बैटरी वाली कार का इंजन चालू करने के लिए उसे धक्का देते हैं, काफ़ी कुछ उसी तरह पारम्परिक रॉकेटों का उपयोग स्क्रैमजैट/रैमजैट यानों को अन्तरिक्ष में धकेलने के लिए किया जाता है। ये रॉकेट, यानों को बहुत जल्दी मैक 4 से भी ज़्यादा का प्रारम्भिक वेग प्राप्त करने में मदद करते हैं। एक बार वे हवा को दबाने के लिए ज़रूरी सापेक्ष वेग को प्राप्त कर लेते हैं, उसके बाद उनके स्क्रैमजैट/रैमजैट इंजनों को दहन द्वारा चालू किया जा सकता है। यह ज्वलन भी काफ़ी पेचीदा होता है - यह अगले कुछ मिलीसैकेण्डों के भीतर ही होना चाहिए। मैक 5 या 6 के वेग से बढ़ रहे किसी अन्तरिक्ष यान के ज्वलन चैम्बर में हवा के अशान्त प्रवाह को देखते हुए, विशेषज्ञ इस ज्वलन की तुलना किसी तूफ़ान के बीच माचिस की तीली जलाने से करते हैं।

और भले ही इस मिश्रण को सुलगाया जा सके, तो भी ईंधन जलाने के लिए लगने वाले समय की पूरी अवधि तक इस लपट को जलाए रखना एक दुष्कर कार्य है। यह लगभग वैसा ही है जैसे अपने हाथ में जलती मोमबत्ती लेकर पूरी तेज़ी-से भागना!

इतना ही नहीं। जब स्क्रैमजैट वायुमण्डल में हाइपरसॉनिक चाल से आगे बढ़ रहा होता है, तो हवा का सापेक्ष वेग इतना अधिक होता है कि वह हवा को भीतर लेते रहने की स्क्रैमजैट की क्षमता को प्रभावित करता है। किसी तेज़ी-से जाती बस की खिड़की में से अपना चेहरा बाहर निकालने की कल्पना करें, आपकी नाक से होकर जाते हवा के

बॉक्स-2 : मैक संख्या

मैक संख्या को किसी पिण्ड की चाल और उसके चारों ओर के माध्यम में ध्वनि की चाल के बीच के अनुपात के रूप में परिभाषित किया जाता है। इसे अक्सर किसी संख्या के साथ इस्तेमाल किया जाता है (जैसे कि मैक 1, मैक 2 इत्यादि) जो क्रमशः ध्वनि की चाल, ध्वनि की चाल से दोगुना आदि दर्शाता है।

सुपरसॉनिक चाल किसी वस्तु की रफ़्तार की उस दर को कहते हैं जब वह ध्वनि की चाल से अधिक तेज़ होती है (मैक 1)।

हाइपरसॉनिक चाल अत्यधिक सुपरसॉनिक चाल को कहते हैं - 1970 के दशक से, सामान्यतया यह माना जाता रहा है कि हाइपरसॉनिक चाल का मतलब मैक 5 और उससे अधिक है।

चित्र-3 : रोहिणी परिवार के रॉकेटों पर दो स्क्रैमजैट इंजनों को फिट किया गया था और फिर इसरो द्वारा इसका परीक्षण किया गया।

Credits: MarcRic, Wikimedia Commons. URL: https://te.wikipedia.org/wiki/%E0%B0%A6%E0%B0%B8%E0%B1%8D%E0%B0%A4%E0%B1%8D%E0%B0%B0%E0%B0%82:ISRO_Advanced_Technology_Vehicle_shape-01_(rotated).jpg. License: CC-BY-SA.

थपेड़े आपका साँस लेना मुश्किल कर देंगे। स्क्रैमजैट की डिज़ाइन ऐसी होना चाहिए कि प्रवेशिकाओं से हवा लगातार भीतर आती रहे, भले ही वेग कितना भी ज़्यादा हो।

रैमजैट-स्क्रैमजैट इंजनों को विकसित करके, उनका परीक्षण करके और उनकी डिज़ाइन में सुधार करके इन चुनौतियों से चरण-दर-चरण निपटा गया। इसरो ने शुरुआती प्रोपल्जन (प्रणोदन या धक्का) के लिए जाँचे-परखे, देश में ही तैयार किए गए तीन टन वाले रोहिणी परिवार के रॉकेट आरएच 560 को चुना। एटीवी-डी01 नाम के इस रॉकेट का पहली बार, मार्च 2010 में, परीक्षण किया गया था और तब इसने सात सैकेण्ड के लिए मैक 6 वेग बनाए रखा था। यह विश्लेषण करते समय स्क्रैमजैट के मॉड्यूल (इकाई) रॉकेट पर बँधे हुए थे, लेकिन इन मॉड्यूलों को सुलगाया नहीं गया था। इस परीक्षण ने दिखाया कि रोहिणी परिवार के रॉकेट रैमजैट/स्क्रैमजैट इंजनों को चालू करने के लिए ज़रूरी लगभग 80 किलोपास्कल का गतिशील दाब प्रदान करने में सक्षम थे। इसके बाद, 28 अगस्त 2016 के प्रारम्भिक घण्टों में, देश में बने दो दोहरी प्रणाली वाले रैमजैट-स्क्रैमजैट इंजनों को एक ठोस बूस्टर के साथ रोहिणी परिवार के दोहरे चरण वाले रॉकेट आरएच-560 पर बाँधा गया था। जब रॉकेट ने 20 किलोमीटर की ऊँचाई हासिल कर ली, तो स्क्रैमजैट इंजनों को चालू कर दिया गया, और उसकी लपट पाँच सैकेण्ड तक जली। इस परीक्षण की प्रारम्भिक पड़ताल ने दिखाया कि प्रोपल्जन तंत्र ने उड़ान की वांछित दशाओं को बनाए रखा, मैक संख्या (6+0.5) और गतिशील दाब (80+35 केपीए), दोनों के सन्दर्भ में। इसके अलावा, जैसी कि योजना थी, बूस्टर रॉकेट चरण के पूरा जलने और स्क्रैमजैट इंजनों के सक्रिय होने में 5 सैकेण्ड लगे। यह उड़ान के 55वें-60वें सैकेण्ड के दौरान, और 20 किलोमीटर की ऊँचाई पर हुआ। इसके बाद दूसरे चरण का जलना पूरा हुआ। ये दोनों बातें बताती हैं कि इसरो की दोहरी प्रणाली

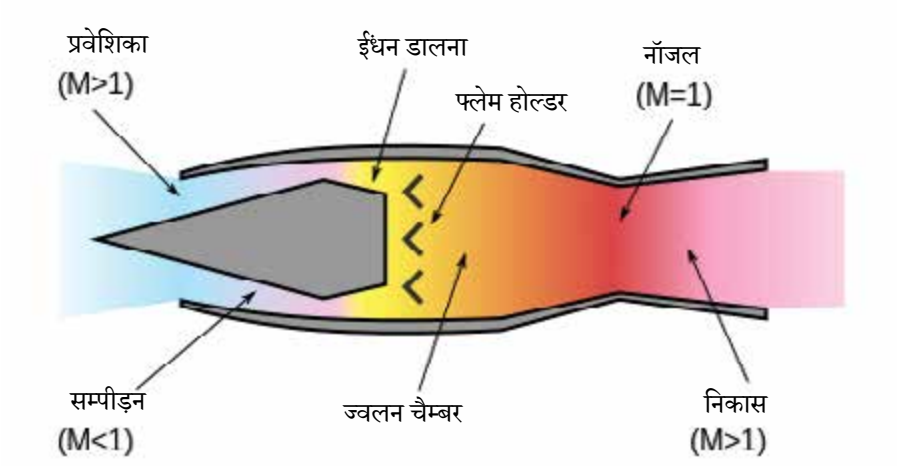

चित्र-4 : ज्वलन, लपट को बनाए रखना और सम्पीड़ित हवा के भीतर आने को सुनिश्चित करना स्क्रैमजैट के डिज़ाइन की कुछ बड़ी प्रौद्योगिकीय चुनौतियाँ हैं।
Credits: Cryonic07, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Ramjet_operation.svg. License: CC-BY-SA.

बॉक्स-3 : क्रायोजेनिक रॉकेट इंजन

क्रायोजेनिक रॉकेट इंजन वह होता है जो क्रायोजेनिक ईंधन या ऑक्सीकारक का उपयोग करता है, यानी, उसका ईंधन और/या ऑक्सीकारक बहुत कम तापमानों पर संग्रह की गई तरलीकृत गैस होते हैं।

वाले रैमजैट-स्क्रैमजैट इंजनों के उड़ान रूप में भी अच्छे से काम करने की अपेक्षा की जा सकती है।

भविष्य क्या है?

हालाँकि यह परीक्षण सफल रहा, लेकिन स्क्रैमजैट इंजनों को अर्जक भार (पेलोड) को अन्तरिक्ष ले जाने के लिए उपयोग किया जाने लगे, ऐसा होने के पहले हमें अभी मीलों और चलना बाक़ी है।

इसरो के सामने जो कुछ प्रमुख चुनौतियाँ हैं वे हैं सुपरसॉनिक कम्बस्टरों, हाइपरसॉनिक प्रवाह का अनुकरण करने के लिए गणना योग्य उपकरणों तथा बहुत तेज़ चालों पर होने वाले ज़बरदस्त कम्पन और बहुत ऊँचे तापमानों को झेलने में सक्षम नए पदार्थों की संरचना बनाना और उन्हें विकसित करना। दूसरी चुनौतियों में हाइपरसॉनिक इंजन द्वारा हवा को भीतर लेने, उड़ान की विभिन्न चालों के दौरान इंजन के प्रदर्शन और काम कर सकने की क्षमता, सही ताप प्रबन्धन, इंजनों के ज़मीनी परीक्षण इत्यादि को सुनिश्चित करना। उदाहरण के लिए, जहाँ वर्तमान परीक्षण का विश्लेषण सिर्फ़ लगभग मैक 6 की चाल पर किया गया था, वास्तव में इंजन का परीक्षण मैक 2-12 की बीच की विभिन्न चालों पर करने की ज़रूरत है। इसके अलावा, इस बात को ध्यान में रखते हुए कि गणकीय तरल यांत्रिकी उपकरण अभी हाल ही में परिपक्व हुए हैं, तो स्क्रैमजैट इंजनों की डिज़ाइन में सुधारों का परीक्षण प्रयत्न-त्रुटि पद्धति से ही किया जा सकता है। यह बात इस तथ्य से और पेचीदा हो जाती है कि दूसरे देश स्क्रैमजैट इंजनों

के बारे में उनके तकनीकी ज्ञान को इसरो से बाँटना नहीं चाहते क्योंकि इसे रणनीतिक प्रौद्योगिकी के रूप में देखा जाता है। इसका मतलब यह हुआ कि इसरो को अपना ख़ुद का पुनर्उपयोगी प्रक्षेपण यान बनाने के लिए स्वदेशी कार्यक्रम शुरू करना पड़ेगा।

अवतार नाम की इसरो की परियोजना का लक्ष्य है ऐसा रॉकेट विकसित करना है जिससे स्क्रैमजैट इंजन को अन्तरिक्ष में प्रक्षेपित किया जा सके। ये रॉकेट ऐसा होना चाहिए जो किसी लॉन्च पैड से लम्बवत ऊपर जा सके (पारम्परिक रासायनिक बूस्टर रॉकेट की मदद से), सुपरसॉनिक चाल से ऊँचा उठता जाए, स्क्रैमजैट इंजन को चालू करे और उसे पृथ्वी की निचली कक्षा की ओर प्रक्षेपित करे और वहाँ अन्तरिक्ष का पेलोड पहुँचाए, और फिर किसी हवाई पट्टी पर साधारण विमान की तरह उतर जाए। इस पूरी परियोजना की आकलित निर्माण लागत 35 करोड़ है, जिनमें से तीन करोड़ अगस्त 2016 में हुए परीक्षण पर ख़र्च किए गए थे।

जहाँ इसरो का लक्ष्य अन्ततः कक्षा तक एक चरण (एसएसटीओ) वाले प्रक्षेपण यान का उपयोग करना है, फ़िलहाल उसे कक्षा तक दो चरण (टीएसटीओ) वाले प्रक्षेपण यान का उपयोग करना स्वीकार्य है, जिसमें पहला चरण हवा को अन्दर खींचने का होता है। दूसरे चरण में, वांछित पृथ्वी की निचली कक्षा तक पेलोड को ले जाने के लिए एक निम्नतापिकी (क्रायोजेनिक) मोटर का उपयोग किया जाएगा। इसरो का इरादा टीएसटीओ के पहले चरण को पुनर्उपयोगी बनाना और उपग्रहों के प्रक्षेपण की लागत को आधा करना है।

23 मई 2016 को, इसरो ने एक हाइपरसॉनिक उड़ान का प्रयोग (या एचईएक्स1) किया जिसमें 'स्वदेशी अन्तरिक्ष शटल' नामक पुनर्उपयोगी प्रक्षेपण यान (आरएलवी) का प्रायोगिक तौर पर प्रक्षेपण किया गया, और आरएलवी से जुड़े, यान पर स्थापित मार्गदर्शक कम्प्यूटरों और ताप अवरोधी टाइलों के प्रदर्शन की जाँच की गई। परीक्षण उड़ान के अन्त में, यह अन्तरिक्ष यान बंगाल की खाड़ी में उतर गया। अगले प्रयोग में, जिसका नाम लैण्डिंग ऐक्सपेरीमेंट (उतरने का प्रयोग या एलईएक्स) है, इसरो एक तदनुकूल हवाई पट्टी पर आरएलवी को उतारने का प्रयास करेगा। यह हवाई पट्टी श्रीहरिकोटा हाई ऐल्टीट्यूड रेंज में बनवाई जाएगी। इसके बाद, आरएलवी और रोहिणी-स्क्रैमजैट मॉड्यूलों को एक ही मिशन में समाहित कर दिया जाएगा, और वापसी की उड़ानों के प्रयोग (आरईएक्स) के लिए ये स्क्रैमजैट इंजनों द्वारा लगातार संचालित होते रहेंगे। वायुमण्डल के परे, प्रणोदन के लिए आरएलवी को पाँच अर्ध-क्रायोजेनिक इंजनों के साथ फिट कर दिया जाएगा। इन सभी चरणों का परीक्षण हो जाने, और एक-दूसरे के साथ दोषरहित ढंग से समेकित किए जाने के बाद ही इस तंत्र को पेशेवर प्रक्षेपण के लिए इस्तेमाल किया जाएगा। इसरो द्वारा किए गए आकलन दर्शाते हैं कि हम साल 2030 के आस-पास, स्क्रैमजैट इंजनों वाले टीएसटीओ प्रक्षेपण यान का इस्तेमाल करके अन्तरिक्ष मिशन को अंजाम दे सकेंगे।

एक स्क्रैमजैट द्वारा संचालित आरएलवी पृथ्वी की निचली कक्षा तक क़रीब 10000-20000 किलोग्राम का पेलोड ले जा सकता है। जबकि सबसे ज़्यादा विकसित, पारम्परिक इसरो प्रक्षेपण यान जीएसएलवी एमके-3 सिर्फ़ 8000 किलोग्राम पेलोड ही ले जा सकता है, और स्पेसएक्स के प्रतिद्वन्द्वी फाल्कन 9 रॉकेट के इसी कक्षा तक 13000 किलोग्राम पेलोड ले जाने की सम्भावना है। ये भविष्यवादी पुनर्उपयोगी प्रक्षेपण यान हवा को भीतर खींचने वाले अपने प्रणोदन से अन्तरिक्ष के प्रक्षेपण को किफ़ायती बनाएँगे। वर्तमान में, जहाँ एक किलोग्राम पेलोड के प्रक्षेपण की लागत क़रीब 5000 अमरीकी डॉलर पड़ती है, इसरो का आकलन है कि उसका आरएलवी लागत को गिराकर 2000 अमरीकी डॉलर प्रति किलोग्राम कर देगा।

हालाँकि कुछ विशेषज्ञ इसरो की इस प्रसन्नता पर सवाल खड़ा करते हैं, और दावा करते हैं कि लागत में कमी का उनका विश्लेषण बहुत स्पष्ट नहीं है। 2006 के नासा के एक तकनीकी दस्तावेज़ में यह चेतावनी दी गई "आम धारणा यह है कि पुनर्उपयोगी और एक बार उपयोग होने वाले प्रक्षेपण यान के बीच चुनाव दरअसल पुनर्उपयोगी यान की कमतर आवर्ती लागतों और एक बार उपयोग किए जाने वाले यान की अनावर्ती लागतों के बीच अदला-बदली है।" औसतन, इस्तेमाल करके फेंके जाने वाले प्रक्षेपण यानों की विश्वसनीयता लगभग 95% है, जिसका मतलब है कि औसतन हर 20 में से 1 प्रक्षेपण यान विफल हो जाता है। लेकिन, पुनर्उपयोगी प्रक्षेपण यान का सुरक्षित होना ज़रूरी है यदि उसे बनाने वालों को उसे विकसित करने के लिए ज़रूरी ज़्यादा निवेश को न्यायोचित ठहराना है। इसके अलावा, जब आरएलवी उड़ान भरेगा, अन्तरिक्ष में पहुँचेगा, और फिर पृथ्वी के वायुमण्डल में कई बार वापस दाखिल होगा, तो उसे विकसित क़िस्म की ताप प्रतिरोधी कवचों (शील्ड) की ज़रूरत पड़ेगी, जिससे यह परियोजना प्रौद्योगिकीय रूप से अधिक चुनौतीपूर्ण हो जाती है। नासा का दस्तावेज़ यह दावा करता है कि "पुनर्उपयोगी प्रक्षेपण यानों (आरएलवी) बनाम एक बार उपयोग किए जाने वाले प्रक्षेपण यानों (ईएलवी) की दशकों लम्बी बहस तार्किक बहस कम और उपयोग करके फेंके जाने वाले प्रचलित रॉकेटों की बजाय पुर्नउपयोगी प्रक्षेपण यान बनाने का दीर्घकालीन तर्क ज़्यादा रही है।"

लेकिन, इसरो द्वारा प्रस्तावित, एक बार उपयोग किए जाने वाले बूस्टरों और एक पुनर्उपयोगी यान का इस्तेमाल करने वाले

पुनर्उपयोगी संकर यान विकसित करने का अर्थशास्त्र काफ़ी अलग है। इसरो प्रमुख ए. एस. किरण अभी भी आशावादी हैं, और उनका कहना है, "सिद्धान्तः अगर लागत 50% भी कम हो जाती है, तो इसे करना चाहिए। इसे पुनः प्राप्त करने के संचालन और क्रियान्वयन इत्यादि को मद्देनज़र रखते हुए, यह जितनी भी लागत कम कर सके वही अच्छा होगा।"

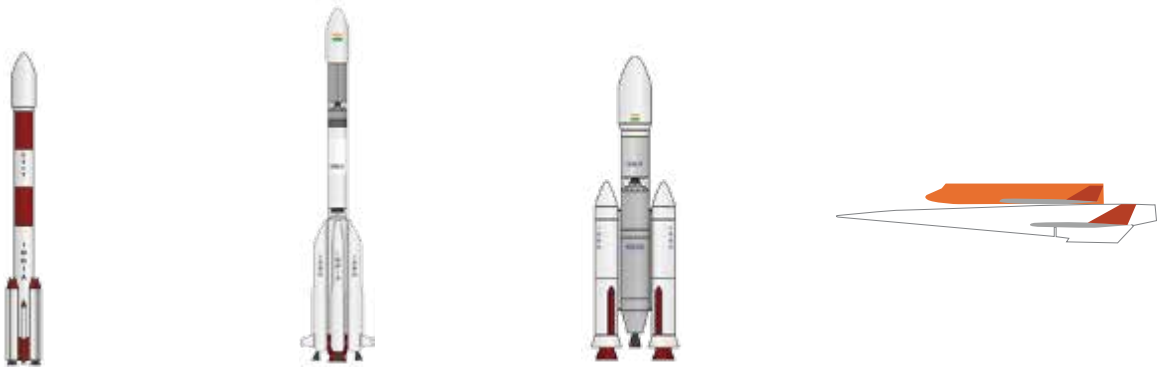

चित्र -5 : स्क्रैमजैट इंजन, वर्तमान में लगे इसरो के प्रक्षेपण यानों में एक मूल्यवान वृद्धि है।

Note: Credits for the image used in the background of the article title: US Air Force, Wikimedia Commons. URL: https://en.wikipedia.org/wiki/Boeing_X-51#/media/File:X-51A_Waverider.jpg. License: Public Domain.

डॉ. टी वी वेंकटेश्वरन विज्ञान प्रसार, विज्ञान व प्रौद्योगिकी विभाग, नई दिल्ली में वैज्ञानिक हैं। वे विज्ञान से जुड़े विषयों पर लिखते हैं। उन्होंने विज्ञान की 25 से भी ज़्यादा लोकप्रिय किताबें और 300 लेख लिखे हैं। वे विज्ञान के टीवी शो भी करते हैं, प्रशिक्षण कार्यक्रमों के लिए स्रोत व्यक्ति के रूप में उपलब्ध रहते हैं। उनसे tvv123@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।
अनुवाद : भरत त्रिपाठी

क्यों महत्त्वपूर्ण है विज्ञान?

अनिल कुमार चल्ला और रीतिका सूद

विज्ञान ज्ञान का केवल एक भण्डार नहीं है, वह सोचने-समझने का एक तरीक़ा है। विद्यार्थियों में वैज्ञानिक सोच का विकास करने का उद्देश्य हमारे लिए सर्वोपरि होना चाहिए। यदि विद्यार्थी विज्ञान के अध्ययन की आवश्यकता को लेकर भ्रमित हैं तो उनके प्रति हमारी प्रतिक्रिया उन चमत्कारिक उपकरणों और वैज्ञानिक प्रगति के माध्यम से जीवन में लाई गई सुगमता से परे जाकर होनी चाहिए।

प्राकृतिक जगत के समस्त पहलुओं के व्यवस्थित रूप से अध्ययन के सन्दर्भ में 'विज्ञान' शब्द का आधुनिक उपयोग किया जाता है। सम्भवतया इसका सबसे अच्छा उदाहरण दक्षिण अफ़्रीका के मूल निवासी सान नामक शिकारी आदिवासी हैं। वे शिकार की शुरुआत अवलोकन से करते हैं (रेत में पैरों के निशान आदि), फिर एक परिकल्पना बनाई जाती है (शिकार किस दिशा में गया होगा), क्रियावन्यन की योजना बनाई जाती है (शोधकार्य की विधियों के बराबर) और इस पर तब तक अमल किया जाता है जब तक कोई विरोधाभासी प्रमाण (एक के ऊपर एक अतिच्छादित पैरों के निशान) न मिल जाएँ। इस बिन्दु पर एक वैकल्पिक परिकल्पना बनाई जाती है। यद्यपि 'सभ्य समाज' में हमें मिली शिक्षा से सान मीलों (अक्षरशः और लाक्षणिक रूप से) दूर हैं, फिर भी हम उनकी क्रियाओं में किसी भी वैज्ञानिक पड़ताल में अपनाई गई विधियों की झलक देख सकते हैं :

अवलोकन -> परिकल्पना -> प्रायोगिक विधियाँ (परिकल्पना को जाँचने के लिए) -> परिणामों का अभिलेखन -> परिणामों का विश्लेषण (वे परिकल्पना का समर्थन करते हैं या विरोध) -> यदि परिणाम विरोधाभासी हैं तो वैकल्पिक परिकल्पना बनाकर उसका अनुसरण करना।

इस प्रक्रिया से विज्ञान की प्रगति किस प्रकार होती है? विज्ञान की विधि का इतिहास छह नेत्रहीन व्यक्तियों द्वारा हाथी[1] का विवरण दिए जाने की प्राचीन कहानी से कुछ मिलता-जुलता है। हर व्यक्ति हाथी के एक भाग को छूकर यह जानने की कोशिश कर रहा है कि हाथी क्या होता है। ऐसा करने पर एक व्यक्ति हाथी के कान को छूकर पंखे

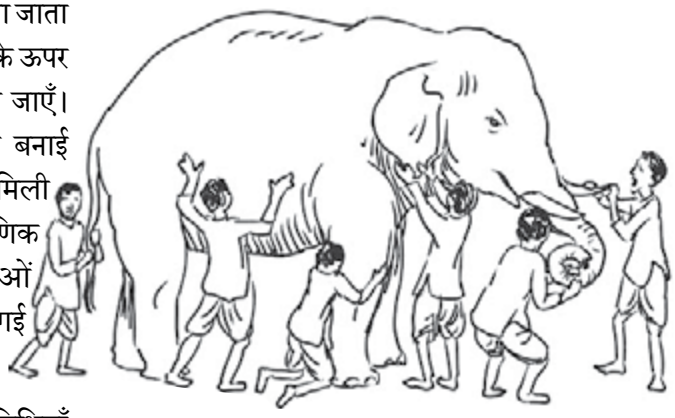

चित्र – 1 : छह नेत्रहीन व्यक्ति और हाथी।
Credits: Timeless Truths Publications. URL: http://library.timelesstruths.org/texts/Treasures_of_ the_Kingdom_41 / The_Blind_Men_and_the_Elephant/. License: Used with permission of the rights owner.

के समान बता रहा है, दूसरा उसके पैर को छूकर उसे खम्भे के समान बता रहा है तो तीसरा हाथी की पूँछ पकड़कर कह रहा है कि हाथी तो रस्सी के समान होता है आदि। इसी प्रकार, विभिन्न वैज्ञानिक, विभिन्न देशों में, यहाँ तक कि विभिन्न कालखण्डों में, मूल रूप से यही विधि अपनाकर विभिन्न प्रश्नों के उत्तर खोजते रहे हैं और खोज रहे हैं। कालान्तर में इस प्रक्रिया से ज्ञान का एक संचय बनता जाता है। पाठ्यपुस्तकों में जो लिखा होता है उसके विपरीत, पहले अवलोकन के बाद का पथ शायद ही कभी सीधी रेखा में चलता हो। यही कारण है कि केवल पाठ्यपुस्तकों तक सीमित रहने से ग़लत धारणाएँ बन सकती हैं।

हम विज्ञान की इस पुनरावृत्ति वाली (महज़ दोहराने वाली) प्रकृति की क्यों परवाह करें? जब विद्यार्थियों से जीवविज्ञान के पाठ्यक्रम में शामिल विषयों की समझ के बारे में प्रश्न पूछे जाते हैं, उदाहरण के लिए कोशिका सिद्धान्त, तो वे सिद्धान्त के केन्द्रीय मूल तत्वों को दोहरा देते हैं, किन्तु वे इस तथ्य से अपरिचित होते हैं कि यह सिद्धान्त 300 वर्षों के शोधकार्य का निष्कर्ष है (देखें 'The wacky history of Cell Theory' at http://ed.ted.com/ lessons/the-wacky-history-of-celltheory) जिसमें विज्ञान की कई शाखाओं (वनस्पतिविज्ञान, जन्तुविज्ञान, भौतिकशास्त्र, रसायनशास्त्र और गणित) से जुड़े वैज्ञानिकों ने योगदान दिया है। वैज्ञानिक प्रक्रिया की प्रकृति समझने में असफल होने पर विद्यार्थियों की विज्ञान की समझ पर इसके कई परिणाम हो सकते हैं जिनमें वैज्ञानिकों के प्रति निपट अविश्वास से लेकर उनकी प्रत्यक्ष आलोचना तक शामिल है। आमजन में वैज्ञानिकों के प्रति अविश्वास की भावना कई विषयों - जलवायु परिवर्तन और आनुवंशिक रूप से परिवर्तित फ़सलों से लेकर बच्चों के टीकाकरण तक - को लेकर समय-समय पर उभरती रहती है। ऐसे हर प्रकरण में एक ही मुद्दे के दोनों पक्षों को सुनने को विशेषज्ञों में 'ज्ञान का अभाव' है के ग़लत अर्थ में समझा जा सकता है (और अक्सर समझा जाता है)। इस लेख में हमारा दावा है कि यह अविश्वास जीवन

तथ्य या कपोल-कल्पना?

क्या ठण्डे मौसम के कारण जुकाम हो जाता है?

जुकाम का कारण एक वायरस होता है जो नाक के अन्दर स्थित श्लेष्मा झिल्ली को संक्रमित कर देता है। 60 के दशक में वैज्ञानिकों ने पाया कि ठण्डे मौसम में इस वायरस की संख्या तेज़ी-से बढ़ती है। किन्तु यह पता नहीं था कि ऐसा क्यों होता है। 2015 में जापान के वैज्ञानिकों ने पता लगाया कि ऐसा इसलिए नहीं होता कि वायरस के लिए ठण्डा मौसम अधिक अनुकूल होता है, अपितु इसलिए कि हमारी प्रतिरक्षा प्रणाली ठण्डे मौसम में लड़खड़ा जाती है। वह क्यों लड़खड़ा जाती है यह अभी भी एक खुला सवाल बना हुआ है।

क्या जुकाम होने पर हमें प्रतिजैविक (एन्टी बायोटिक) लेना चाहिए?

प्रतिजैविक (प्रति = विरोध, जैविक = जीवन से सम्बन्धित) केवल कीटाणुओं (बैक्टीरिया) को नष्ट करते हैं। जुकाम का कारण वायरस होता है और प्रतिजैविक वायरस पर कोई असर नहीं डालते।[2]

चित्र-2 : कहाल और गॉल्जी। (क) सॅन्टिआगो रॅमन वाय कहाल 'जीवविज्ञान पर शोधकार्य की प्रयोगशाला' (Laboratorio de Investigaciones Biológicas) के पुस्तकालय में (लगभग 1930)। ऊपर बाईं ओर हेल्महोल्ट्ज गोल्ड मेडल का चित्र है जो एक विख्यात पुरस्कार था और जिसे लेकर उन्हें विशेष गर्व था। कहाल अपने देश में बहुत लोकप्रिय थे जैसा कि 50 पेसेटा के नोट पर छपे उनके चित्र से स्पष्ट है (नीचे, बाएँ)। (ख) कॅमिलो गॉल्जी द्वारा उपयोग में लाया गया एक सूक्ष्मदर्शी, कुछ रंजक और ऊतक विज्ञान से सम्बन्धित कुछ उपकरण। इन्हें इटली के पाविया विश्वविद्यालय के संग्रहालय में सुरक्षित रखा गया है (ऊपर बाएँ)। गॉल्जी भी स्वयं के देश में एक लोकप्रिय वैज्ञानिक थे। उनके द्वारा की गई खोज संसेचन विधि (reazionenera) की शताब्दी के उपलक्ष्य में पाविया विश्वविद्यालय द्वारा जारी किए गए स्मारक टिकिट में यह देखा जा सकता है (नीचे बाएँ)।

Credits: Juan A. De Carlos, José Borrell from the article - A historical reflection of the contributions of Cajal and Golgi to the foundations of neuroscience. Brain Research Reviews 55 (2007) 8-16.
URL: http://hobertlab.org/wp-content/uploads/2013/03/DeCarlos_2007.pdf. License: Used with permission of the rights owner.

भर विज्ञान को 'तथ्यों के एक संकलन' के रूप में सीखने से जुड़ा हुआ है। यह समझने के लिए कोई प्रयास नहीं किया जाता कि ये तथ्य, जिन्हें और जिस स्वरूप में हम जानते हैं, कैसे जुटाए जाते हैं। वैज्ञानिक समुदाय द्वारा स्वीकार किए जाने से पहले नए ज्ञान की व्याख्या पर अक्सर बहुत बहस होती है। यदि हम विज्ञान को केवल उत्तरों (या तथ्यों) की एक सूची के रूप में देखें तो खुले प्रश्न पूछना बेचैन करने वाला हो सकता है, जैसा जलवायु परिवर्तन के मामले में हुआ है। क्या वैश्विक तपन (global warming) का वर्तमान संकट प्राकृतिक है? या यह मानव-निर्मित है? इसमें से सही क्या है?

विज्ञान, ज्ञान के एक भण्डार से कुछ बढ़कर है - वह सोचने का एक तरीक़ा है। विद्यार्थियों में वैज्ञानिक सोच विकसित करना हमारा सर्वोपरि उद्देश्य होना चाहिए। विद्यार्थियों के जीवन में लोककथाएँ और उपाख्यान 'अपरिवर्तनशील तथ्यों' के रूप में स्थान पा सकते हैं बजाय ऐसी कल्पनाओं के जिनका परीक्षण किया जा सकता है। विज्ञान की कक्षाओं में बिताए गए समय में उन्हें ऐसे साधनों से लैस किया जाना चाहिए जिनसे वे सुनी हुई कहानियों का समालोचनात्मक विश्लेषण कर सकें। उन्हें 'सामान्य ज्ञान' के ऐसे कथनों पर सवाल उठाना आना चाहिए कि 'ठण्डे मौसम के कारण आपको जुकाम हो सकता है' या 'मनुष्य का शरीर शाकाहारी जीवनशैली के लिए बना है'। विज्ञान की कक्षाओं में उन्हें ऐसे सवाल उठाने के साधन और समालोचनात्मक विश्लेषण करने के कौशल दिए जाने चाहिए।

विज्ञान का इतिहास ऐसे उदाहरणों से पटा पड़ा है जो इंगित करते हैं कि हमारा ज्ञान सीमित है और यह रेखांकित करते हैं कि विज्ञान का तथ्यात्मक ज्ञान समय के किसी निश्चित बिन्दु पर उपलब्ध साधनों पर निर्भर होता है। तंत्रिका विज्ञान के इतिहास के एक रोचक उदाहरण से यह रेखांकित होता है कि साधनों के परिष्कृत होने से ज्ञान किस प्रकार बढ़ता है। इटली के वैज्ञानिक कॅमिलो गॉल्जी ने जीवविज्ञान के क्षेत्र में अमूल्य योगदान दिया जिसमें मस्तिष्क के ऊतक को दृश्य बनाने की तकनीक शामिल है, जिसे उन्होंने 1873 में पहली बार विकसित किया। यद्यपि कोशिका सिद्धान्त के आधार तत्व 1838-39 से व्यापक रूप से ज्ञात थे, यह किसी ने नहीं सोचा था कि ये तंत्रिका तंत्र की कोशिकाओं पर भी लागू होते हैं। इसके स्थान पर एक वैकल्पिक स्पष्टीकरण, जालक सिद्धान्त (reticular theory), ज़ोर पकड़ रहा था। इसके अनुसार तंत्रिका तंत्र ऐसे सलंग तन्तुओं (continuous Fibres) से बना है जो एक जटिल जालक बनाते हैं। गॉल्जी की विधि से वे तंत्रिका कोशिकाओं को उनकी समग्रता में देख सके। किन्तु बहुत अधिक शाखित झिल्लियों को देखकर उन्हें भी ऐसा लगा कि जालक सिद्धान्त में कुछ तथ्य है (अब हम जानते हैं कि शाखित भाग तंत्रिका कोशिकाओं से निकले हुए प्रवर्धपार्श्वतन्तु (dendrites) होते हैं।) कुछ वर्षों बाद स्पेन के वैज्ञानिक सॅन्टिआगो रॅमन वाय कहाल ने गॉल्जी की विधि में उल्लेखनीय सुधार किए। इसके परिणामस्वरूप तंत्रिका कोशिकाओं के संरचनात्मक लक्षण और मस्तिष्क के विभिन्न भागों में उनके संघटन उन्हें एकदम स्पष्ट हो गए। उन्होंने अपने परिणामों को सबसे पहले 1888 में प्रकाशित किया जिससे 'तंत्रिका कोशिका सिद्धान्त' की पुष्टि हुई जिसके अनुसार शरीर के अन्य किसी भी ऊतक के समान मस्तिष्क का ऊतक भी अलग-अलग कोशिकाओं से बना है और यह कोशिका सिद्धान्त का अपवाद नहीं था जैसा जालक सिद्धान्त के समर्थक (जिनमें गॉल्जी भी शामिल थे) सोचते थे। दोनों की व्याख्याएँ एक-दूसरे के विरोधी होने के बावजूद गॉल्जी और कहाल दोनों ने तंत्रिका विज्ञान की नींव रखी और उन्हें 1906 में संयुक्त रूप से चिकित्सा के क्षेत्र में नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

खोजें *कैसे* की जाती हैं[3] इस बारे में कहानियों को पाठ्यक्रम में शामिल करने पर विद्यार्थी उस व्यापक सन्दर्भ से परिचित हो जाते हैं जो पाठ्यक्रम के अनुरूप होता है। वैज्ञानिकों द्वारा अपनी जिज्ञासा का अनुसरण करते हुए महत्त्वपूर्ण खोजें किस प्रकार की जाती हैं, इस बारे में कही गई कहानियाँ विद्यार्थियों की जिज्ञासा को जागृत करने के लिए एक बेहतर तरीक़ा हो सकती हैं। इस रणनीति से विद्यार्थियों का ध्यान विषय पर अधिक अच्छी तरह केन्द्रित किया जा सकता है क्योंकि हमारे मस्तिष्क किताबों से पढ़े गए तथ्यों की तुलना में कहानियों से अधिक अच्छी तरह जुड़ पाते हैं।

विज्ञान की प्रक्रिया से विद्यार्थियों को अवगत कराने का एक अन्य तरीक़ा है उन्हें वे प्रयोगशालाएँ दिखाने के लिए ले जाना जहाँ शोधकार्य हो रहा हो। इससे विद्यार्थी न केवल विज्ञान की कार्यप्रणाली देख पाएँगे अपितु वैज्ञानिकों के साथ बातचीत करके वे क्या करते हैं, क्यों करते हैं, इसी समस्या को क्यों चुना, आदि प्रश्न भी पूछ पाएँगे। उद्देश्य यह नहीं है कि वे सभी भविष्य में वैज्ञानिक बन जाएँ, किन्तु यह है कि वे भविष्य के ऐसे नागरिक बन जाएँ जो वैज्ञानिक दृष्टि से शिक्षित हों। विज्ञान की शिक्षा से विद्यार्थियों की स्वयं के बारे में, उनके पर्यावरण के बारे में, उनके समुदाय और पारिस्थितिकी तंत्र के बारे में, और कुल मिलाकर अपने ग्रह के बारे में समझ विकसित हो सकती है।

इस प्रकार विद्यार्थियों को वास्तविक जीवन में उपजने वाले प्रश्नों (क्या आनुवंशिक रूप से परिवर्तित भोजन हमारे लिए सुरक्षित है? क्या भारतीयों को औषधि-प्रतिकारक जीवाणुओं से संक्रमण के बारे में चिन्तित होना चाहिए? क्या जलवायु परिवर्तन मानव निर्मित है या पृथ्वी के इतिहास में होने वाले प्राकृतिक परिवर्तनों का परिणाम है?) से जूझने में सहायता मिल सकती है।

हमारी समझ की स्पष्टता हमें उपलब्ध साधनों की गुणवत्ता पर निर्भर करती है। जैसे-जैसे युवा मस्तिष्क जीवन से परिचित होते जाते हैं और यह सीखते हैं कि उनके आस-पास स्थित चीज़ें/घटनाएँ कैसे काम करती हैं, यह तार्किक है कि उनके पास प्रभावी साधन हों। प्रश्न यह है कि क्या हम आज के विद्यार्थियों को आने वाले कल की चुनौतियों का सामना करने के लिए सबसे अच्छे साधन दे रहे हैं? निरन्तर संशोधित और विकसित साधनों के माध्यम से मानव समझ को सक्षम बनाने के लिए विज्ञान आवश्यक है। और इसीलिए विज्ञान महत्त्वपूर्ण है।

Note: Credits for the image used in the background of the article title: Stained culture of rat brain cells. GerryShaw, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Culture_of_rat_brain_cells_stained_with_antibody_to_MAP2_(green),_Neurofilament_(red)_and_DNA_(blue).jpg. License: CC-BY-SA.

Further readings:

1. Wikipedia contributors. "Blind men and an elephant." Wikipedia, The Free Encyclopedia. Web. 4 Nov 2016. URL: https://en.wikipedia.org/wiki/Blind_men_and_an_elephant.
2. Dworkin, B. 2003. Why antibiotics don't kill viruses. Web. 4 November 2016. URL: http://www.drbarrydworkin.com/articles/medicine/infectious-disease-articles/microbiology-101-why-antibiotics-dont-kill-viruses/
3. The story behind the science. Web. 4 November 2016. URL: https://www.storybehindthescience.org/.

अनिल कुमार चल्ला बर्मिंघम (संयुक्त राज्य अमेरिका) में स्थित अलाबामा विश्वविद्यालय के आनुवंशिकी विभाग में प्रशिक्षक हैं। झेब्राफिश का मॉडल के रूप में उपयोग करते हुए उन्होंने आणविक और परिवर्धन आनुवंशिकी में डॉक्टरेट की है। झेब्राफिश के अलावा चूहों पर भी उनका शोधकार्य जारी है। स्नातक जीवविज्ञान शिक्षा और विस्तार शिक्षा से भी वे जुड़े हुए हैं। उनसे challa.anilkumar@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

रीतिका सूद इण्डिया बायोसाइंस में शिक्षा संयोजक हैं। पेशे से तंत्रिका वैज्ञानिक, रीतिका विज्ञान सम्प्रेषण को लेकर बहुत उत्साहित हैं। उनसे reeteka@indiabioscience.org पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** भरत त्रिपाठी

कचरे से ख़ज़ाना : सोने की खदान आपके बग़ीचे में

राधिका पद्मनाभन

शहरों में यहाँ तक कि कस्बों में भी कचरे के निपटान की समस्याएँ बढ़ती ही जा रही हैं। इसके साथ ही निरन्तर बढ़ती भोजन की कमी से मुक़ाबला करने में जैव उर्वरकों की बढ़ती भूमिका की स्वीकारोक्ति भी बढ़ रही है। इन दोनों के बीच अन्तर्सम्बन्धों को हम कैसे समझ सकते हैं? क्या कचरा एक संसाधन हो सकता है? इस लेख में लेखिका यह जानकारी साझा करती हैं कि कैसे उनके स्कूल ने कचरे के पुनर्चक्रीकरण की जाँची-परखी तकनीक का उपयोग कर कचरे को कम्पोस्टिंग के माध्यम से भोजन में बदला है।

जनसंख्या विस्फोट, तीव्र औद्योगिकीकरण और उपभोग जनित जीवनशैली ने औद्योगिक और घरेलू दोनों प्रकार के कचरे की मात्रा और संघटन में बड़े बदलाव किए हैं। इस कचरे से निपटने के लिए टिकाऊ और कारगर तरीक़े खोजना एक महत्त्वपूर्ण चुनौती बन गया है। कचरे की मात्रा में विशाल बढ़ोतरी के साथ ही हम उसके निपटान के लिए ऊर्जा, भूमि और पानी की कमी से भी जूझ रहे हैं। साथ ही कचरे के निपटान हेतु जो कचरा भराव स्थल उपलब्ध हैं वह जमा हुए सड़ते कचरे से पहले से ही भरे पड़े हैं। पिछले तीन दशकों में ग़ैर-जैवनिम्नीकरणीय सामग्री जैसे प्लास्टिक और काँच के बढ़ते उपयोग से यह समस्या और गहरा गई है। उदाहरण के तौर पर घरेलू कचरे में अकेले प्लास्टिक का प्रतिशत जो 1971 में 0.7% था, 2005 में बढ़कर 9.22% हो गया है।

चित्र-1 : कचरा भराव स्थल जल और थल दोनों को प्रदूषित करते हैं।

Credits: Ted Mathys, 2009 AP Fellow. Location: Delhi, India. Partner: Chintan. URL: https://www.flickr.com/photos/advocacy_project/3638204454. License: CC-BY -NC-SA.

चित्र-2 : भोजन से उत्पन्न 'कचरा' एक संसाधन है, कचरा बिलकुल नहीं।
Credits: Smabs Sputzer. URL: https://www.flickr.com/photos/10413717@N08/3927456430. License: CC-BY.

चित्र-3 : कम्पोस्टिंग विधि : (अ) ऐल्युमीनियम जाली युक्त बक्से (ब) हरे नारियल के खोल की बिछावन (स) मिट्टी के साथ केंचुएँ (द) सूखी पत्तियों का आवरण।
Credits: Pawar Public School, Bhandup. License: CC-BY-NC.

क्या आप जानते हैं कि खाद बनाने की नई विधियाँ भारत में ही विकसित हुईं?

यह जानना दिलचस्प है कि खाद बनाने के बीज भारत में ही बोए गए थे। एक ब्रिटिश कृषि विशेषज्ञ सर अल्बर्ट हावर्ड 1905 में भारत आए और लगभग 30 वर्षों तक जैविक कृषि और बाग़वानी पर कार्य कर उन्होंने पाया कि एक अच्छे कम्पोस्ट में अन्य खाद की तुलना में 3 गुना ज़्यादा कार्बनिक पदार्थ (पौध सामग्री) होता है। इस प्रकार के कम्पोस्ट में विघटनशील सामग्री की सैण्डविच की तरह परत बनाई जाती है और विघटन के दौरान उसे पलटा जाता है। (यह विधि इन्दौर विधि के नाम से जानी जाती है) उन्होंने अपने काम के नतीज़ों को 1943 में 'एन एग्रीकल्चर टेस्टामेण्ट' के नाम से किताब के रूप में प्रकाशित किया। इस किताब ने जैविक खेती (आर्गेनिक फार्मिंग) की विधियों में फिर से रुचि जगाई। इस कार्य से उन्हें 'आधुनिक युग की जैविक खेती एवं बाग़वानी के पिता' के रूप में ख्याति प्राप्त हुई।

इस सन्दर्भ में कम्पोस्टिंग का महत्त्व और अधिक बढ़ जाता है। सरल शब्दों में, कम्पोस्टिंग का मतलब कार्बनिक कचरे जैसे पौधों के अवशेष का जीवाणु (बैक्टीरिया), फफूँद और केंचुए जैसे अन्य जीवों द्वारा (ऑक्सीजन की उपस्थिति में) नियंत्रित रूप से जैविक विघटन होता है। इस प्रक्रिया का अन्तिम उत्पाद कम्पोस्ट है जिसका उपयोग खाद के रूप में बग़ीचे की मिट्टी की उर्वरा शक्ति को फिर से बढ़ाने तथा सुरक्षित एवं स्वास्थ्यप्रद भोजन उगाने में किया जा सकता है। इस तरह एक विकेन्द्रीकृत कम्पोस्टिंग व्यवस्था में घरेलू कचरे में उपस्थित जैव निम्नीकरणीय कार्बनिक पदार्थों से निपटने के एक टिकाऊ हल के रूप में असीम सम्भावना है।

तेज़ी-से बदलती आज की इस दुनिया में शैक्षणिक संस्थानों की भूमिका महत्त्वपूर्ण है। आज विज्ञान का केवल अध्यापन अपने आप में पर्याप्त नहीं है। स्कूलों को चाहिए कि वह बच्चों को यह सीखने के अवसर उपलब्ध कराएँ कि कैसे वे विज्ञान का प्रायोगिक तौर पर उपयोग कर अपने लिए और समाज के लिए एक ज़्यादा टिकाऊ और सुरक्षित भविष्य निर्मित कर सकते हैं। स्कूल में प्रायोगिक रूप से कम्पोस्ट बनाने के प्रयासों में शामिल करने से बच्चों को अपने कार्यों व नज़दीकी पर्यावरण पर उसके प्रभावों के अन्तर्सम्बन्धों को समझने में मदद मिलती है। उदाहरण के लिए, वे यह देखेंगे कि किस प्रकार कार्बनिक पदार्थों को इधर-उधर फेंकने से प्रदूषण उत्पन्न होता है जबकि कम्पोस्टिंग के जरिए उनके पुनर्चक्रीकरण से वे महत्त्वपूर्ण संसाधन बन जाते हैं। विद्यार्थी अक्सर कम्पोस्टिंग के बारे में जागरूकता फैलाने में भी ज़्यादा मददगार साबित होते

केंचुओं की भूमिका

हम में से अधिकांश लोग यह जानते हैं कि केंचुएँ मिट्टी की जलधारण क्षमता और पोषक पदार्थों को धारण करने के गुणों को बढ़ाकर मिट्टी की संरचना सुधारते हैं। पर, इतना ही काफ़ी नहीं! क्या आप जानते हैं कि यह बहुत अधिक भुक्कड़ क़िस्म के जीव हैं जो सभी प्रकार के जैव विघटनशील पदार्थों को खा जाते हैं? जो वे खाते हैं उसका एक हिस्सा अधपचे पदार्थ के रूप में उत्सर्जित करते हैं जिसे वर्मी-कास्टिंग कहा जाता है। यह वर्मी-कास्टिंग खाद का एक उम्दा स्रोत सिद्ध हुई है, जो पौधों को कई प्रकार के वृद्धिकारक पदार्थ एवं आवश्यक पोषक पदार्थ उपलब्ध कराती है।

हैं। इस प्रक्रिया के दौरान उन्होंने स्कूल में जो सीखा है वे उसे अपने परिवारों और समाज में बाँटकर, जिसके वे एक महत्त्वपूर्ण हिस्से हैं, ऐसा कर सकते हैं।

स्कूल परिसर में जैविक खाद बनाना

हमने महाराष्ट्र के भाण्डुप स्थित, पवार पब्लिक स्कूल की कैंटीन में बने जैविक कचरे (ग्रीन वेस्ट) और बग़ीचे की सूखी पत्तियों से वर्मीकम्पोस्ट बनाने का एक प्रकल्प शुरू किया है। यह प्रकल्प सफल, किफ़ायती और सबसे महत्त्वपूर्ण, कचरे से निपटने का एक टिकाऊ तरीक़ा साबित हुआ है।

हम हमारे कचरे से लकड़ी के दो बक्सों में कम्पोस्ट बनाते हैं जिनमें ऐल्युमीनियम की जाली (हवा आने-जाने के लिए) और धातु का ढक्कन लगा होता है। प्रत्येक बक्से में हरे नारियल के खोल का एक बिस्तर बिछाते हैं, जिस पर केंचुओं के साथ थोड़ी मिट्टी की एक परत बिछाई जाती है। इसके बाद इसे स्कूल के बग़ीचे से प्राप्त सूखी पत्तियों से ढँक दिया जाता है। बक्सों को एक हरे कपड़े से भी ढँका जाता है ताकि इसमें रखे पदार्थ धूप में अत्याधिक सूखने से बचे रहें। इसके अतिरिक्त प्रतिदिन इस सामग्री में थोड़ा पानी डाला जाता है ताकि बक्से में रखी मिट्टी पर्याप्त रूप से गीली बनी रहे और सूक्ष्मजीव व केंचुएँ अपना कार्य प्रभावी रूप से करते रहें।

कम्पोस्टिंग हमारे प्रतिदिन के कार्य का एक हिस्सा है। प्रतिदिन जैविक कचरे (कैंटीन का कचरा, बग़ीचे की सूखी पत्तियाँ और फूल) को तौला जाता है, उसका वज़न दर्ज किया जाता है और फिर इन बक्सों में डाला जाता है। इन दोनों बक्सों से कम्पोस्ट क्रमबद्ध तरीक़े से निकाला जाता है। प्रत्येक चक्र में प्राप्त कम्पोस्ट को तौला जाता है और

चित्र-4 : कम्पोस्टिंग करते विद्यार्थी (अ) स्कूल के माली के साथ विद्यार्थी जैविक कचरे और फूलों को कम्पोस्ट पात्र में डालते हुए। (ब) खाद को तौलते हुए।
Credits: Pawar Public School, Bhandup. License: CC-BY-NC.

चित्र-5 : कम्पोस्ट - एक माली की ख़ुशी का सबब।
Credits: Pawar Public School, Bhandup.
License: CC-BY-NC.

चित्र-6 : कम्पोस्ट के उपयोग (अ) स्कूल के बग़ीचे में कम्पोस्ट का उपयोग करना (ब) भोजन से निकले कचरे से खाद्य फ़सलों को उगाना।
Credits: Pawar Public School, Bhandup. License: CC-BY-NC.

पुनर्चक्रण करने और कम्पोस्ट बनाने के पाँच कारण

1. **कचरे का पुनर्चक्रीकरण!** हममें से प्रत्येक व्यक्ति प्रतिवर्ष औसतन लगभग 200 किलोग्राम ठोस कचरा उत्पन्न करता है - अर्थात ढेर सारा कूड़ा! याद रखें कि घरेलू कचरे में 40% खाद बनाने योग्य पदार्थ होते हैं। कार्बनिक कचरे से कम्पोस्ट बनाकर हम हमारे द्वारा उत्पन्न किए गए कचरे की एक बड़ी मात्रा का अधिक ज़िम्मेदारीपूर्ण और टिकाऊ तरीक़े से प्रबन्धन करने में मदद करते हैं।
2. **पैसे की बचत।** रासायनिक उर्वरक ख़रीदने की ज़रूरत नहीं होती, कम्पोस्ट मुफ़्त है।
3. **मिट्टी में सुधार।** कम्पोस्ट महत्त्वपूर्ण पोषक पदार्थ मिट्टी को वापस करता है जिससे मिट्टी की गुणवत्ता और उर्वरता बनी रहती है। हल्के, धीमी गति से मुक्त होने वाले एक प्राकृतिक उर्वरक होने के नाते कम्पोस्ट रासायनिक उर्वरकों की भाँति पेड़ों को जलाता नहीं है। साथ ही कम्पोस्ट, भारी मिट्टी की वायु-संचरण क्षमता व बनावट और रेतीली मिट्टी की जलधारण क्षमता में भी सुधार करता है। कार्बनिक पदार्थ प्रदान करके कम्पोस्ट पौधों की वृद्धि में सुधार करता है जिसके परिणामस्वरूप पैदावार बेहतर होती है।
4. **पारिस्थितिकी पर हमारे नकारात्मक प्रभाव में कमी।**
    - ग्रीन हाउस गैसों को कम करता है। (अ) कचरे को कचरा भराव स्थल तक परिवहन करने वाले वाहन कार्बन डाइऑक्साइड (CO_2) छोड़ते हैं, और (ब) कार्बनिक कचरे का अनॉक्सी (बिना ऑक्सीजन के) विघटन मीथेन गैस बनाता है। यह एक ऐसी ग्रीनहाउस गैस है जो कार्बन डाइऑक्साइड से 21 गुना ज़्यादा हानिकारक है।
    - जल प्रदूषण कम करता है। (अ) रासायनिक उर्वरकों का बहकर झीलों, नदियों और झरनों में जाना रोककर। (ब) और कचरा भराव स्थलों पर धातुओं की कार्बनिक पदार्थों की अभिक्रियाओं के फलस्वरूप बने विषैले रिसाव भूमिगत जल को प्रदूषित करते हैं।
5. **संसाधनों की बचत।** कम्पोस्ट बनाने से आप :
    - कचरा संग्रहण और परिवहन में लगने वाले ईंधन व क़ीमत को कम करते हैं।
    - बहुमूल्य संसाधनों को कचरा भराव स्थल से दूर रखते हैं और इस तरह वर्तमान कचरा भराव स्थलों का जीवनकाल बढ़ाते हैं।
    - जैविक कचरा वापस मिट्टी में मिलता है जिससे आप और ज़्यादा भोजन उगा पाते हैं।
    - पानी का संरक्षण होता है, चूँकि कम्पोस्ट मिट्टी की जलधारण क्षमता को बढ़ाता है।

उसकी मात्रा नोट कर ली जाती है। बच्चों को जैविक कचरे और कम्पोस्ट को तौलने की प्रक्रिया में शामिल करने से, हम उन्हें यह देखने का अवसर उपलब्ध कराते हैं कि कार्बनिक कचरे का आयतन और भार खाद बनने की प्रक्रिया के दौरान कितना कम हो गया है। उदाहरण के तौर पर हमारे प्रथम चरण में 250 किलोग्राम जैविक कचरा 40 किलोग्राम हानिकारक रसायनों से मुक्त जैविक खाद में बदल गया। दूसरे चरण में हमें 50 किलोग्राम कम्पोस्ट मिली।

इस कार्य के फलस्वरूप हमारे स्कूल के मालियों को रासायनिक उर्वरकों की ख़रीद के लिए कोई पैसा ख़र्च नहीं करना पड़ा। साथ ही उन्हें उच्च गुणवत्ता वाली खाद बिना प्रदूषण फैलाए स्कूल के परिसर के अन्दर ही मुफ़्त में मिल गई। हमने एक 'गार्डन क्लब' भी शुरू किया है जहाँ विद्यार्थी उद्यान विशेषज्ञ के मार्गदर्शन में स्कूल के बग़ीचे में सजावटी पौधे एवं अन्य सब्ज़ियाँ आदि उगाते हैं। इस हेतु स्कूल में बनाई गई खाद का ही उपयोग किया जाता है। स्कूल के कर्मचारी और पालकगण भी इस कम्पोस्ट को 30 रुपए प्रति किलोग्राम की दर से ख़रीद सकते हैं। स्कूल के जिन कर्मचारियों ने यह खाद ख़रीदी है वह इस बात की गारण्टी देते हैं कि इसके उपयोग से उनके द्वारा उगाए गए फूल एवं सब्ज़ियों की गुणवत्ता, रंग, आकार, सुगन्ध और स्वाद सभी में बढ़ोतरी हुई है। जिस दिन हमारे यहाँ कम्पोस्ट को बेचा जाता है ख़रीदने के लिए अक्सर बिक्री स्थल पर पालकों की लाइन लगी रहती है।

इन सबसे बढ़कर यह जानने का आनन्द है कि हम भोजन से उत्पन्न कचरे से पुन: भोजन प्राप्त कर पाए। विद्यार्थी, शिक्षक और पालक के एक समुदाय के रूप में इस शुरुआत ने हमें यह महसूस कराया कि प्रतिदिन हम जो कार्बनिक कचरा उत्पन्न करते हैं वह वास्तव में एक बहुमूल्य संसाधन है न कि 'कचरा'। यहाँ आने वाले प्रत्यक्षदर्शी इस बात की तारीफ़ करते हैं कि हमने अपने स्कूल के परिसर के अन्दर ही बग़ीचे में एक छोटी-सी जगह पर एक कम्पोस्टिंग प्रकल्प तैयार किया है। इसका एक अन्य फ़ायदा यह है कि एक बार कम्पोस्टिंग का काम शुरू हो जाए तो इसे आगे चलाए रखना बड़ा आसान होता है क्योंकि इसमें लगने वाला श्रम और क़ीमत न्यूनतम है। इस स्वयं-पोषित मॉडल ने हमें स्कूल में अन्य पारिस्थितिकीय संवेदी क्रियाकलापों को शुरू करने की प्रेरणा दी है जिसकी हमें ज़रूरत थी।

निष्कर्ष

कम्पोस्टिंग अपने आप में एक कला और विज्ञान है। स्कूल स्तर पर विद्यार्थियों को कम्पोस्ट बनाने के अभ्यास में शामिल करने से उन्हें ज़्यादा ज़िम्मेदार और पारिस्थितिक रूप से जागरूक बनाने में मदद मिलती है। आज हम जिस दुनिया में रह रहे हैं वहाँ अब विद्यार्थी यह नहीं कह सकते कि "नहीं, मेरे आँगन में नहीं", बजाए इसके उन्हें यह कहना सीखना होगा कि "हाँ, मेरे आँगन में ही।"

Note: Credits for the image used in the background of the article title: Still life on composter, allispossible.org.uk. URL: https://www.flickr.com/photos/whe atfields/2257331369. License: CC-BY.

References

1. Rajendra Kumar Kaushal et al. Municipal Solid Waste Management in India – Current State and Future Challenges: A Review. International Journal of Engineering Science and Technology (IJEST), 2012: 1473-1479. URL: https://www.researchgate.net/publication/233894305_Municipal_Solid_Waste_Management_in_India-Current_State_and_Future_Challenges_A_Review.
2. Paige L, Ian Somerhalder Foundation. Environment fight clubs: Incinerators vs. Landfills (Round 2). URL: http://www.isfoundation.com/campaign/environment-fight-club-incinerators-vs-landfills-round-2.
3. Smith, MA, Friend, D and Johnson, H. Composting for the Homeowner. The University of Illinois Extension. URL: https://web.extension.illinois.edu/homecompost/history.cfm.
4. Living Green, University of Florida. Composting. URL: http://livinggreen.ifas.ufl.edu/waste/composting.html.
5. South London Waste Partnership. Why it's important to recycle and compost? URL: http://www.slwp.org.uk/what-we-do/recycling-composting/why-it-is-important-to-recycle-and-compost/.
6. Eco Friendly Kids. A Kid's Guide to Composting. URL: http://www.ecofriendlykids.co.uk/composting.html.
7. National Bank for Agriculture and Rural Development. Model scheme for vermin-composting units under agri-clinics. URL: https://www.nabard.org/pdf/VermicompostProductionUnit260814.pdf.

राधिका पद्मनाभन मुम्बई, महाराष्ट्र के भाण्डुप स्थित पवार पब्लिक स्कूल (आई.सी.एस.ई. बोर्ड से सम्बद्ध संस्था) में रसायनविज्ञान और पर्यावरणविज्ञान की विभाग प्रमुख व संरक्षण गतिविधियों की प्रभारी हैं। राधिका को टाटा पॉवर द्वारा क्लब एनर्जी कार्यक्रम के तहत दो बार (2014 व 2015 में) 'सर्वश्रेष्ठ सलाहकार' (बेस्ट मैंटर) का पुरस्कार प्राप्त हुआ है। उनसे padmanabhanradhika@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** किशोर पंवार

शिक्षण मानो कि धरती मायने रखती है

कम्पोस्ट खाद बनाने की शुरुआत

लेखिका : राधा गोपालन

"सम्पूर्ण मानव और पशु मल, जिसे दुनिया ऐसे ही बर्बाद कर देती है, उसे पानी में बहाने की बजाय अगर वापस ज़मीन के ही सुपुर्द कर दिया जाए तो वह पूरी दुनिया का पोषण करने के लिए काफ़ी होगा..।" - *ले मिजेराब्ल*, विक्टर ह्यूगो

कम्पोस्ट खाद (वानस्पतिक/कूड़ा खाद) बनाना क्या होता है?

कम्पोस्ट खाद बनाना यानी, जानवरों के मल, बचे-खुचे भोजन और सूक्ष्मजीवों, कीड़ों तथा कृमि द्वारा निकाले गए अन्य जैविक अपशिष्ट का मानव द्वारा नियंत्रित रूपान्तरण। इसके परिणामस्वरूप पैदा होने वाली कम्पोस्ट खाद जीवन चक्र को पूरा कर देती है - सजीव वानस्पतिक पदार्थ मरता है, फिर अन्य जीवधारियों द्वारा उसे अपघटित किया जाता है, फिर उससे और सजीव पदार्थ पैदा होते हैं।

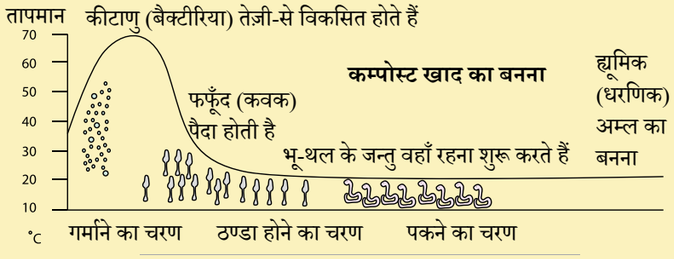

कम्पोस्ट खाद क्यों?

हमने मिट्टी को उपजाऊ बनाने के एक तरीक़े के रूप में कम्पोस्ट खाद बनाना शुरू किया था ताकि हमारी मिट्टी सुरक्षित और स्वास्थ्यवर्धक भोजन पैदा कर सके। इसलिए कम्पोस्ट खाद बनाने की शुरुआत खेती की शुरुआत को ही प्रतिबिम्बित करती है - जो क़रीब 10,000 साल पहले हुई थी। दरअसल, अठारहवीं सदी में जब तक कि कृत्रिम उर्वरक नहीं बनाए गए थे, मिट्टी को सिर्फ़ जैविक खाद द्वारा ही उपजाऊ बनाया जाता था - यानी हर तरह का खाना जैविक था!

आज, कम्पोस्ट खाद बनाने के फ़ायदे सिर्फ़ खेती तक सीमित नहीं रह गए हैं। निम्नीकरणीय (degradable) अपशिष्ट पदार्थों को भोजन में तब्दील करने का सशक्त तरीक़ा प्रदान करके कम्पोस्ट खाद हमारे शहरों को सड़ती सब्ज़ियों और जानवरों के अपशिष्ट से निजात दिलाने का एक उपाय भी सुझाती है।

हम कम्पोस्ट खाद बनाने की शुरुआत के बारे में कैसे जानते हैं?

चूँकि कम्पोस्ट खाद बनाना और जैविक खाद तैयार करना खेती के इतने अभिन्न अंग हैं, कि उनके बारे में हर जगह का अपना विशेष ज्ञान था। यह ज्ञान अक्सर जबानी एक से दूसरे को मिलता जाता था। इसलिए कम्पोस्ट खाद बनाने के बारे में लिपिबद्ध कार्य बहुत कम है, और अक्सर लोगों के अनुभवों और तरीक़ों से जुड़े स्मरणों के रूप में मौजूद हैं। लोगों के क़िस्सों से प्राप्त जानकारी तथा ज्ञात पुरातात्विक विवरणों से यहाँ एक मोटा घटनाक्रम प्रस्तुत किया गया है।

2320 बीसीई - 2120 बीसीई : कम्पोस्ट खाद बनाने के सबसे प्रारम्भिक लिखित वृत्तान्त मेसोपोटैमिया (आज का ईराक) पर राज करने वाले अकेडियन राजवंश के समय बनी कुछ मिट्टी की टिकियों पर पाए गए। इन टिकियों की पूरी विषयवस्तु के बारे में ज़्यादा कुछ पता नहीं है।

3000 बीसीई - 2000 बीसीई : उत्तर-पूर्वी सीरिया में स्थित, तीसरी सहस्राब्दी बीसीई के सबसे बड़े केन्द्रों में से एक, हैमॉकर से प्राप्त पुरातात्विक साक्ष्यों से ये प्रमाण मिलते हैं कि वहाँ मुख्य घर के बाहर हौदी जैसे ढाँचे में जानवरों के मल, मिट्टी का अस्तर, बेकार चारे को मिलाकर घर पर ही कम्पोस्ट खाद बनाई जाती थी।

1500 बीसीई - 400 बीसीई : *ऋग्वेद* और *अथर्ववेद* में ऐसे सन्दर्भ मिलते हैं जो बताते हैं कि प्राचीन भारत में मिट्टी की उर्वरता बढ़ाने के लिए ज़मीन पर कुछ चीज़ें डालने का चलन था। इसके अलावा ज़मीन की उत्पादकता बढ़ाने के लिए जौ के तिनकों और तिल के पौधों से बनी खाद के महत्त्व का उल्लेख है। अथर्ववेद में खाद के रूप में गाय के सूखे गोबर के उपयोग का भी ज़िक्र है।

1000 बीसीई - 1500 बीसीई : अमरीका के स्थानीय निवासी पोषण के स्रोत के रूप में बीजों के साथ मछली के बिना खाए हुए भाग या अन्य जानवरों के भागों को ज़मीन में गाड़ दिया करते थे। उन्होंने पौधों की अच्छी वृद्धि के लिए बीज की गेंदों का सबसे पहले प्रयोग किया। इन गेंदों में बीज, गोल आकार में थापी गई मिट्टी और सड़नशील जैविक पदार्थों को मिला दिया जाता था। जब इसे ज़मीन पर डाला जाता था तो बीजों को मिट्टी की इन गेंदों के भीतर संरक्षण मिल जाता था और वे नम बने रहते थे। उनके अंकुरित होने और बढ़ने के समय इस कम्पोस्ट खाद से उन्हें पोषण मिल जाता था।

स्थानीय अमरीकी बीज गेंद

362 बीसीई : जेनोफोन द्वारा परिवार के विज्ञान पर लिखा गया शोध निबन्ध *ओएकोनॉमिकस* यूनानी लोगों के बीच कम्पोस्ट खाद बनाने के सबसे शुरुआती वृत्तान्तों में से एक है। इस निबन्ध के अनुवाद यह दर्शाते हैं कि खेती के अवशेष पदार्थों को सड़ाकर जैविक खाद बनाई जाती थी।

350 बीसीई : कार्थेज सभ्यता के लेखक मैगो, जिसे यूनानी और रोमन, दोनों जगह के लोग खेती का जनक मानते थे, ने खेती पर 28 किताबें लिखी थीं। जिनमें, ऐसा कहा जाता है, कि प्यूनिक (कार्थेज) के लोगों की जैविक खाद बनाने के तरीक़ों की जानकारी थी। यह तथ्य प्रमुख रूप से, अन्य रोमन और यूनानी विद्वानों की रचनाओं में पाए गए लगभग 40 उद्धरणों के माध्यम से जाना गया।

160 बीसीई : एक सेवानिवृत्त रोमन जनरल मार्कस पोर्सियस कैटो ने अपनी किताब डे *ऐग्री कल्चरा* (खेतों की संस्कृति के विषय में) में कम्पोस्ट खाद बनाने से जुड़ी जानकारी का वर्णन किया है। उनके अनुसार, बकरी, भेड़, गाय-बैल और अन्य जानवरों के मल को पौधों के अपशिष्ट जैसे तिनके, भूसा, फल्ली के तनों, छिलकों और शाहबलूत की पत्तियों आदि के साथ मिलाकर कम्पोस्ट तैयार किया जाता था। अलग-अलग जानवरों के मल से प्राप्त होने वाली इस खाद को अलग-अलग श्रेणी दी जाती थी। बकरी, भेड़ और बैल के मल से बनी खाद को तो पसन्द किया जाता था, लेकिन कबूतर के मल से बनी खाद सबसे मूल्यवान थी और इसे चारागाहों, बग़ीचों और खेती योग्य ज़मीन पर फैला दिया जाता था। सड़कों पर पड़े कचरे और अन्य जैविक अपशिष्ट को भी इसमें मिलाकर कम्पोस्ट खाद तैयार की जाती थी। यह पहली किताब है जिसमें कीड़ों का प्रयोग करके कम्पोस्ट खाद बनाने के तरीक़े का वर्णन किया गया है।

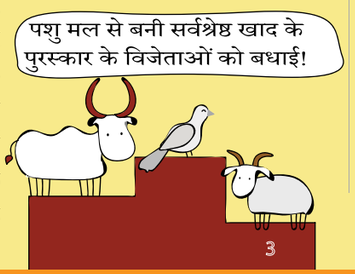

100 बीसीई : उत्तरी चीन के नवपाषाण युग के स्थलों से प्राप्त पुरातात्विक विवरण और चीनी विद्वान फैन शैंग-शिश शू द्वारा पहली सदी बीसीई में लिखी गई खेती की नियमावली दर्शाती है कि प्राचीन चीनी लोग पकाई गई हड्डियों, चमड़े, जैविक खाद, रेशम के कीड़े के अवशेष और मानव अपशिष्ट जैसे विभिन्न जैविक पदार्थों का पुनर्चक्रण करके मिट्टी को उपजाऊ बनाते थे!

77 एडी : मध्य युग में लिखी गई प्लिनी की *नैचुरल हिस्ट्री* में, शुरुआती विशेषज्ञों द्वारा जैविक खाद बनाने, और उसे खेत में डालने से जुड़ी हिदायतों को शामिल किया गया है।

50 बीसीई : ऐसा कहा जाता है कि क्लिओपैट्रा ने कम्पोस्ट खाद बनाने की कीड़ों की क्षमता को देखते हुए उन्हें पवित्र घोषित करवा दिया था, और ऐसे कानून बना दिए गए थे कि मिस्र में केंचुओं को हटाने पर मृत्युदण्ड दिया जाता था!

450 एडी - 510 एडी : पैलेडियस की चौथी सदी में लिखी गई रचना डे रे *रस्टिका*, और बाइजैनटाइन में लिखे गए *जिओपोनिका* नामक, खेती से जुड़े निर्देशों के संकलन में उन्नीसवीं सदी में पश्चिमी ढंग से जैविक खाद बनाने के तरीक़े की नींव रखी गई।

200 एडी - 1200 एडी : भारत में तमिल लोग दीर्घकालीन कृषि के लिए सुनियोजित जुताई, जैविक खाद का प्रयोग, निन्दाई, सिंचाई और फसल संरक्षण करते थे।

ढाँचों के पुरातात्विक प्रमाण और नाइट्रोजन का समस्थानिक (आइसोटोपिक) विश्लेषण यह दिखाता है कि सिन्धु घाटी में विभिन्न रूपों में कम्पोस्ट खाद बनाई जाती थी। जानवरों के अस्तबल से तिनके, गोबर और मूत्र को जोते गए खेतों में डाल दिया जाता था ताकि मिट्टी की उर्वरता बढ़े।

कम्पोस्ट खाद बनाने के आधुनिक ढंग की बुनियाद

कम्पोस्ट खाद बनाने के अधिकांश आधुनिक तरीक़े इन्दौर पद्धति पर आधारित हैं, जिसे प्रख्यात कृषि विशेषज्ञ सर ऐल्बर्ट हॉवर्ड ने विकसित किया था, जब उनकी नियुक्ति भारत में थी (1905 के बाद से)। यह पद्धति हॉवर्ड के इस प्रेक्षण से प्रेरित थी कि जिस तरह "जंगल अपने आप को खाद देता रहता है। वह खुद अपनी खाद मिट्टी (ह्युमस) तैयार करता है और फिर खुद को खनिज भी प्रदान करता है", उसी तरह भारत और चीन के किसान अपनी मिट्टी को उपजाऊ बनाते थे। "पूरब के किसानों ने प्रकृति का तरीक़ा अपनाया है, जैसा कि आदिम वनों में देखा जाता है।"

हावर्ड कई सालों तक भारत में इस पद्धति का परीक्षण करते रहे। 1930 के दशक के अन्त में, और 1940 के दशक की शुरुआत में, इस पद्धति को सफलतापूर्वक कई अफ़्रीकी देशों, युनाइटेड किंगडम, और संयुक्त राज्य अमरीका में अपनाया गया। आज, खेती में औद्योगिक पद्धति के हावी हो जाने के बावजूद, इन्दौर पद्धति, दुनिया भर में कम्पोस्ट खाद बनाने के तरीक़ों का आधार बनी हुई है।

Poster Design: Vidya Kamalesh

राधा गोपालन एक पर्यावरणीय वैज्ञानिक हैं। उन्होंने आईआईटी मुम्बई से पीएचडी की है। पर्यावरण सम्बन्धी परामर्श देने के अपने 18 साल के कैरियर के बाद, राधा ने ऋषि वैली स्कूल में पर्यावरणविज्ञान पढ़ाया, और वर्तमान में वे अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय के स्कूल ऑफ़ डेवेलपमेंट में अतिथि प्राध्यापक हैं। वे फूड सॉवेरिनिटी अलायंस, भारत की सदस्य भी हैं। **अनुवाद** : भरत त्रिपाठी

i wonder...
Rediscovering school science
Azim Premji University

आवर्त सारणी

रसायनविज्ञान के इतिहास की ओर खुलने वाली खिड़की!

सविता लाडागे और तेजस जोशी

आवर्त सारणी, रसायनविज्ञान के अध्ययन का केन्द्रीय भाग है, और एक विषय के रूप में रसायनविज्ञान के प्रेरणादायी इतिहास और उसके विकास की पड़ताल करने में भी इसकी उतनी ही केन्द्रीय भूमिका है। यह लेख इस ऐतिहासिक यात्रा पर ले जा रहा है, और लक्ष्य है शिक्षकों और विद्यार्थियों, दोनों के लिए इस इतिहास को जानने के महत्त्व को दर्शाना।

आज हम जिस रसायनविज्ञान का अध्ययन करते हैं, आवर्त सारणी उसका एक अभिन्न हिस्सा है। लेकिन, क्या आपने कभी यह सोचा है कि तत्वों की खोज कैसे हुई होगी? या, यह कि आवर्त सारणी अपनी वर्तमान संरचना और बाह्यरूप तक किस प्रकार पहुँची – ख़ासतौर पर उन्नत विश्लेषणात्मक तकनीकों, उपकरणों या सुगम्य साहित्य के अभाव में। इन सवालों के जवाब मनुष्य द्वारा ज्ञान की निर्भीक तलाश, एक तार्किक मार्ग और बहुत सारी दूरदृष्टि में निहित हैं। आज आवर्त सारणी जितनी स्पष्ट और सुव्यवस्थित प्रतीत होती है, दरअसल वह रसायनविज्ञान के विषय की बहुत ही चुनौतीपूर्ण और मुश्किल विकास यात्रा का प्रतिबिम्ब है। इसलिए, इतिहास के बारे में जानना किसी विद्यार्थी के लिए जितना अमूल्य है, उतना ही एक शिक्षक के लिए भी है।

प्राकृतिक तत्वों को पहचानने के लिए हुए प्रारम्भिक प्रयास

यह मान्यता कि, हमारे आस-पास की दुनिया का समस्त पदार्थ कुछ बुनियादी अवयवों के सीमित निकाय से बना है, प्राचीन काल से चली आ रही है। इसलिए विभिन्न सभ्यताओं ने इन बुनियादी अवयवों की पहचान करने के अनेक प्रयास किए हैं।

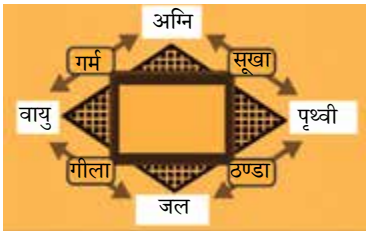

चित्र-1 : प्राकृतिक तत्वों की एक प्रारम्भिक सारणी। अरस्तु द्वारा बनाई गई यह बहुत प्राचीन पूर्ववर्ती सारणी, आधुनिक आवर्त सारणी की एक साधारण शुरुआत कही जा सकती है। लेकिन प्राकृतिक तथ्यों को समझाने में यह काफ़ी मददगार थी। उदाहरण के लिए, अग्नि की उपस्थिति/अनुपस्थिति क्रमशः गर्म और ठण्डे को निरूपित करती है। पानी की अनुपस्थिति का आशय था कोई ठोस पदार्थ। इसी प्रकार, लकड़ी के जलने के बाद राख को देखने और ऊष्मा को महसूस करने के कारण, ऐसा माना गया कि लकड़ी पृथ्वी और अग्नि से मिलकर बनती है।
Credits: Tejas Joshi. License: CC-BY-NC

ऐसे ही एक प्रयास ने चार प्राथमिक पदार्थों जल, वायु, अग्नि और पृथ्वी की पहचान की। अरस्तु ने इस सूची में एक और तत्व 'ईथर', यानी आकाश के तत्व को जोड़ दिया। इन सीमित बुनियादी अवयवों को एक प्रारम्भिक, लेकिन विश्वसनीय 'सारणी' में, साथ में रखा गया - और यह तत्वों को वर्गीकृत करने के सबसे प्रारम्भिक प्रयासों में से एक बना। उस समय भी, इन प्राथमिक पदार्थों का प्रयोग प्राकृतिक तथ्यों का अर्थ निकालने के लिए किया गया था (**चित्र-1** देखें)!

यह सरल, लेकिन काफ़ी हद तक तर्कसंगत वर्गीकरण कई सदियों तक चलता रहा। लेकिन, ऐलकेमिस्टों (कीमियागर - आधुनिक रसायनशास्त्रियों के पूर्वज) के कार्य की शुरुआत से, और फिर बाद में, प्रायोगिक विज्ञानों की प्रगति के परिणामस्वरूप रासायनिक तत्वों की अवधारणा में काफ़ी बदलाव आना शुरू हो गया।

रासायनिक तत्व क्या होते हैं?

रासायनिक तत्वों की खोज प्रागैतिहासिक काल से हो रही है, जब मनुष्य, जंगल में लगने वाली आग के बाद पीछे रह जाने वाले लकड़ी के कोयले (कार्बन) को देखते थे।

प्राचीन काल में भी सात धातुओं - सोना, चाँदी, ताँबा, सीसा, लोहा, टिन और पारा, तथा अधातु, गन्धक (कार्बन के अलावा) के बारे में लोगों को पता था। ऐसा इसलिए भी हो सकता है क्योंकि इनमें से कई तत्व प्राकृतिक रूप से अस्तित्व में होते हैं, या तो मुक्त (तात्विक) रूपों, में या फिर सल्फाइड और ऑक्साइड जैसे अयस्कों के रूप में। इन्हें, साधारण ढंग से गर्म करके या लकड़ी के कोयले (चारकोल) की मदद से गर्म करके, आसानी से अपघटित किया जा सकता है। यह भी सम्भव है कि जब एक बार इनकी खोज हो गई होगी, तो मनुष्य के लिए इनकी उपयोगिता या महत्त्व ने इनके बारे में और खोज करने का प्रोत्साहन दिया होगा। लेकिन, हमारे पास इनकी खोज, या फिर तत्वों के रूप में इनकी पहचान होने, दोनों के ही बारे में दस्तावेज़ न के बराबर हैं।

इस सन्दर्भ में सोने का इतिहास ख़ासतौर पर महत्त्वपूर्ण है। अपनी आकर्षक चमक के कारण सोना (चाँदी के साथ) समृद्धि (आभूषण) और सौन्दर्य का प्रतीक बन गया और धीरे-धीरे इसने विनिमय तथा अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के माध्यम के रूप में महत्ता प्राप्त कर ली। परिणामस्वरूप, कई ऐलकैमिस्टों ने लोहे जैसी अन्य हीन धातुओं (बेस मैटल) को सोने में बदलने का प्रयास करके इस 'पारस पत्थर' को खोजना शुरू किया। मध्य युग के ऐलकैमिस्टों द्वारा किए गए इन्हीं प्रयासों के कारण ही ऐण्टीमनी, आर्सेनिक और बिस्मथ जैसे कई अन्य तत्वों की खोज हुई। इसी की बदौलत विभिन्न तरह के काँच के सामानों का विकास हुआ, और तीन महत्त्वपूर्ण अम्लों – सलफ़्यूरिक अम्ल, हाइड्रोक्लोरिक अम्ल, नाइट्रिक अम्ल – की भी खोज हुई, और इन सभी की बाद में हुए प्रायोगिक शोध में बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है।

लेकिन, किसी तत्व की खोज का सबसे पहला लिखित रिकार्ड 1669 का है। जिस तत्व का इसमें वर्णन किया गया है, वह है फास्फोरस, जिसकी खोज मूत्र से हुई जो फॉस्फेटों का एक प्राकृतिक स्रोत है।

हालाँकि यह सम्भव है इस काल में कई और तत्वों की खोज हुई होगी, पर हमारे लिए इस ज्ञान के अस्तित्व को प्रमाणित करना मुश्किल है। इस काल के ऐलकैमिस्ट प्रयत्न-त्रुटि विधि पर बहुत अधिक निर्भर थे। इसके अलावा, अपनी खोजों से उन्हें जो सम्भावित आर्थिक लाभ प्राप्त हो सकते थे, उसके चलते वे अपनी सीखे हुए ज्ञान को उजागर करने से परहेज किया करते थे। इसका मतलब यह हुआ कि ज्ञान के अलग-थलग पड़े रहने की सम्भावना अधिक थी और ज्ञान का विकास क्रमबद्ध ढंग से नहीं हो पाया।

प्रायोगिक विज्ञान और तत्व की नई अवधारणा

तत्वों के बारे में हमारी सोच में पहला बड़ा बदलाव सत्रहवीं शताब्दी में रॉबर्ट बॉयल के कार्य द्वारा आया। बॉयल ने तत्व को ऐसे पदार्थ के रूप में परिभाषित किया जिसे और छोटे संघटकों में नहीं तोड़ा जा सकता था, और अन्य तत्वों के साथ मिलकर वह मिश्रण (आज के यौगिक) का निर्माण कर सकता था। अठारहवीं सदी में हैनरी कैवेण्डिश, जोसेफ़ प्रीस्टली और ऐण्टवान लैवोजिये जैसे वैज्ञानिकों द्वारा किए गए विस्तृत कार्यों ने इस धारणा को प्रायोगिक रूप से दर्शा दिया।

जिस समय प्रीस्टली ने ऑक्सीजन की खोज की जो जलाने में सहायक थी, कैवेण्डिश ने लगभग उसी समय एक अन्य ज्वलनशील गैस की खोज की (जो अम्ल और धातु की अभिक्रिया द्वारा बनती थी), जिसे हाइड्रोजन नाम दिया गया। लैवोजिये की यह खोज मील का पत्थर थी कि पानी इन दोनों गैसों के संश्लेषण से बनता है। उनकी यह खोज अरस्तु द्वारा बताए गए तत्वों पर पहला बड़ा आघात थी। लैवोजिये ने रासायनिक अभिक्रियाओं में द्रव्यमान संरक्षण को भी प्रमाणित किया और रासायनिक अभिक्रियाओं को लिखने का आधार भी दिया।

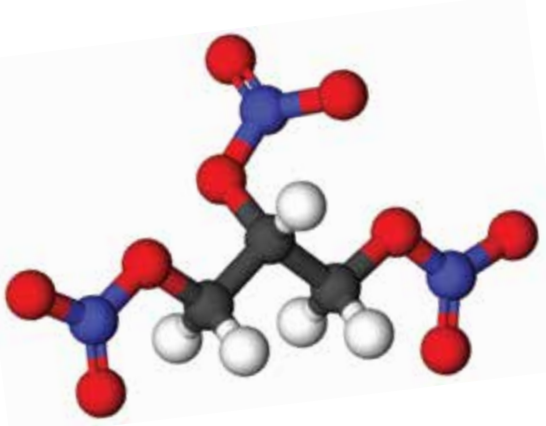

बॉक्स-1 : परमाणु या अणु?

बड़े आश्चर्य की बात है, कि इस समय तक न तो यौगिकों के रासायनिक सूत्र पता थे, न ही संयोजकता के सिद्धान्त के बारे कुछ पता था। लेकिन द्रव्यमान संरक्षण का नियम (लैवोजिये) और स्थिर अनुपात का नियम (प्राउस्ट) पहले ही प्रमाणित किए जा चुके थे। प्राउस्ट का स्थिर अनुपात का नियम कहता है कि स्रोत कुछ भी हो, कोई यौगिक विशेष (मान लीजिए, पानी), सदा ही, समान तत्वों (हाइड्रोजन और ऑक्सीजन) के समान द्रव्यमान अनुपात (1:8) से मिलकर बनता है। हाइड्रोजन को एक सन्दर्भ के रूप रखते हुए, और पानी का सरलतम रासायनिक सूत्र HO मानते हुए, डाल्टन ने निष्कर्ष निकाला कि ऑक्सीजन का परमाणु द्रव्यमान 8 होता है।

गे-लुजैक गैसीय अवस्था में होने वाली रासायनिक अभिक्रियाओं पर काम कर रहे थे, और उन्होंने बताया कि परमाणु किसी तत्व के भीतर स्वतंत्र अस्तित्व रखने वाले सबसे छोटे कण हों, यह ज़रूरी नहीं है। गे-लुजैक के निष्कर्षों का, परमाणु की अविभाज्यता के बारे डाल्टन की अभिधारणा से सीधा संघर्ष था। इस संघर्ष को आख़िरकार ऐवोगैड्रो द्वारा सुलझाया गया जिन्होंने 'अणुओं' के विचार का प्रतिपादन किया।

नए तत्वों की खोज में जिस आविष्कार ने एक अहम भूमिका निभाई वह था, 1800 में वोल्टाई सैल की रचना। वोल्टाई सैल ने विद्युत का, और इसलिए रासायनिक अपघटन का भी, एक स्थिर स्रोत प्रदान किया। इसका सबसे पहले सफल प्रयोग सर

बॉक्स-2 : परमाणु भार की धारणा का विकास

परमाणु भारों की धारणा का विकास भी अपने आप में एक अद्भुत कहानी है, जिसकी विस्तृत चर्चा **आई वंडर...** के पहले अंक में 'परमाणु भारों की गाथा' नामक लेख में की गई है। हमारा सुझाव है कि आप उस लेख पर भी नज़र दौड़ा लें!

हम्फ्री डेवी ने 1807 में किया था जब उन्होंने इसकी सहायता से बेहद अभिक्रियाशील सोडियम और पोटेशियम को पृथक किया था। फिर बाद में इसी विधि से उन्होंने कैल्शियम, मैग्नीशियम और बेरियम जैसे अन्य क्षारीय मृदा तत्वों को भी अलग किया। परिणामस्वरूप, सामने आई पोटेशियम की अपचयन क्षमता ने जॉन्स जैकब बेरजेलियस को सेलेनियम, सिलिकॉन और जर्कोनियम आदि की खोज करने में मदद की।

ज्ञात तत्वों की संख्या में धीरे-धीरे हो रही

बॉक्स-3 : तत्वों के त्रिक (ट्रायड)

हालाँकि तत्वों को वर्गीकृत करने के अधिकांश प्रयास कार्ल्सरुहे काँग्रेस के बाद हुए, लेकिन इसके पहले भी इस सम्बन्ध में कुछ उल्लेखनीय प्रयास हुए थे, जिनमें ख़ासतौर पर डोबेरेइनर का काम शामिल है। डोबेरेइनर द्वारा किया गया तत्वों का वर्गीकरण उनकी रासायनिक समरूपता पर आधारित था। उन्होंने बढ़ते हुए (उनके उस समय के ज्ञात) परमाणु द्रव्यमानों के क्रम में एक तरह के तीन तत्वों का समूह बनाया। जब यह हो गया, तो उन्होंने ध्यान दिया कि बीच वाले तत्व का परमाणु द्रव्यमान बाक़ी दो तत्वों के द्रव्यमानों के औसत के क़रीब ही था। उन्होंने 1829 में अपना 'त्रिक का नियम' प्रकाशित किया, जिसकी बदौलत

चित्र-2 : तत्वों के कुछ त्रिकों के उदाहरण
Credits: Tejas Joshi. License: CC-BY-NC.

1843 तक ऐसे दस त्रिकों की पहचान कर ली गई।

लेकिन इस प्राथमिक वर्गीकरण का प्रयोग सभी ज्ञात तत्वों को वर्गीकृत करने के लिए नहीं किया जा सका। और न ही यह वर्गीकरण बहुत सुदृढ़ ही था। उदाहरण के लिए, बाद में कुछ चौके और एक पंचक भी पकड़ में आया!

बढ़ोतरी के साथ ही उन्नीसवीं सदी के आरम्भिक वर्षों में परमाणु और परमाणु द्रव्यमान के बारे में भी जानकारियों का विकास हो रहा था। ये दोनों ही पहलू तत्वों को वर्गीकृत करने के आगे हुए प्रयासों के लिए महत्त्वपूर्ण सीढ़ी साबित हुए। इस सन्दर्भ में, उन्नीसवीं सदी के प्रारम्भ में जॉन डाल्टन द्वारा प्रतिपादित परमाणु सिद्धान्त ख़ासतौर से महत्त्वपूर्ण है। डाल्टन का कहना था कि तत्व अविभाजनीय कणों, जिन्हें 'परमाणु' कहा जाता है, से मिलकर बने हैं। उनके इस विचार ने कि ' किसी तत्व विशेष के सभी परमाणु अपने द्रव्यमान, आकार और गुणों के मामले में एक जैसे होते हैं', परमाणु द्रव्यमान के महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त की ओर ध्यान आकर्षित किया। डाल्टन के अनुसार, किसी तत्व के परमाणु द्रव्यमान के एकदम सटीक मूल्य को उस तत्व के हस्ताक्षर की तरह से देखा जा सकता था। इस विचार से यह प्रश्न उभरा कि हम किसी तत्व के परमाणु द्रव्यमान की गणना कैसे करते हैं? डाल्टन ने ग़ज़ब की दूरदर्शिता का परिचय देते हुए, किसी ऐसे अन्य तत्व के द्रव्यमान के सापेक्ष इस मान की गणना की, जिसका द्रव्यमान पहले से ज्ञात था (यानी, अन्य तत्वों के सापेक्ष द्रव्यमानों का पूर्वानुमान लगाने के लिए हाइड्रोजन का एक सन्दर्भ तत्व के रूप में इस्तेमाल)।

परमाणु द्रव्यमान के सिद्धान्त और उसके निर्धारण को 1800 से 1860 के बीच के काल में गे-लुजैक, एमेडियो एवोगैड्रो, बरजेलियस, ज्यां स्टैज और स्टैनिसलाओ कैनिजारो द्वारा और विकसित किया गया। बरजेलियस ने सन्दर्भ तत्व हाइड्रोजन से बदलकर ऑक्सीजन कर दिया, और इस तरह उन्होंने, आसानी से उपलब्ध ऑक्साइडों का उपयोग करके रासायनिक विश्लेषणों के फलक को और विस्तृत कर दिया। परमाणु द्रव्यमानों की गणना करने के लिए किसी सन्दर्भ का उपयोग करने की यह ऐतिहासिक धारणा आज भी ख़ूब उपयोग

Li 7	Be 9	B 11	C 12	N 14	O 16	F 19
Na 23	Mg 24	Al 27.5	Si 28	P 31	S 32	Cl 35.5

चित्र-3 : न्यूलैण्ड्स की आवर्त सारणी का एक भाग। तत्वों को व्यवस्थित करने और आवर्तन की पहचान करने में न्यूलैण्ड्स द्वारा किया गया साहसी प्रयास इस भाग को देखने से स्पष्ट हो जाता है। क्लोरीन (Cl), जो फ्लोरीन (F) से शुरू होने वाले क्रम में आठवें स्थान पर आती है, और यह फ्लोरीन जैसे रासायणिक गुणों का ही प्रदर्शन करती है। लेकिन यह तथ्य, कि ये दोनों एक ही समूह (हैलोजनों) का हिस्सा हैं, काफ़ी बाद में प्रमाणित हुआ।
Credits: Tejas Joshi. License: CC-BY-NC.

की जाती है। आज इस गणना के लिए, कार्बन 12 समस्थानिक (आइसोटोप) का उपयोग किया जाता है।

इस तरह, उन्नीसवीं सदी के मध्य तक, तक़रीबन 60 तत्वों की खोज की जा चुकी थी, और उनके परमाणु द्रव्यमानों की गणना की जा चुकी थी। लेकिन, अभी भी ये जानकारियाँ वैज्ञानिक समुदाय के भीतर ही व्यापक रूप से पता नहीं थीं, और किसी के लिए भी बहुत सुगम्य नहीं थीं। परिणामस्वरूप, संयोजकता, आणविक भार, तुल्यांकी द्रव्यमान के सन्दर्भ में कई अवधारणात्मक संशय बने रहे।

इन संशयों को दूर करने के लिए समकालीन रसायनशास्त्रियों के साथ आने की ज़रूरत के परिणामस्वरूप पहली अन्तर्राष्ट्रीय काँग्रेस कार्ल्सरुहे, जर्मनी में 1860 में आयोजित की गई। कैनीजारो द्वारा निकाले गए परमाणु द्रव्यमानों को, और उनकी गणना करने के लिए, ऐवोगैड्रो की परिकल्पना पर आधारित उनके तर्काधार को, इस काँग्रेस में प्रस्तुत किया गया। इस प्रकार, मील का पत्थर साबित हुए इस सम्मेलन ने तत्वों और उनके गुणों के बारे में उस समय मौजूद ज्ञान पर चिन्तन करने के लिए गम्भीर और संगठित प्रयासों की नींव डाली।

तत्वों के रासायनिक गुणों में आवर्तन (Periodicity)

1860 की काँग्रेस के बाद, ज्ञात तत्वों की अच्छी ख़ासी संख्या (63), और उनके परमाणु द्रव्यमानों, संयोजकता आदि के बारे में स्पष्टीकरण ने इस जानकारी को व्यवस्थित करने के लिए ज़रूरी उपयुक्त सन्दर्भ बिन्दु दे दिए थे।

जॉन न्यूलैण्ड्स इस बात की पहचान करने वाले पहले व्यक्ति थे, कि तत्वों के रासायनिक गुणों में एक ख़ास तरह का 'आवर्तन' होता है। न्यूलैण्ड्स ने पाया कि उनके बढ़ते हुए परमाणु द्रव्यमानों (जैसे कैनिजारो ने गणना की थी) के क्रम में व्यवस्थित किए जाने पर, किसी अमुक तत्व से शुरुआत करने पर आठवें क्रम पर आने वाला तत्व पहले तत्व के समान होगा (**चित्र-2** देखें)। उन्होंने संगीत के अष्टक से साम्य होने के कारण इस अनोखे गुण को 'अष्टकों का नियम' नाम दिया।

चूँकि, न्यूलैण्ड्स ने तत्वों के भौतिक और रासायनिक गुणों की बजाय परमाणु द्रव्यमानों पर ज़्यादा निर्भर किया, इस वजह से उनकी इस व्यवस्था की कुछ सीमाएँ थीं। और ऐसा होने का एक कारण यह भी था कि परमाणु द्रव्यमानों के जो मूल्य उस समय

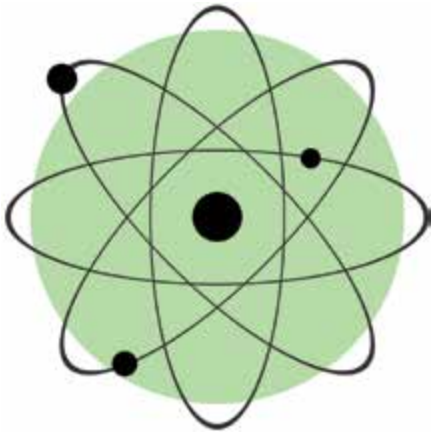

उपयोग किए जा रहे थे, उनमें से कुछ ग़लत थे जिसके कारण उन्हें सारणी में ग़लत स्थान पर रख दिया जाता था। इसके अलावा, न्यूलैण्ड्स ने अपनी सारणी में उस समय तक नहीं खोजे गए तत्वों के लिए ख़ाली जगह नहीं छोड़ी थीं।

मेण्डलीव ने खोजा पहेली का हल

हालाँकि न्यूलैण्ड्स ने आवर्तन की पहचान कर ली थी, पर तत्वों को वर्गीकृत करने के उनके प्रयत्न को रसायनशास्त्रियों ने गम्भीरता से नहीं लिया, जिसकी वजह से उन्होंने इस ओर और अधिक प्रयास नहीं किए। फिर दिमित्री मेण्डलीव ने पहले 1869 में, और फिर 1871 में आवर्त सारणी का अपना संस्करण प्रकाशित किया। तत्वों के वर्गीकरण की उनकी इस सुन्दर और परिष्कृत व्यवस्था ने न सिर्फ़ आवर्ती नियम को प्रभावपूर्ण तरीक़े से प्रमाणित कर दिया, बल्कि तार्किक दूरदृष्टि के बल पर कुछ अनखोजे तत्वों के होने के बारे में पूर्वानुमान भी लगाया, और उनको जगह देने के लिए सारणी में फ़ासले भी छोड़े!

आवर्त सारणी के विकास में, मेण्डलीव के प्रयास रूपान्तरकारी क्यों हैं?

1. मेण्डलीव द्वारा बनाई गई व्यवस्था कैनिजारो द्वारा निकाले गए परमाणु द्रव्यमानों पर ही निर्भर नहीं थी। बल्कि उन्होंने यौगिकों के स्वयं के द्वारा किए गए विश्लेषण का अनुसरण किया, रासायनिक रूप से समान या 'सदृश' तत्वों की पहचान की, और तत्वों की अपनी व्यवस्था में उन्होंने इस रासायनिक समानता को प्राथमिकता दी। दरअसल, उन्होंने इस जानकारी का इस्तेमाल करके कई तत्वों के परमाणु द्रव्यमानों पर सवाल भी उठाए।

2. ऐसा लगता है कि मेण्डलीव ने उन्हें प्राप्त जानकारियों को एक चुनौती के रूप में लिया - किसी जिगसॉ पहेली की तरह जिसे हल किया जाना था। इसलिए उन्होंने

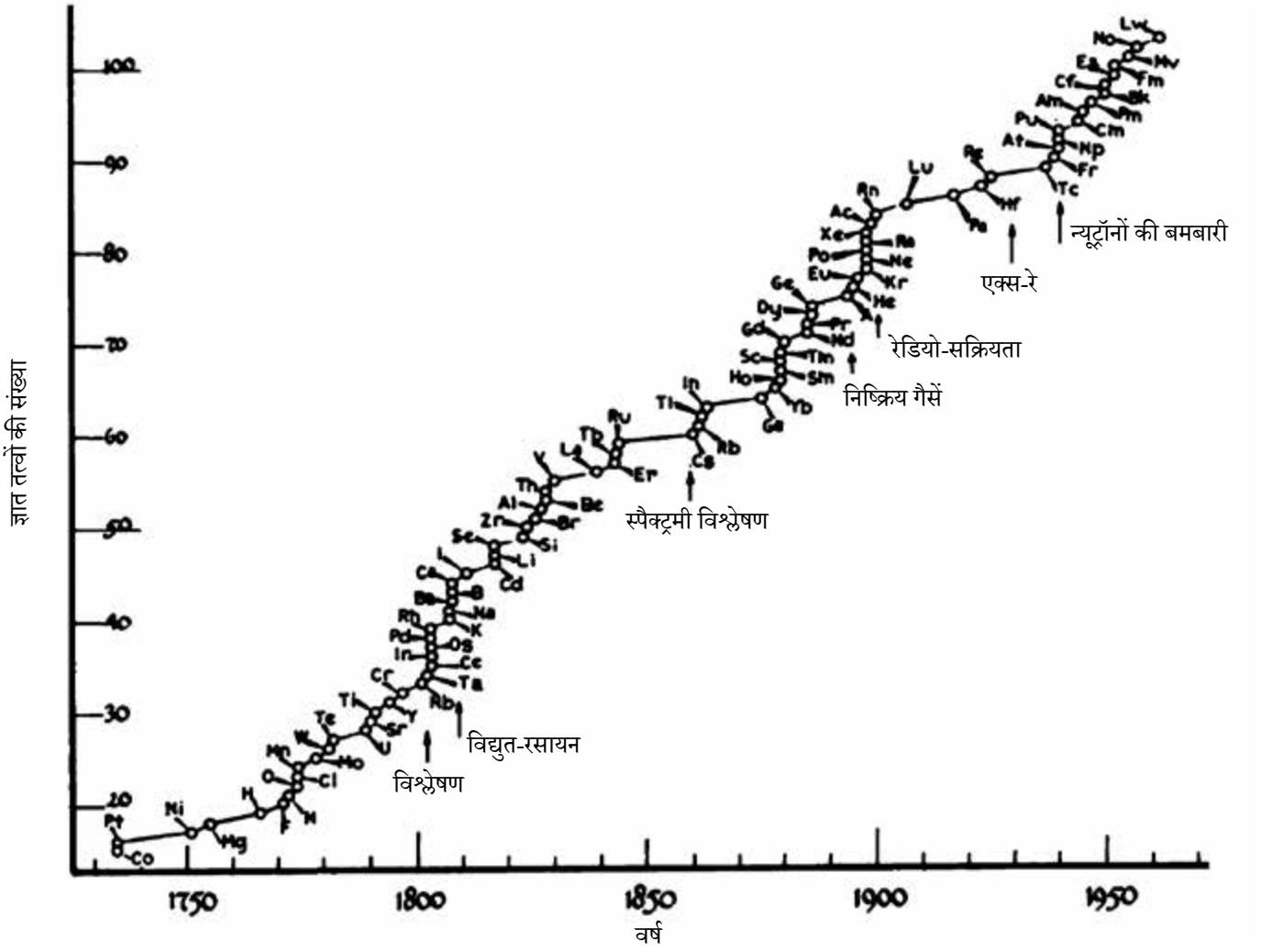

चित्र-4 : तत्वों की खोज का सार
Credits: Adapted by Tejas Joshi from Goldwhite, H., & Adams, R. C. (1970). Chronology of the discovery of elements. Journal of Chemical Education, 47(12), 808.

हर तत्व के लिए अलग-अलग कार्ड बनाए, और फिर उन्हें विभिन्न तरीक़ों से व्यवस्थित करने की कोशिश की। इन तत्वों को सारणी में लम्बवत और क्षैतिज ढंग से व्यवस्थित करने (जिनसे हम आज की सारणी में परिचित हैं) के बारे में सोचते हुए, उन्होंने इनकी पारिवारिक सदृशता को लम्बवत रखा, और बढ़ते हुए परमाणु द्रव्यमान को क्षैतिज रूप में रखा।

3. मेण्डलीव को अपने प्रयास पर इतना दृढ़ विश्वास था कि उन्होंने उस समय के ज्ञान पर बेधड़क होकर सवाल उठाए (उदाहरण के लिए, अशुद्ध परमाणु द्रव्यमानों पर) और उन्होंने ग़लतियों को सुधारने के लिए स्पष्टतः ग़लत जगह रखे गए तत्वों के लिए पुनः गणना की या उनकी जगह बदल दी। उनका यह विश्वास और दूरदृष्टि बाद में सही प्रमाणित हुए।

4. मेण्डलीव की सारणी की, सम्भवतया सबसे ख़ास विशेषता है ख़ाली छोड़ी गई जगहें, जो उन्होंने कुछ अनखोजे तत्वों की गुंजाइश बनाने के लिए छोड़ी थीं। पर सिर्फ़ ख़ाली स्थान ही नहीं छोड़े गए थे, इनके साथ अनखोजे तत्वों के क्या गुण हो सकते हैं, इसके पूर्वानुमान भी लगाए गए थे (उदाहरण के लिए, मेण्डलीव ने ऐल्यूमीनियम से मिलते-जुलते गुणों वाले एक तत्व के होने का पूर्वानुमान लगाया, और उसे एका ऐल्यूमीनियम कहा। बाद में इस तत्व की खोज हुई और इसे गैलियम नाम दिया गया)। मेण्डलीव की सारणी में इस दूरदर्शी, और कुछ हद तक 'दुस्साहसी', व्यवस्था ने और तत्वों को शामिल करना सम्भव बनाया। दरअसल, इसने नए तत्वों की खोज का मार्ग प्रशस्त किया!

एक बड़े आश्चर्य की बात यह है, कि लगभग इसी समय, मेण्डलीव की सारणी से बेहद मिलती-जुलती आवर्त सारणी लोथार मेयर द्वारा स्वतंत्र रूप से तैयार की गई थी। लोथार मेयर एक वैज्ञानिक थे जिन्हें आवर्त सारणी के विकास में उनके योगदान के लिए, बाद में, लगभग मेण्डलीव के बराबर ही श्रेय दिया गया। मेयर की सारणी में ज़्यादा ध्यान तत्वों के भौतिक गुणों, जैसे कि उनके परमाणु आयतन, में प्रगति की ओर था।

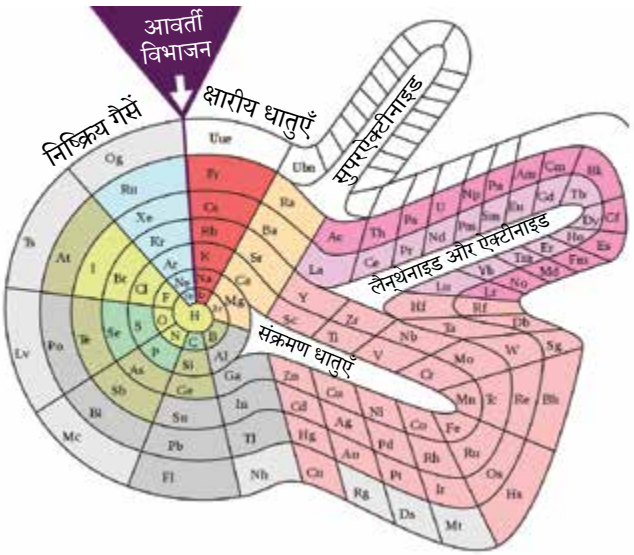

चित्र-5 : क्या आवर्त सारणी इससे भिन्न दिख सकती थी? इस चित्र में, काफ़ी हद तक अनोखे बाह्यरूप का एक उदाहरण दिया गया है। यह थिओडोर बेनफे द्वारा तैयार की गई सर्पिल सारणी है। इस सर्पिल सारणी के बीच में हाइड्रोजन है, और नए उभरते हुए सर्पिल फैलकर आठ खण्ड बना लेते हैं जिनमें संक्रमण तत्व, लैन्थेनाइड और ऐक्टीनाइड को रखा गया है। सर्पिल और कुण्डली आकार वाले नमूने नए नहीं हैं - 1862 में शैनकोर्ट्वा द्वारा प्रतिपादित टैल्युरिक स्क्रू नमूना, कुण्डली डिज़ाइन का एक प्रमुख उदाहरण था। आवर्त सारणी के दुनिया भर के ऐसे अन्य बाह्यरूपों के बारे में जानने के लिए मार्क लीच के ऑनलाइन संग्रह को यहाँ देख सकते हैं –

http://www.meta-synthesis.com/webbook/35_pt/pt_database.php.

Credits: DePiep (Own work), Wikimedia Commons.
URL: https://en.wikipedia.org/wiki/Alternative_periodic_tables#/media/File:Elementspiral_(polyatomic).svg. License: CC-BY-SA.

1. पहला स्रोत, एक इंफोग्राफिक फ्लायर (चित्रों द्वारा सूचना देने वाला विज्ञापन) है, जो आवर्त सारणी के विकास की यात्रा में आए विभिन्न मील के पत्थरों को प्रस्तुत करता है, और उन वैज्ञानिकों से परिचय कराता है जिन्होंने इनमें योगदान दिया। यह लेख इसी स्रोत से प्रेरित है।
2. यह फ्लायर एक बड़ी, गतिविधि-आधारित, अधूरी आवर्त सारणी के रूप में खुलता है, और इसमें तमाम संकेत और ख़ाली स्थान भी दिए गए हैं, जिन्हें पाठक पूरा करते हैं।
3. दूसरा स्रोत, 114 दृश्य सूचना कार्डों का एक समूह है, हर तत्व के लिए एक कार्ड।
4. रंगों के संकेत वाला और चित्रित, हर कार्ड में तत्व, पाठक से 'बात करता है', और वह पाठकों के साथ अपने बारे में, अलग-अलग विषयवस्तुओं से गुज़रती असंख्य जानकारियाँ बाँटता है, जिनके बारे में आप विस्तार से पोर्टल पर जान सकते हैं।

www.bit.ly/lmtce पर मौजूद पोर्टल में आपको शिक्षण के इन संसाधनों के बारे में विस्तृत वर्णन मिल जाएगा। इसके अलावा आगे और जानने के लिए आपको सूचनाओं की कई उपयोगी स्रोतों की हाइपरलिंक भी दी गई हैं।

चित्र-6 : होमी भाभा विज्ञान शिक्षा केन्द्र में तैयार किए गए शिक्षण संसाधन।
Credits: Tejas Joshi. License: CC-BY-NC.

बॉक्स-4 : स्रोत

हमने इस लेख के लिए, आवर्त सारणी से जुड़े जिन मुद्रित और वैब-आधारित स्रोतों का सहारा लिया है, उनकी एक विस्तृत सूची, और हमारे द्वारा तैयार किए गए कुछ शिक्षण स्रोतों को आप ऑनलाइन, इस पोर्टल, WWW.bit.ly/lmtce पर जाकर 'इम्पोर्टेंट रिफ्रेंसेज ऐण्ड रिसोर्सेज' नामक खण्ड के तहत देख सकते हैं। इन स्रोतों को कोई भी देख सकता है।

यह पोर्टल कई तरह के लोगों के लिए शैक्षणिक संसाधन उपलब्ध कराने के लिए बनाया गया था। हो सकता है कि इनमें से कुछ लोगों के पास शिक्षण के साधनों की, या मुद्रित रूप वाली अन्तर्राष्ट्रीय किताबें पढ़ने की, सुगमता न हो। हमें विश्वास है कि पोर्टल पर दिए गए संसाधनों में से कुछ तो ऐसे होंगे जो आपको आपके काम में मदद करेंगे और प्रेरित भी करेंगे। यह किसी भी तरह से हो सकता है, चाहे आपके विद्यार्थियों के लिए नमूने बनाने की गतिविधियों के रूप में हो, उन्हें खुद से सीखने के लिए ज़रूरी मार्गदर्शन के रूप में हो, या उन्हें सवाल उठाने और जवाबों को खोजने के लिए प्रेरित करने हेतु हो। हमारे पास सीखने के संसाधनों के सैट के मुद्रित संस्करण भी हैं जिन्हें आपके विद्यार्थियों के बीच आवर्त सारणी और उसके तत्वों के बारे में बोध पैदा करने के लिए, सुस्पष्ट शुरुआती बिन्दुओं के रूप में इस्तेमाल करने हेतु तैयार किया गया है। ये संसाधन ख़रीदने पर उपलब्ध होंगे। इनके बारे में विस्तृत जानकारी के लिए हमें लिखें।

ज़्यादा बड़ी समस्या : नए तत्वों का उभार और उन्हें सारणी में जगह देना

हालाँकि मेण्डलीव की आवर्त सारणी ने उस समय ज्ञात क़रीब 60 तत्वों को सुदृढ़ ढंग से व्यवस्थित करने का एक तरीक़ा प्रस्तुत किया था, पर जल्दी ही, कई नए तत्वों की खोज से इस सारणी पर भी संकट मँडराने लगा।

इनमें पहली चुनौती, 1859 में रॉबर्ट बुनसन और गुस्ताव करशौफ द्वारा आविष्कृत स्पैक्ट्रोस्कोप के इस्तेमाल द्वारा हुई दुर्लभ मृदा तत्वों, यानी लैन्थेनाइड, की खोज के साथ सामने आई। स्पैक्ट्रोस्कोप एक ऐसा उपकरण है जो हमें किसी भी पदार्थ में तत्वों की बहुत छोटी मात्राओं को, उन्हें रासायनिक रूप से पृथक किए बग़ैर भी, खोज लेने में मदद करता है। दुर्लभ मृदा तत्व रासायनिक रूप से एक-दूसरे से बहुत मिलते-जुलते थे, और उन्हें पृथक करना भी कठिन था, इसलिए उनके लिए स्पैक्ट्रोस्कोप बहुत सही उपकरण था। चूँकि 1870 के बाद, इस तरह के कई दुर्लभ मृदा तत्व खोजे जा रहे थे, इसलिए उन्हें मेण्डलीव की आवर्त सारणी में रखना एक चुनौती साबित हो रहा था। उनकी रासायनिक समानता का मेण्डलीव के एक तथ्य से विरोध था, और वह तथ्य था रासायनिक गुणों में प्रगति, और यह मेण्डलीव के वर्गीकरण की सबसे ख़ास विशेषताओं में से एक था। 1905 में, ऐल्फ्रेड वेर्नर ने इस समस्या का निदान कर दिया। इसके लिए उन्होंने दुर्लभ मृदा तत्वों को अपनी बहुत लम्बी आवर्त सारणी - जिसमें 33 स्तम्भ थे - में क्षारीय मृदा धातुओं और संक्रमण तत्वों के बीच रख दिया। क्या यह बड़े अचरज की बात नहीं है कि उनके इलेक्ट्रॉनिक विन्यास के बारे में कोई जानकारी न होने पर भी वेर्नर दुर्लभ मृदा तत्वों को आवर्त सारणी में सही जगह पर रखने में कामयाब हो गए।

एक और चुनौती आई 1894 में विलियम रैमजे और लॉर्ड रेले द्वारा की गई पहली अक्रिय गैस आर्गन की खोज के साथ। अधिकांश रसायनशास्त्रियों को यह खोज पसन्द नहीं आई, क्योंकि ऐसा प्रतीत हो रहा था कि, तत्वों के बारे में जो कुछ भी हमने खोजा और समझा था उसे रासायनिक रूप से अक्रिय आर्गन ख़तरे में डाल रही थी। इसके बाद अन्य अक्रिय गैसों जैसे हीलियम, निऑन, क्रिप्टॉन और जेनॉन की खोज ने इस संग्रह में और बढ़ोतरी कर दी। और इस वज़ह से आवर्त सारणी में एक ख़ास समूह बना, और उसकी जगह बनी हैलोजन तथा क्षारीय धातुओं के बीच में।

1898 में, मैरी क्यूरी और उनके पति पियैर ने पोलोनियम और रेडियम की खोज की, और 1911 तक, लगभग 30 रेडियोसक्रिय तत्व ज्ञात हो चुके थे। इन खोजों ने तत्वों की अवधारणात्मक समझ के समक्ष एक और चुनौती खड़ी की – ख़ासतौर पर इसलिए क्योंकि इनमें से कुछ तत्वों के रासायनिक गुण तो एक समान थे, पर परमाणु द्रव्यमान अलग-अलग थे। इससे स्वाभाविक तौर पर यह समस्या उभरी कि इन नए तत्वों को आवर्त सारणी में किस प्रकार और कहाँ रखना था। फ्रेडरिक सॉडी और कैजीमियैर्ज फाजांस ने इस समस्या का निराकरण कर दिया। उन्होंने यह कहा कि किसी तत्व के सभी समस्थानिकों (एक से रासायनिक गुणों वाले तत्वों के) को उस तत्व के साथ एक ही स्थान पर रखा जाना चाहिए, भले ही उनके परमाणु द्रव्यमान अलग हों।

परमाणु क्रमांक : तत्व का नया हस्ताक्षर

1913 में हैनरी मोजेली के कार्य ने दर्शाया कि आवर्त सारणी में किसी तत्व को रखे जाने के क्रमांक और उस तत्व द्वारा पैदा की जाने वाली एक्स-किरणों के बीच एक सुव्यवस्थित गणितीय सम्बन्ध होता है। और इस तरह, मोजेली पहली बार कई तत्वों के परमाणु क्रमांकों का आकलन कर सके। उनके इस काम के कारण आज, परमाणु द्रव्यमान की बजाय परमाणु क्रमांक (यानी, परमाणु के नाभिक में मौजूद प्रोटॉनों की संख्या) को अब किसी भी तत्व का हस्ताक्षर माना जाता है। मोजेली के कार्य द्वारा यह तथ्य भी निर्णायक रूप से सामने आया कि कुल 14 दुर्लभ मृदा तत्व थे, और उस समय तक नहीं खोजे गए दो तत्वों, हैफ्नियम और रीनियम, को जल्दी ही एक्स-किरणों के माध्यम से खोज लिया गया।

आवर्त सारणी में सबसे नया जुड़ाव हुआ है मनुष्यों द्वारा बनाए जा रहे नए तत्वों का। परिणामस्वरूप, तत्वों की अवधारणा का भी विकास हुआ है। पहले वे सिर्फ़ स्वाभाविक तौर पर पाए जाने वाले माने जाते थे, अब उनमें प्रयोगशालाओं के भीतर नाभिकीय बमबारी किए जाने पर होने वाले पदार्थ के रूपान्तरण से बनने वाले तत्वों को भी शामिल किया जाता है। नेप्टूनियम इस तरह कृत्रिम रूप से बनाया जाने वाला पहला तत्व था। 1940 में ऐडविन मैकमिलन और फिलिप ऐबलसन द्वारा बर्कले विकिरण प्रयोगशाला में इस ट्रांसयूरेनिक तत्व (जिन तत्वों के परमाणु क्रमांक 92, यानी यूरेनियम के परमाणु क्रमांक से अधिक हैं) के निर्माण के बाद ग्लैन सीबोर्ग और उनके सहकर्मियों द्वारा ट्रांसयूरेनिक तत्वों की व्यापक रचना की गई। इन नए बनाए गए तत्वों को आवर्त सारणी में जगह देना एक और बड़ी चुनौती थी, क्योंकि इनके होने का पूर्वानुमान किसी ने नहीं लगाया था! 1944 तक सीबोर्ग - जिन्होंने तत्वों के इस समूह को 'ऐक्टीनाइड' का नाम दिया था - ने आवर्त सारणी का एक नवीन संस्करण तैयार कर लिया था जिसमें इन तत्वों को दुर्लभ मृदा तत्वों (लैन्थेनाइड) के नीचे रखा गया था। ऐसा इस खोज के आधार पर किया गया था कि ऐक्टीनाइड समूह के तत्व उनके संगत लैन्थेनाइड तत्वों के सदृश थे, और इससे कई और कृत्रिम तत्वों की पहचान करने में मदद मिली।

शैक्षणिक उपकरण के रूप में आवर्त सारणी

तो अब हम आ जाते हैं आज की स्थिति में, जब हम आवर्त सारणी के व्यापक रूप से स्वीकृत दीर्घ रूप का इस्तेमाल करते हैं। बहुत लम्बी यात्रा रही, है न? और यह यात्रा अभी समाप्त नहीं हुई है क्योंकि आवर्त सारणी की क्रियात्मकता और उसके बाह्यरूप को सुधारने के प्रयास अब भी जारी हैं (ऐसे एक उदाहरण के लिए **चित्र-4** देखें)!

आवर्त सारणी में होने वाले सभी संशोधनों का दस्तावेज़ीकरण और उसका नवीनीकरण, शुद्ध और व्यवहारिक रसायन के अन्तर्राष्ट्रीय संघ (आईयूपीएसी) नामक एक वैश्विक संगठन द्वारा किया जाता है। इन संशोधनों में तकनीकी जानकारी में बदलाव, या नए तत्वों को जोड़ने जैसे कार्य शामिल हो सकते हैं। इस सारणी का नवीनतम संस्करण (जनवरी 2016) - जो शिक्षकों के लिए एक मानक सन्दर्भ है - में चार नए तत्वों को जोड़ा गया है, जो ख़बरों में भी रहे थे। इन्हें अभी सिर्फ़ 113, 115, 117 और 118 के रूप में जाना जाता है।

एक बात है जो आवर्त सारणी को रसायनविज्ञान के लिए, और आमतौर पर, विज्ञान की शिक्षा के लिए भी, अनमोल बना देती है। वह है इस हक़ीक़त को चित्रित करने का उसका असाधारण तरीक़ा, कि वैज्ञानिक ज्ञान किस गतिशील पर धीमी प्रक्रिया से गुज़रता है, और किस प्रकार इस प्रगति को धक्का देते रहना मनुष्य का एक सतत प्रयास है।

हम इस ऐतिहासिक यात्रा को इस आशा के साथ प्रस्तुत कर रहे हैं, कि इससे आवर्त सारणी पर (या विज्ञान में आप जो कुछ भी पढ़ें, उस पर) आपका नज़रिया और व्यापक हो जाएगा। हम आशा करते हैं, कि आवर्त सारणी को एक पूर्ण उत्पाद के रूप में देखने की बजाय आप इसे एक निरन्तर जारी, बड़ी मन मोहने वाली ऐसी कहानी के परिणाम के रूप में देख सकते हैं जिसके किरदार जिज्ञासु थे, मेहनती थे, और वे तार्किक चिन्तन-मनन के द्वारा ऐसे सवालों के पीछे पड़े रहे जिनके कोई स्पष्ट जवाब मौजूद नहीं थे।

तेजस जोशी, यूनिवर्सिटी कॉलेज लन्दन के इंस्टीट्यूट ऑफ एजुकेशन से विज्ञान शिक्षा में एमए कर रहे हैं। इसके पहले वे 2009 से होमी भाभा विज्ञान शिक्षा केन्द्र में काफ़ी समय रहे, जहाँ उन्होंने पहले एक बहुअवयवी कार्बनिक अभिक्रिया पर काम किया और फिर बाद में, रसायनविज्ञान के लिए सीखने के दृश्य स्रोत तैयार करने का काम किया। उनके हालिया प्रॉजैक्ट, सन्दर्भ आधारित सीखने, प्रयोगशाला के रसायनशास्त्र की शिक्षा, रसायनशास्त्र की शिक्षा के लिए मुक्त शिक्षण संसाधनों के विकास और संचार पर रहे हैं। अपने ख़ाली समय में, तेजस को चित्र बनाना, उनमें रंग भरना और बाग़वानी करने का शौक़ है। उनसे tejas@oldifluff.org. पर सम्पर्क किया जा सकता है।

सविता लाडागे होमी भाभा विज्ञान शिक्षा केन्द्र, टीआईएफआर में फ़ैकल्टी की सदस्य हैं। उन्होंने रसायनविज्ञान की शिक्षा में पीएचडी की है। भारत में होने वाले रसायनविज्ञान के ऑलम्पियाड कार्यक्रम में उनकी महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। वे 15 साल से भी अधिक समय से इसके लिए प्रश्न बनाने, प्रयोगशाला के कार्य देने और चयन के विभिन्न चरणों की समीक्षा करने के काम कर रही हैं। इसके साथ ही वे पूर्वस्नातक शिक्षा के लिए बने एनआईयूएस के रसायनशास्त्र कार्यक्रम को तैयार करने में भी योगदान देती हैं। उनकी शैक्षिक रुचियों में विश्लेषणात्मक रसायनविज्ञान, रसायनविज्ञान की शिक्षा, ख़ासतौर पर मिथ्या धारणाएँ और पूर्वस्नातक स्तर के रसायनविज्ञान के लिए प्रायोगिक कार्य तैयार करना शामिल हैं। उनसे savital@hbcse.tifr.res.in. पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** भरत त्रिपाठी

बल की वैकल्पिक अवधारणाओं की पड़ताल

सौरभ सोम

बल न्यूटोनियन यांत्रिकी की बहुत ही बुनियादी अवधारणा है और यह अपेक्षा की जाती है कि, शिक्षक और शिक्षक-प्रशिक्षक इसे अच्छी तरह से समझ लें। लेकिन न्यूटन के गति और गुरुत्वाकर्षण के नियमों से परिचित होने के बावजूद शिक्षक और शिक्षक-प्रशिक्षक बल के बारे में कई भ्रान्तियाँ पाले रहते हैं। यह लेख इन वैकल्पिक अवधारणाओं की जाँच-पड़ताल करने और उन्हें चुनौती देने के लिए प्रयोगों की एक पूरी शृंखला प्रस्तुत करता है।

बल को तथा न्यूटोनियन यांत्रिकी की अवधारणाओं को समझना प्रारम्भिक भौतिकी की बुनियाद है। लेकिन, यह भौतिकी का एक ऐसा हिस्सा भी है जिसे लेकर न सिर्फ़ विद्यार्थियों के बीच, बल्कि शिक्षकों और शिक्षक-प्रशिक्षकों[1-5] के बीच भी बहुत-सी वैकल्पिक अवधारणाएँ (या भ्रान्तियाँ) फैली हुई हैं। अक्सर तो, पेशेवर वैज्ञानिकों के पास भी इस बारे में अवधारणात्मक स्पष्टता नहीं होती।[6]

बल के बारे में अधिकांश भ्रान्तियाँ व्यक्तिगत ग़लतियों या संज्ञानात्मक सीमाओं की बजाय, ज़्यादा करके असल ज़िन्दगी के अनुभवों से उपजती हैं।

बल की प्रकृति के बारे में गैलीलियो-पूर्व और न्यूटन-पूर्व युगों की जो समझ थी, ये भ्रान्तियाँ किसी हद तक उससे मिलती-जुलती हैं। और ये इतनी गहराई तक लोगों के दिमाग़ में बैठी हुई हैं कि सिर्फ़ ग़लतियों की ओर इशारा कर देने से या सही जवाब बता देने से लोग इनमें बदलाव कर लेंगे, यह मुश्किल लगता है। इसकी बजाय, ज़रूरी यह है कि व्यक्ति विशेष की अवधारणात्मक संरचना की पड़ताल की जाए, और फिर संज्ञानात्मक टकराव पैदा करने के लिए तैयार की गई स्थितियों द्वारा इन अवधारणात्मक संरचनाओं को चुनौती दी जाए।[4]

बल कैसे काम करते हैं, इसके बारे में शिक्षकों और शिक्षक-प्रशिक्षकों की कुछ सबसे आम भ्रान्तियों को दूर करने के लिए आयोजित किए गए एक कार्यशाला सत्र में हुए अपने अनुभवों को इस लेख में प्रस्तुत किया गया है।

कार्यशाला के प्रतिभागियों के बारे में

बलों पर आयोजित इस सत्र में उन्नीस शिक्षक और आठ शिक्षक-प्रशिक्षक शामिल हुए। ये सभी उत्तर भारत के एक राज्य के एक ही ज़िले में कार्यरत हैं।

ये सभी शिक्षक कम-से-कम दस सालों से प्राथमिक, माध्यमिक और हाईस्कूलों में विज्ञान और/या पर्यावरण अध्ययन पढ़ा रहे हैं। इनमें से कुछ के पास विज्ञान में स्नातक/स्नातकोत्तर डिग्री भी है।

इसके विपरीत, सभी शिक्षक-प्रशिक्षकों के पास विज्ञान में कम-से-कम स्नातकोत्तर डिग्री तो है ही, और स्कूलों में पढ़ाने का तथा शिक्षक-प्रशिक्षण का 0-15 सालों तक का सम्मिलित अनुभव भी है।

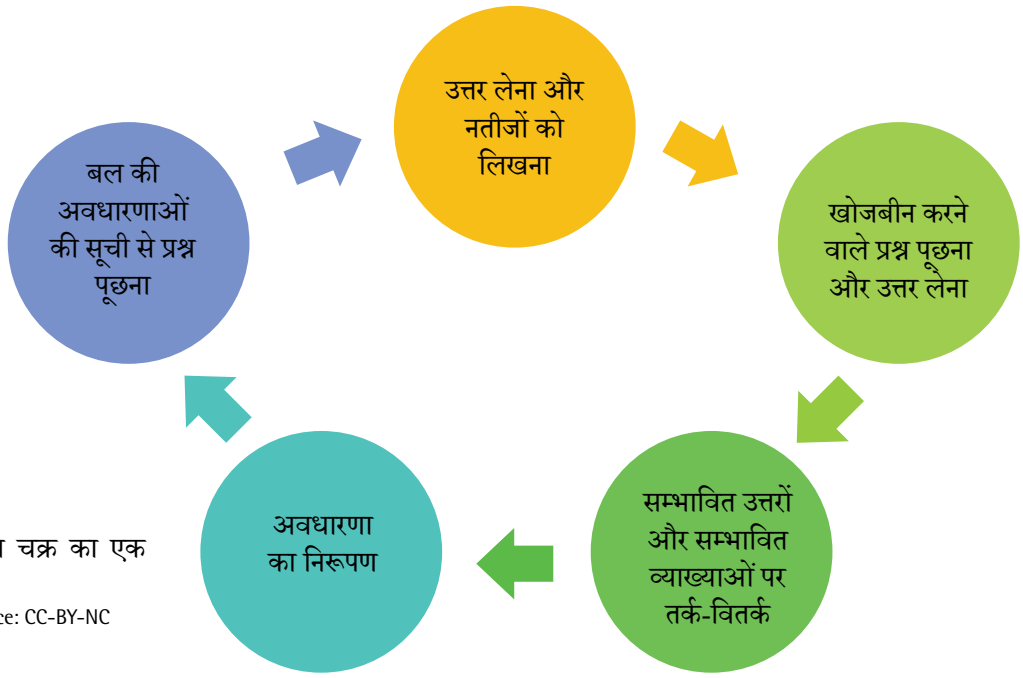

चित्र-1 : सत्र के प्रक्रिया चक्र का एक योजनात्मक आरेख।
Credits: Saurav Shome. Licence: CC-BY-NC

सत्र के ढाँचे का विवरण

इस सत्र को प्रतिभागियों के भीतर संज्ञानात्मक द्वन्द पैदा करने के उद्देश्य से रचा गया था। सत्र के प्रक्रिया चक्र का योजनात्मक आरेख **चित्र-1** में देखा जा सकता है।

सत्र के सामान्य प्रारूप के मुताबिक सबसे पहले, प्रतिभागियों के समक्ष कोई प्रश्न सन्दर्भ रखा गया, और फिर उनसे एक प्रश्न किया गया। प्रतिभागियों को प्रेरित किया गया कि वे अपने उत्तर, मौखिक रूप से बताए गए और बोर्ड पर लिखे कई सारे विकल्पों की सूची में से चुनें। हर प्रश्न के लिए, प्रतिभागी अपना विकल्प काग़ज़ की पर्ची पर लिख देते। फिर प्रश्नकर्ता इन पर्चियों को इकट्ठा कर लेते, और विभिन्न उत्तरों की आवृत्ति को नोट कर लेते। यह तरीक़ा उत्तरदाताओं की पहचान को गोपनीय रखने के लिए अपनाया गया।

पहले प्रश्न के अलावा, बाक़ी सभी प्रश्न बल की अवधारणाओं की सूची या एफसीआई[7] से लिए गए थे और सन्दर्भ के मुताबिक ढाल दिए गए थे। प्रश्नों को, और उत्तरों को भी, नए ढंग से व्यक्त किया गया ताकि वे

हम बल को कितनी अच्छी तरह से समझते हैं?

कोई गति नहीं, कोई बल नहीं!

प्रश्न-1 : एक ही दिशा की ओर मुड़ी हुई, बिलकुल एक-सी दो कुर्सियाँ, **अ** और **ब** हैं। एक व्यक्ति, **अ** कुर्सी पर बैठता है, और अपने हाथों को **ब** कुर्सी के पिछले हिस्से पर रख देता है। अचानक, वह व्यक्ति **ब** कुर्सी को धक्का देता है। इस धक्के के परिणाम को देखें। इस स्थिति में, निम्नलिखित में से कौन-सा कथन सही होगा?

i. न तो वह व्यक्ति और न ही **ब** कुर्सी एक-दूसरे पर कोई बल लगाते हैं।
ii. वह व्यक्ति **ब** कुर्सी पर बल लगाता है, पर कुर्सी उस व्यक्ति पर कोई बल नहीं लगाती।
iii. व्यक्ति और कुर्सी, दोनों एक-दूसरे पर बल लगाते हैं, लेकिन कुर्सी व्यक्ति पर ज़्यादा बल लगाती है।
iv. व्यक्ति और **ब** कुर्सी, दोनों एक-दूसरे पर बल लगाते हैं, लेकिन व्यक्ति कुर्सी पर ज़्यादा बल लगाता है।
v. व्यक्ति और कुर्सी एक-दूसरे पर एक जैसा बल लगाते हैं।

आप कौन-सा विकल्प चुनेंगे?

चित्र-2 : **अ** कुर्सी पर बैठा व्यक्ति, **ब** कुर्सी को धक्का देते हुए
Credits: Saurav Shome. License: CC-BY-NC

प्रतिभागियों के उत्तर : 22 (81%) प्रतिभागियों ने विकल्प नम्बर 2 चुना, जबकि पाँच (19%) प्रतिभागियों ने विकल्प नम्बर 5 चुना।

सरल हो जाएँ तथा प्रतिभागियों के लिए और ज़्यादा प्रासंगिक बन सकें। इसके अलावा, बहुविकल्पों की भाषा और क्रम में भी कुछ बदलाव कर दिए गए थे, ख़ासतौर से इसलिए ताकि ये प्रश्न मौखिक रूप में हिन्दी (क्योंकि प्रतिभागी इसी भाषा से सबसे ज़्यादा परिचित थे) में पूछे जा सकें।

उत्तरों की आवृत्ति को लिख लेने के बाद, प्रश्नकर्ता प्रतिभागियों से पड़ताल करने वाले प्रश्न पूछते ताकि चर्चाओं की और तर्क-वितर्क की शुरुआत हो सके। कुछ मामलों में, प्रश्नकर्ता विभिन्न प्रकार के उत्तरों पर चर्चा करते हुए नई अवधारणाओं को भी प्रतिभागियों के सामने रखते। जब किसी प्रश्न पर ख़ूब विस्तार से चर्चा कर ली जाती, और प्रतिभागियों में काफ़ी हद तक उसकी समझ दिखने लगती, तभी प्रश्नकर्ता अगले प्रश्न पर जाते।

उत्तर-1 : प्रश्न 1 का सही उत्तर, विकल्प नम्बर 5 में दिया गया है। फिर अधिकांश प्रतिभागियों ने विकल्प नम्बर 2 क्यों चुना?

प्रतिभागियों ने व्यावहारिक रूप से **अ** कुर्सी में कोई गति नहीं देखी, और इसके विपरीत, **ब** कुर्सी में उन्होंने अच्छी-ख़ासी गति देखी। उन्होंने बल लगाने को किसी वस्तु के गति करने से जोड़ लिया जो इस मामले में, एक कुर्सी का गति करना था। न्यूटन के गति के पहले नियम का ज़िक्र करते हुए प्रतिभागियों ने यह तर्क दिया कि चूँकि **अ** कुर्सी विराम की स्थिति में ही रही, इसलिए उस पर कोई बल काम नहीं कर रहा था।

उनकी यह बात ग़लत क्यों है? इस बात पर ध्यान देना ज़रूरी है कि इस विकल्प को चुनते समय, प्रतिभागियों ने दो महत्त्वपूर्ण तथ्यों की अनदेखी की - एक तो न्यूटन के गति के तीसरे नियम की, और घर्षण के बल की। न्यूटन के गति के तीसरे नियम के अनुसार, जब **अ** कुर्सी पर बैठा व्यक्ति **ब** कुर्सी पर बल लगाता है, तो **ब** कुर्सी भी ठीक उतना ही बल **अ** कुर्सी पर बैठे उस व्यक्ति पर लगाती है। पर जब ये दो कुर्सियाँ इस बल और गति का अनुभव करती हैं, तभी एक अन्य बल, घर्षण का बल, अपना काम शुरू कर देता है, और वह दोनों ही कुर्सियों के चकों के घूमने की दिशा की ठीक उलटी दिशा में काम करता है। दोनों कुर्सियों के भारों में अन्तर का असर यह होता है कि यद्यपि वे दोनों कुर्सियाँ धक्के के एक समान बल को झेलती हैं, पर वे एक से घर्षण बल

प्रश्न-2 : प्रश्न 1 के ही समान परिदृश्य की कल्पना करें। अन्तर सिर्फ़ यह है कि इस बार एक व्यक्ति **ब** कुर्सी पर भी बैठा है। **ब** कुर्सी पर बैठे व्यक्ति का द्रव्यमान, **अ** कुर्सी पर बैठे व्यक्ति के द्रव्यमान का लगभग 1.5 गुना है। **अ** कुर्सी पर बैठा व्यक्ति **ब** कुर्सी को अचानक धक्का देता है। देखें कि क्या होता है, और नीचे दिए गए कथनों में से ऐसा होने का सही स्पष्टीकरण चुनें।

i. न तो **अ** कुर्सी पर बैठा व्यक्ति, और न ही **ब** कुर्सी पर बैठा व्यक्ति एक-दूसरे पर कोई बल लगाते हैं।

ii. **अ** कुर्सी पर बैठा व्यक्ति, **ब** कुर्सी पर बल लगाता है, पर **ब** कुर्सी उस व्यक्ति पर कोई बल नहीं लगाती।

iii. **ब** कुर्सी, और **अ** कुर्सी पर बैठा व्यक्ति, एक-दूसरे पर बल लगाते हैं, लेकिन कुर्सी व्यक्ति पर अधिक बल लगाती है।

iv. **ब** कुर्सी, और **अ** कुर्सी पर बैठा व्यक्ति, दोनों एक-दूसरे पर बल लगाते हैं, लेकिन व्यक्ति कुर्सी पर अधिक बल लगाता है।

v. **ब** कुर्सी, और **अ** कुर्सी पर बैठा व्यक्ति, दोनों एक-दूसरे पर एक समान बल लगाते हैं।

vi. **ब** कुर्सी, **अ** कुर्सी पर बैठे व्यक्ति पर बल लगाती है, लेकिन **अ** कुर्सी पर बैठा व्यक्ति, **ब** कुर्सी पर बल नहीं लगाता।

आप कौन-सा विकल्प चुनेंगे?

चित्र-3 : **अ** कुर्सी पर बैठा व्यक्ति **ब** कुर्सी को धक्का देते हुए जिस पर दूसरा व्यक्ति बैठा हुआ है।
Credits: Saurav Shome. License: CC-BY-NC.

प्रतिभागियों के उत्तर : पन्द्रह (56%) प्रतिभागियों ने विकल्प नम्बर 3 चुना, पाँच (18%) ने विकल्प नम्बर 5 चुना, तीन (12%) ने विकल्प नम्बर 6 चुना, दो (7%) ने विकल्प नम्बर 2 चुना, और एक (4%) ने विकल्प नम्बर 1 चुना।

का अनुभव नहीं करतीं। चूँकि **अ** कुर्सी पर उसके ऊपर बैठे हुए व्यक्ति का अतिरिक्त भार भी है, अतः उसे, **ब** कुर्सी पर लगने वाले घर्षण बल की तुलना में अधिक घर्षण बल झेलना पड़ता है। इस वजह से दोनों कुर्सियाँ अलग-अलग दूरियों तक जाती हैं।

दिलचस्प बात है कि, जब प्रतिभागियों से न्यूटन के गति के तीसरे नियम के बारे में पूछा गया तो सभी ने बता दिया - "प्रत्येक क्रिया की सदैव बराबर एवं विपरीत दिशा में प्रतिक्रिया होती है", लेकिन इसे जानने का उनके उत्तरों पर कोई असर नहीं पड़ा।

उत्तर-2 : प्रश्न 2 का सही उत्तर विकल्प नम्बर 5 में दिया गया है। फिर प्रतिभागियों के उत्तरों में इतनी भिन्नता क्यों थी?

यह बिलकुल स्पष्ट है कि उन प्रतिभागियों ने, जिन्होंने विकल्प नम्बर 3 चुना, न्यूटन के गति के दूसरे नियम की अनदेखी की। सिर्फ़ तय की गई दूरी या पैदा हुए त्वरण की तुलना कर लेना यह निष्कर्ष निकालने के लिए काफ़ी नहीं है कि दोनों वस्तुओं पर लगने वाले बल की मात्रा एक-सी नहीं है। हमें दोनों वस्तुओं का द्रव्यमान भी जानना होगा। इसी प्रकार उन प्रतिभागियों ने, जिन्होंने विकल्प नम्बर 6 चुना, **ब** कुर्सी की गति को अनदेखा किया, क्योंकि वह **अ** कुर्सी की गति की तुलना में बहुत कम थी। इन दोनों ही मामलों में, उत्तरदाताओं ने दोनों वस्तुओं पर लग रहे बल की मात्रा का आकलन करने के लिए दोनों कुर्सियों द्वारा तय की गई दूरियों का तो सहारा लिया, लेकिन उनके अपने-अपने द्रव्यमानों की अनदेखी की। जिन दो प्रतिभागियों ने विकल्प नम्बर 2 चुना, उन्होंने यह गलत धारणा बनाई कि सिर्फ़ सजीव वस्तुएँ या वे वस्तुएँ जिनके पास धक्का देने का इरादा हो, ही बल लगा सकती हैं। एक प्रतिभागी ने तो यह भी कहा कि न तो वह व्यक्ति और न ही कुर्सी एक-दूसरे पर कोई बल लगा रहे थे - विकल्प नम्बर 1।

इस पड़ाव पर, प्रतिभागियों से, प्रश्न 1 और प्रश्न 2 के लिए उनके द्वारा दिए गए उत्तरों की तुलना करने के लिए कहा गया। हालाँकि कई मामलों में, इन दो निरूपणों से प्राप्त उत्तर परस्पर विरोधी थे, लेकिन दोनों ही के उत्तर बल के बारे में उनके भीतर बैठी एक-सी भ्रान्तियों से निकले थे। अधिकांश प्रतिभागियों ने पहले निरूपण को समझाने के लिए यह कहा था कि सिर्फ़ **अ** कुर्सी पर बैठा व्यक्ति ही **ब** कुर्सी पर बल लगा रहा था। और दूसरे निरूपण में, अधिकांश प्रतिभागियों ने कहा था कि **अ** कुर्सी पर बैठा व्यक्ति और **ब** कुर्सी, दोनों ही एक-दूसरे पर बल लगा रहे थे, लेकिन दोनों बलों के परिमाण में असमानता थी। पहले मामले में, **ब** कुर्सी ख़ाली थी, और दूसरे मामले में, इस कुर्सी पर एक गतिहीन व्यक्ति बैठा हुआ था, जो कि **अ** कुर्सी पर बैठे हुए व्यक्ति से भारी था।

यह पहले बताया गया है कि इन दोनों ही प्रश्नों के उत्तर देते वक्त अधिकांश प्रतिभागियों ने वस्तु पर लगने वाले बल के साथ सिर्फ़ वस्तुओं द्वारा की जाने वाली गति की मात्रा को जोड़कर देखा था। हालाँकि प्रोत्साहित करने वाली बात यह है कि इससे प्रतिभागियों के बीच एक चर्चा छिड़ गई जिसमें उन्होंने इन अन्तर्विरोधों को स्वीकार करना और उन पर चिन्तन करना शुरू किया। हालाँकि वे अभी भी दोनों में से किसी भी प्रश्न की स्थितियों पर न्यूटन के गति के तीसरे नियम को लागू नहीं कर पा रहे थे।

भारी और हल्की, दोनों ही वस्तुएँ एक ही समय पर ज़मीन पर गिरती हैं।

प्रश्न-3 : नीचे दिए गए तीनों परिदृश्यों में, एक-सी ऊँचाई से दो वस्तुएँ गिराई जाती हैं। इनमें से कौन-सी वस्तु ज़मीन पर पहले गिरेगी?

परिदृश्य 1. एक ख़ाली बोतल बनाम पानी से पूरी तरह से भरी हुई एक बोतल।

परिदृश्य 2. एक बटुआ बनाम काग़ज़ का एक पन्ना।

परिदृश्य 3. एक कॉपी बनाम उसी कॉपी का एक पन्ना।

आप क्या कहेंगे कि इनमें से कौन-सी वस्तुएँ पहले नीचे गिरेंगी?

गुरुत्वाकर्षण बल सभी वस्तुओं पर एक समान लगता है!

प्रश्न-4 : कल्पना करें कि एक से आकार की लोहे की दो गेंदें एक क्षैतिज मेज़ पर बिलकुल एक समान वेग से लुढ़क रही हैं। इनमें से एक गेंद अन्दर से खोखली है, जबकि दूसरी गेंद ठोस है। ठोस गेंद, खोखली गेंद से 10 गुना भारी है। दोनों गेंदें एक ही समय पर मेज़ के किनारों से गिरती हैं। खोखली गेंद, मेज़ के आधार भाग से DH की क्षैतिज दूरी पर ज़मीन को छूती है, जबकि ठोस गेंद मेज़ के आधार भाग से, आड़े-तिरछे जाते हुए DS की क्षैतिज दूरी तय करती है। DH और DS के बीच के सम्बन्ध को निम्नलिखित में से कौन-सा कथन सबसे सही रूप में बताता है?

i. DH > DS

ii. DH < DS

iii. DH = DS

प्रतिभागियों के उत्तर : सत्रह (65%) प्रतिभागियों ने विकल्प नम्बर 1 को चुना, एक (4%) ने विकल्प नम्बर 2 को चुना, और आठ (31%) ने विकल्प नम्बर 3 को चुना।

आप कौन-से विकल्प को चुनेंगे?

इस मोड़ पर भी, इन दो प्रश्नों के सही उत्तर बताने या समझाने की कोई कोशिश नहीं की गई। इसकी बजाय, कुर्सियों की असमान गति को समझने में प्रतिभागियों की मदद करने के लिए प्रश्नकर्ता ने न्यूटन के गुरुत्वाकर्षण नियम के साथ उनका परिचय कराया। न्यूटन के गति के तीन नियमों और न्यूटन के गुरुत्वाकर्षण के नियम के बीच सम्बन्ध की ओर प्रतिभागियों का ध्यान

प्रेरक बल के कारण गति!

प्रश्न-5 : एक लड़की क्रिकेट की गेंद को फेंकती है, जैसा कि **चित्र-4** में दिखाया गया है। गेंद की उड़ान के दौरान उस पर, **अ**, **ब** और **स** बिन्दुओं पर कौन-सा/कौन-से बल लगता/लगते हैं? गेंद पर पड़ने वाले वायु प्रतिरोध के प्रभाव के बारे में कृपया कोई विचार न करें।

आप इस प्रश्न का उत्तर किस प्रकार देंगे?

आकर्षित करने के लिए ख़ासतौर से यह बताया गया कि पृथ्वी द्वारा किसी भी वस्तु पर लगने वाला बल, उस वस्तु द्वारा पृथ्वी पर लगने वाले बल के ठीक बराबर होता है।

उत्तर-3 : **पहला परिदृश्य** सामने रखे जाने पर, प्रतिभागियों ने पूर्वानुमान लगाया कि दोनों बोतलें एक ही समय पर ज़मीन पर गिरेंगी। इसे प्रमाणित करने के लिए, पानी की दो बोतलों (एक ख़ाली, एक भरी) के साथ यह प्रयोग किया गया। जैसा कि प्रतिभागियों का सुझाव था, दोनों बोतलों को उत्तरोत्तर बढ़ती ऊँचाइयों से फेंका गया। जैसा कि पूर्वानुमान उन्होंने लगाया था, हर बार, दोनों बोतलें लगभग एक ही समय पर ज़मीन पर गिरीं।

दूसरे परिदृश्य के उत्तर में, प्रतिभागियों ने पूर्वानुमान लगाया कि बटुआ, काग़ज़ के पन्ने की तुलना में ज़मीन पर जल्दी गिरेगा। और प्रयोग करने पर उनका यह पूर्वानुमान सही सिद्ध हो गया। जब प्रतिभागियों से उनके इस अवलोकन का कारण पूछा गया, तो उन्होंने इस ओर इशारा किया कि काग़ज़ के अपेक्षाकृत अधिक पृष्ठीय क्षेत्रफल से होने वाले अधिक वायु प्रतिरोध के कारण काग़ज़, बटुए की तुलना में धीरे गिरता है।

तीसरे परिदृश्य को प्रस्तुत करने के लिए, एक कॉपी और उसी कॉपी में से एक पन्ना लिया गया ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि दोनों ही वस्तुओं का पृष्ठीय क्षेत्रफल एक समान हो। इन वस्तुओं को एक निश्चित ऊँचाई से गिराते वक़्त दोनों का मुँह क्षैतिज दिशा में रखा गया। कॉपी की तुलना में काग़ज़ धीरे गिरा। प्रतिभागियों को यह बताया गया कि ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि हल्का होने की वजह से काग़ज़, अपेक्षाकृत भारी कॉपी की तुलना में वायु प्रतिरोध से आसानी से पार नहीं पा सका। इसके विपरीत, जब इन दो वस्तुओं को, इनके मुँह को लम्बवत रखकर नीचे फेंका गया तो दोनों लगभग एक ही समय पर नीचे गिरीं।

इन प्रयोगों से सभी प्रतिभागियों ने इस बात को स्वीकार किया, कि सभी वस्तुएँ, भले ही उनका द्रव्यमान कुछ भी हो, अगर एक-सी ऊँचाई से फेंकी जाती हैं तो वे ज़मीन पर लगभग एक ही समय पर गिरती हैं।

उत्तर-4 : इस प्रश्न का सही उत्तर विकल्प नम्बर 3 में दिया गया है। फिर अधिकांश प्रतिभागियों के उत्तर इससे भिन्न क्यों थे?

प्रतिभागी इस प्रश्न की परिस्थिति में गुरुत्वाकर्षण बल की अपनी समझ को लागू कर सकें, इसके लिए किए गए प्रयास में प्रश्नकर्ता ने प्रतिभागियों से उन बलों के नाम पूछे जो मेज़ की सतह को छोड़ने पर गेंदों पर लग रहे थे। जहाँ कुछ प्रतिभागियों ने गुरुत्वाकर्षण बल का नाम लिया, वहीं एक प्रतिभागी ने दलील दी कि गुरुत्वाकर्षण बल तो गेंदों पर तब भी लग रहा था जब वे मेज़ की सतह पर गति कर रही थीं। विकल्प नम्बर 1 के चुनाव को सही ठहराते हुए प्रतिभागियों ने इस स्थिति की तुलना, हल्की और भारी वस्तुएँ फेंकने के असल ज़िन्दगी के अनुभवों से की, और दलील दी

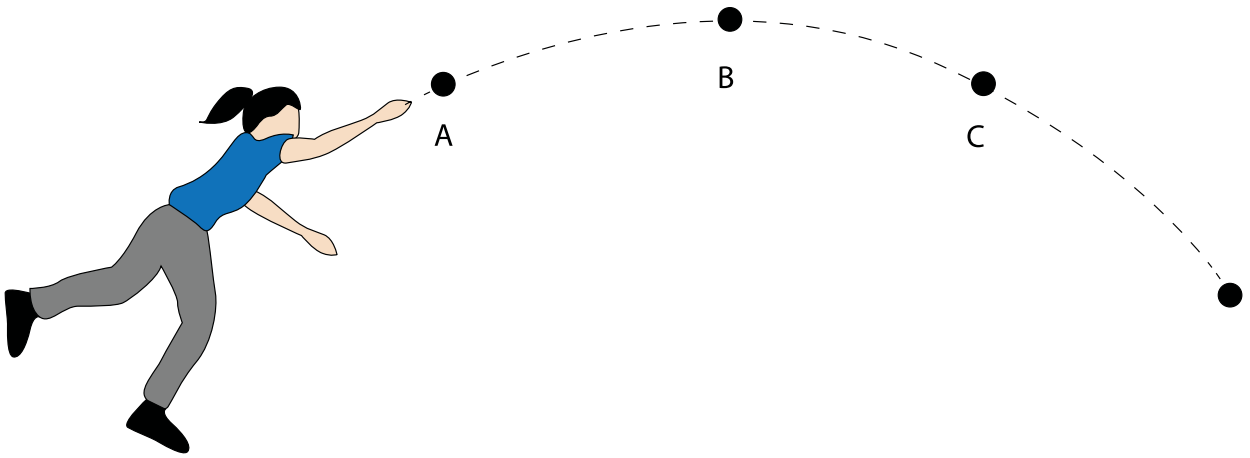

चित्र-4: एक लड़की द्वारा फेंकी गई गेंद पर विभिन्न बल लगते हैं। Credits: Saurav Shome. License: CC-BY-NC

कि समान बल के साथ फेंकने पर भी भारी वस्तुओं की तुलना में हल्की वस्तुएँ ज़्यादा दूर जाती हैं।

यह दिलचस्प बात है कि न्यूटन के गुरुत्वाकर्षण के नियम से अवगत होने के बाद भी, प्रतिभागियों का नज़रिया अभी भी यही था कि गुरुत्वाकर्षण बल का परिमाण उस वस्तु के द्रव्यमान से स्वतंत्र होता है जिस पर वह लग रहा होता है। इस प्रश्न से पहले किए गए, ज़मीन पर एक साथ गिरने वाली विभिन्न वस्तुओं के प्रयोगों ने प्रतिभागियों की इस भ्रान्ति को चुनौती नहीं दी। सभी वस्तुएँ पृथ्वी की ओर समान तेज़ी-से गिरती हैं, और इसका कारण इन वस्तुओं पर लगने वाला समान गुरुत्वाकर्षण बल न होकर वस्तुओं में पैदा हुआ समान त्वरण होता है। प्रतिभागियों ने ग़लती करते हुए समान त्वरण को समान बल के बराबर मान लिया।

इस प्रश्न के उत्तरों ने बलों के ऐसे तीन और पहलुओं को स्पष्ट कर दिया जिन्हें समझना मुश्किल होता है :

1. गति की दिशा के लम्बवत लग रहा बल कोई काम नहीं करता।
2. न्यूटन के गति के नियम, किसी वस्तु पर एक साथ लग रहे विभिन्न बलों के वियोजन का पूर्वानुमान लगाने में मदद करते हैं।
3. किसी वस्तु की गति को बनाए रखने के लिए प्रेरक बल की कोई ज़रूरत नहीं होती।

उत्तर-5 : प्रतिभागियों द्वारा दिए गए उत्तर बड़े दिलचस्प और विविध प्रकार के थे। सभी प्रतिभागियों की राय थी कि बिन्दु **अ** पर, गेंद पर दो बल लग रहे थे। एक, गुरुत्वाकर्षण का बल, और दूसरा वह बल जिसके साथ गेंद फेंकी गई थी। कुछ प्रतिभागियों ने यह भी सही कहा कि गेंद पर वायु घर्षण का बल भी लग रहा था।

लेकिन, बिन्दुओं **ब** और **स** पर, गेंद पर लगने वाले बलों की प्रकृति को लेकर प्रतिभागियों के नज़रिये अलग-अलग थे। दस (38%) प्रतिभागियों का सोचना था कि गेंद को फेंकने का बल बिन्दु **ब** पर शून्य हो जाएगा, और जब तक गेंद बिन्दु **स** पर पहुँची तो उस पर सिर्फ़ गुरुत्वाकर्षण का बल ही लग रहा था। इसके विपरीत, 16 (62%) प्रतिभागियों का यह सोचना था कि गेंद पर, फेंकने का बल उसके ज़मीन छूने तक बना रहेगा। लेकिन, इस फेंकने के बल का परिमाण गेंद के प्रक्षेप पथ के हर बिन्दु पर घटता जाएगा। इसलिए, बिन्दु **ब** पर, यह बल गुरुत्वाकर्षण बल के बराबर हो जाएगा, और बिन्दु **स** पर, यह गुरुत्वाकर्षण बल की तुलना में काफ़ी कमज़ोर हो जाएगा।

इस बिन्दु पर, बल्ले से मारे जाने पर एक गेंद के प्रक्षेप पथ का प्रदर्शन किया गया, और प्रतिभागियों से यह पूर्वानुमान लगाने को कहा गया कि गेंद पर, बल्ले से मारे जाने का बल कितने लम्बे समय तक लगता रहेगा। सभी प्रतिभागियों ने उत्तर दिया कि यह बल, गेंद के ज़मीन पर पहुँच जाने तक उस पर लगता रहेगा। प्रतिभागियों को यह बताते हुए कि जिस व्यक्ति ने गेंद को बल्ले से मारा था, वह गेंद के साथ-साथ नहीं चल रहा था, उनसे यह पूछा गया कि गेंद को जिस बल के साथ मारा गया था वह गेंद के साथ-साथ कैसे चलेगा? इसके अलावा, अगर बल्ले से मारे जाने का बल गेंद के साथ-साथ चल रहा था तो फिर गेंद और आगे जाने की बजाय एक निश्चित दूरी तक जाने के बाद रुक क्यों गई? और बाद में, जब गेंद और बल्ले के बीच कोई सम्पर्क ही नहीं रह गया था तो फिर बल्ले से मारे जाने का बल गेंद पर स्थानान्तरित कैसे हो गया?

इस बिन्दु को और स्पष्ट करने के लिए, प्रतिभागियों से उस स्थिति पर विचार करने के लिए कहा गया जब परिदृश्य तो यही हो लेकिन गेंद पर कोई गुरुत्वाकर्षण बल न लग रहा हो। न्यूटन के गति के पहले नियम के अनुसार, गुरुत्वाकर्षण से मुक्त किसी परिवेश में गेंद को फेंके जाने पर क्या होगा? गेंद का प्रक्षेप पथ क्या होगा? इस स्थिति पर न्यूटन का गति का पहला नियम लागू करने से प्रतिभागी यह पूर्वानुमान लगा सके कि गेंद एक सीधी रेखा में गति करती रहेगी। उन्होंने यह भी समझाया कि ऐसा गति के जड़त्व के कारण होगा, न कि गेंद को बल्ले से मारे जाने के बल के कारण। लेकिन, गुरुत्वाकर्षण बल के होने पर गेंद घुमावदार पथ पर गति करती है। इससे प्रतिभागियों ने यह निष्कर्ष निकाला कि जब गेंद पर बल्ले से प्रहार किया गया, उसके बाद उस पर सिर्फ़ एक ही बल लगता रहा, और यह बल था गुरुत्वाकर्षण बल।

दिलचस्प बात यह है कि कुछ प्रतिभागियों ने इस स्पष्टीकरण पर असन्तोष जताया। उदाहरण के लिए, एक प्रतिभागी ने कहा, "यह कैसे सम्भव है कि, गेंद गुरुत्वाकर्षण बल के प्रभाव में अपना प्रक्षेप पथ बना लेती है, और उसके गति करने की दिशा में और कोई भी बल नहीं लग रहा था?"

इस चर्चा को फिर वापस प्रश्न-3 पर लाया गया, और प्रतिभागियों को याद दिलाया गया कि वस्तुओं का द्रव्यमान कुछ भी हो, वे सभी समान त्वरण के साथ पृथ्वी पर गिरती हैं। यह सुनने पर, कुछ प्रतिभागियों ने यह निष्कर्ष निकाला कि प्रश्न-4 की दोनों गेंदें ज़मीन पर पहुँचने में समान वक़्त लगाएँगी। इस सत्र के अन्त तक, कई प्रतिभागी इस तथ्य को समझने लगे थे कि न्यूटन के गति के तीसरे नियम का मतलब यह था कि बल जोड़ों में काम करते हैं, और मुक्त रूप से गिर रही वस्तुओं पर सिर्फ़ गुरुत्वाकर्षण बल लगता है। लेकिन अभी भी, तीसरे प्रश्न का उत्तर नहीं मिल पाया था।

निष्कर्ष

विज्ञान के कई विद्यार्थी और शिक्षक बल, ऊर्जा और संवेग में अन्तर करना बहुत मुश्किल पाते हैं।

प्रतिभागियों को यह बात याद दिलाई गई,

कि ऊर्जा और संवेग वस्तु की संरक्षित राशियाँ और गुण होते हैं, जो उसके साथ चलते रहते हैं, जबकि बल न तो वस्तु के साथ-साथ चलता है और न ही वह संरक्षित ही रहता है। लेकिन यह समझ में आया कि प्रतिभागियों की समझ में अवधारणात्मक बदलाव लाने के लिए, सिर्फ़ ये कथन पर्याप्त नहीं हैं। उदाहरण के लिए, इस कार्यशाला सत्र के प्रतिभागी न्यूटन के गति के नियमों और गुरुत्वाकर्षण के नियम को बता पाए, लेकिन उन्होंने इन दोनों ही नियमों की अपर्याप्त समझ दर्शाई। उनमें बल को गति से जोड़ने की प्रवृत्ति दिखाई दी, बनिस्बत जड़त्व को गति से जोड़ने के, जबकि यह विचार प्रेरक बल के विचार से मिलता-जुलता है।

इसी प्रकार, हो सकता है कि बल पर होने वाली क्रियाओं को दिखाने के लिए किए जाने वाले प्रयोग भी विद्यार्थियों के भीतर गैलीलियन और न्यूटोनियन यांत्रिकी में बल की अवधारणात्मक समझ पैदा करने के लिए काफ़ी न हों। उदाहरण के लिए, इस बात को, कि मुक्त रूप से गिरने वाली सभी वस्तुएँ ज़मीन की तरफ़ समान तेज़ी-से जाती हैं, विस्तृत प्रयोगों के माध्यम से दिखाने के बावजूद प्रतिभागी अपनी इस शुरुआती समझ से ही चिपके रहे कि किसी वस्तु का द्रव्यमान, उस वस्तु द्वारा ज़मीन पर पहुँचने के बाद तय की गई आड़ी-तिरछी क्षैतिज दूरी को प्रभावित करता है। ऐसा प्रतीत हुआ कि उनकी वैकल्पिक धारणाएँ कम-से-कम तीन स्तरों पर भौतिक राशियों के बीच फ़र्क़ करने में उनकी असमर्थता से उपजती हैं। ये हैं **अ)** यांत्रिक बल और गुरुत्वाकर्षण बल, **ब)** ऊर्जा और बल, **स)** वेग और त्वरण।

शिक्षकों के साथ किए गए अपने सर्वेक्षण से हमें ऐसा लगता है कि सहज बुद्धि के विपरीत जाने वाले उदाहरणों के इर्द-गिर्द प्रश्न पूछना, शिक्षकों के लिए, विद्यार्थियों को उनके सीखने से जुड़ी भ्रान्तियों को दूर करने में मदद करने का बहुत अच्छा तरीक़ा हो सकता है। हमने ऐसे कुछ उदाहरणों को समझाया है। लेकिन इनमें कई तरीक़ों से बदलाव किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, प्रश्न 1 और 2 के उत्तरों की चर्चा करते हुए, दूसरे तरह के प्रदर्शनों को प्रयोग में भी शामिल किया जा सकता है। जैसे विद्यार्थियों की अदला-बदली कर दी जाए, या अपेक्षाकृत अधिक वज़न वाले विद्यार्थी को **अ** कुर्सी पर बैठा दिया जाए, कम वज़नी विद्यार्थी को **ब** कुर्सी पर बैठा दिया जाए, और ज़्यादा वज़नी विद्यार्थी **ब** कुर्सी को धक्का दे। या फिर, दोनों कुर्सियों के द्रव्यमानों को बराबर कर दिया जाए, और हरेक स्थिति में कुर्सियों द्वारा सापेक्ष दूरियों की तुलना की जाए। प्रयोगों के क्रम और बीच में किए जाने वाले प्रश्नों को इस प्रकार बनाया जा सकता है कि, वे चर्चाओं में उभरने वाली अवधारणात्मक 'कठिनाइयों' के साथ जुड़ जाएँ। प्रश्न-4 की परिस्थिति में यह किया जा सकता है कि, खोखली और ठोस गेंदों को उत्तरोत्तर बढ़ती ऊँचाइयों से गिराया जाए।

अब आपकी बारी है। अपने विद्यार्थियों के साथ आज ही इनमें से कुछ प्रयोगों को करें। हो सकता है कि आप उनके उत्तरों को जानकर अचरज करें!

Note: Credits for the image used in the background of the article title: Accelerated freefall. Tony Danbury. Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:AFF_Level_1_-_Skydive_Langar.jpg. License: CC-BY.

आभार : लेखक कार्यशाला में आए प्रतिभागियों; जिला संस्थान, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, ऊधम सिंह नगर के विज्ञान दल के सदस्यों और अज्ञात समीक्षकों के आभारी हैं। इसके अलावा, लेखक इस लेख को पढ़ने योग्य और प्रकाशित करने योग्य बनाने में अपना योगदान देने के लिए चित्रा और राम जी के भी ऋणी हैं।

References

1. Clement, J. (1982). Students' preconceptions in introductory mechanics. American Journal of Physics, 50(1), 66-71.
2. Halloun, I. A., & Hestenes, D. (1985). Common sense concepts about motion. American Journal of Physics, 53(11), 1056-1065.
3. Rampal, A. (1995). Where the force is absent? Sandarbh, 3 (1), 19-33.
4. Trumper, R. (1995). The Need for Change in Elementary-school Teacher Training: The force concept as an example. Asia-Pacific Journal of Teacher Education, 26 (1), 7-25.
5. Shome, S. (2013). When objects fail to move despite force being exerted! Voices of Teachers and Teacher Educators, 2 (2), 38-43.
6. Jammer, M. (1962). Concepts of force. USA: Harper Torchbook.
7. Hestenes, D., Wells, M., and Swackhamer, G. (1992). Force concept inventory. The Physics Teacher, 30 (3), 141 – 158.

सौरभ सोम अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन में काम करते हैं। उनसे sauravshome@azimpremjifoundation.org या shome-saurav@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** भरत त्रिपाठी

परागणकर्ता : पौधों के प्रवर्धक

मीनाक्षी पन्त

अपनी आनुवंशिक विविधता को बनाए रखने के लिए पौधे विभिन्न प्रकार के जन्तु परागणकर्ताओं को रिझाते हैं। यह लेख पौधों द्वारा विशिष्ट परागणकर्ताओं को आकर्षित करने के लिए अपनाई जाने वाली विभिन्न विधियों की यह बताते हुए छानबीन करता है, कि किस प्रकार ये सह-विकसित पारस्परिक सम्बन्ध इस पृथ्वी पर जीवन के लिए महत्त्वपूर्ण हैं।

"जीवन ने दुनिया को युद्ध से नहीं, आपसी सहयोग से जीता है।"

-लिन मार्गुलिस

प्रसिद्ध विकासवादी जीववैज्ञानिक लिन मार्गुलिस का विचार है कि इस ग्रह पर जीवन का विकास प्रतिस्पर्धा के द्वारा नहीं बल्कि जीवित रहने के लिए जीवन के विभिन्न रूपों में आपसी सहयोग से हुआ है। परागण की प्रक्रिया से

चित्र-1 : लिन मार्गुलिस
Source: Javier Pedreira, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Lynn_Margulis_2005.jpg. License: CC-BY.

परागण सम्बन्धी अध्ययनों की शुरुआत :

जन्तुओं द्वारा परागण सम्बन्धी हमारी समझ कई वैज्ञानिकों के कार्य पर आधारित है।

जोसेफ गॉटलिब कॉलरिटंर (1733-1806) ने इस विषय में अग्रणी भूमिका निभाई है। 1761 में उन्होंने वोर्लाफिज नाच्रिच नामक एक 'प्रारम्भिक रिपोर्ट' प्रकाशित की। इस रिपोर्ट में जन्तुओं की मदद से होने वाले परागण के कई तरीक़ों का वर्णन है। फूलों के लैंगिक लक्षणों और यहाँ तक कि पौधों की प्रजातियों के संकरण का वर्णन भी इसमें दिया गया है। कॉलरिटंर का यह अध्ययन प्रयोगों की एक लम्बी शृंखला पर आधारित है जिससे यह पता चला कि जिन पौधों को कीटों से दूर रखा गया था उनमें फल नहीं बने।

इन शुरुआती अध्ययनों को आगे चलकर स्प्रे जेल (1793), वोगल (1996), चार्ल्स डार्विन (1859), हरमन मुलर (1873) और ग्राण्ट (1952) जैसे कई वैज्ञानिकों द्वारा किए गए विस्तृत अध्ययन के नतीजों से भरपूर समर्थन मिला।

चित्र-2 : जोसेफ गॉटलिब कॉलरिटंर
Source: Materialscientist, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Josef_Gottlieb_Koelreuter.jpg. License: CC-BY.

और बेहतर इसका उदाहरण क्या हो सकता है, जहाँ पौधे और जन्तु आपसी फ़ायदे के लिए अन्तर्क्रिया करते हैं।

पृथ्वी पर विविध प्रकार की पादप प्रजातियों के जीवित रहने और उनके प्रवर्धन के लिए परागण क्रिया अत्याधिक आवश्यक है। विशेषतौर पर उन प्रजातियों के लिए जो लैंगिक तरीक़ों से प्रजनन करती हैं। इस तरह के पौधों में स्व-परागण को कम करने हेतु परिपक्व नर और मादा जनन कोशिकाओं को स्थान या समय (या दोनों) में अलग-अलग रखा गया है। इसका एक उदाहरण ऐसी पादप प्रजातियों में देखा जाता है जहाँ परिपक्व नर एवं मादा प्रजनन अंग एक ही पौधे में अलग फूलों पर या अलग-अलग पौधों पर पाए जाते हैं। ऐसे पौधों में निषेचन हेतु किसी मध्यस्थ की सहायता लेना ही एकमात्र रास्ता होता है, जो एक फूल (परागजनक) से दूसरे फूल के वर्तिकाग्र पर परागकणों को ले जाने में सक्षम हो। ये मध्यस्थ पर-परागण के लिए अनिवार्य हैं, जिन्हें हम आमतौर पर परागणकर्ताओं (pollinators) के नाम से जानते हैं।

ताज़ा आँकड़ों से पता चलता है कि जन्तुओं की लगभग 2,00,000 प्रजातियाँ फूलधारी पौधों की लगभग 75% प्रजातियों का परागण करती हैं। ये जन्तु परागणकर्ता आकार और आकृति में अलग-अलग हैं और कीटों, पक्षियों से लेकर स्तनधारी तथा सरीसृपों तक हो सकते हैं। यह कोई आश्चर्य की बात नहीं कि पौधों ने विशेष प्रकार के परागणकर्ताओं को अपनी ओर आकर्षित करने के लिए विभिन्न प्रकार के लक्षण विकसित किए हैं। जिनकी तेज़ दृष्टि है उनके लिए चटक रंगों से लेकर, जिनकी दृष्टि कमज़ोर है उनके लिए गज़ब की सुगन्ध तक। इन लक्षणों को परागण लक्षण (pollination syndromes) कहा जाता है। पुष्पीय पौधों और उनके परागणकर्ताओं का यह सह-विकास कुदरत में अनुकूलन और विशिष्टीकरण का एक उत्कृष्ट उदाहरण पेश करता है। साथ ही यह भी दिखाता है कि जीवों के दो समूहों में अन्तर्क्रिया कैसे जैवविविधता का एक सशक्त हस्ताक्षर हो सकती है।

चित्र-4 : परागण करती मधुमक्खियों की पराग टोकरियाँ। Source: Fifamed, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Honeybee_pollen_basket.JPG. License: Public Domain.

सह-विकास का विचार

सह-विकास का विचार सर्वप्रथम चार्ल्स डार्विन ने प्रस्तावित किया था। उन्होंने भविष्यवाणी की थी कि मेडागास्कर में पाए जाने वाले लम्बी स्पर वाले आर्किड *एनाग्रेसियम सेस्क्वीर्विपेडेल* का परागण निश्चित रूप से किसी ऐसे हॉकमॉथ से होना चाहिए जिसकी जीभ अपेक्षाकृत असामान्य रूप से लम्बी हो।

इस विचार को प्रकृतिविद अल्फ्रेड वालेस ने समर्थन दिया, और उसी अपेक्षित जीभ लम्बाई का एक हॉकमाथ अन्ततः शुरुआती बीसवीं शताब्दी में मेडागास्कर में खोज लिया गया।

Source: Wallace, Alfred Russel (October 1867). "Creation by Law". The Quarterly Journal of Science 4 (16): p. 470. London: John Churchill & Sons. Retrieved on 2009-07-30. Uploaded by Dmitriy Konstantinov, Wikimedia Commons. URL: https://en.wikipedia.org/wiki/File:Wallacesesquipedale.jpg. License: CC-BY.

चित्र-3 : थॉमस विलियम वुड द्वारा बनाया गया एक चित्र जो अल्फ्रेड रसेल वालेस के विवरण पर आधारित है। इसमें एक पतंगे को *एनाग्रेसियम सेस्क्वीर्विपेडेल* के फूल का परागण करते दिखाया गया है। उल्लेखनीय है कि 1867 में जब यह चित्र बनाया गया था तब इस पतंगे की खोज भी नहीं हुई थी।

आइए परागजनक और परागणकर्ताओं के बीच सम्बन्धों के कुछ रोचक उदाहरण देखें, यह खोज करते हुए कि कैसे ये परस्पर सम्बन्ध अन्तर्क्रिया करने वाले दोनों सहयोगियों को आकार देते हैं।

कीट परागणकर्ता के रूप में

कीट परागणकर्ताओं का सबसे बड़ा समुदाय हैं। जैसा कि जोसेफ गॉटलिब कॉलरिटर

कहते हैं कि *"सम्भवतया कीट अधिकांश पौधों को न सही परन्तु कम-से-कम उनके एक बड़े हिस्से को तो यह असाधारण महान सेवा देते ही हैं।"* इनमें प्रमुख हैं मधुमक्खियाँ, तितलियाँ, पतंगे, भृंग, ततैया, मक्खियाँ और चींटियाँ।

पौधों का परागण करने वाली कीटों की लगभग 20,000 प्रजातियों में मधुमक्खियाँ सबसे महत्त्वपूर्ण कीट परागणकर्ताओं में शुमार हैं। मधुमक्खियाँ न केवल पौधों से मिलने वाले भोजन के मुख्य स्रोत मकरन्द

चित्र-5 : *पोटेंटिला रेपटेंस* के फूल पर पराबैंगनी मधु दर्शक जो केवल मधुमक्खियों को दिखाई देते हैं।
Source: Wiedehopf20, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Flower_in_UV_light_Potentilla_reptans.jpg. License: CC-BY-SA.

पर आश्रित हैं अपितु वे उन परागकणों पर भी निर्भर हैं जिन्हें वे अपने लार्वा को खिलाती हैं। इन परागणकर्ताओं की 'बुद्धिमता' इस बात से प्रमाणित होती है कि जिन फूलों पर वे जाते हैं उन्हें वे 'पहचानते' हैं, उनमें 'भेद' करना जानते हैं और उन फूलों की बनावट को भी 'याद' रखते हैं। प्रत्येक यात्रा के दौरान मधुमक्खियाँ अपने शरीर को उन फूलों के परागकोश से रगड़ती हैं जिन पर वे बैठती हैं। इन परागकोश के परागकण उनकी पिछली टाँगों के घने बालों पर चिपक जाते हैं, जिन्हें पराग टोकरी कहा जाता है। पराग कंघी की सहायता से वे इन पराग टोकरियों में परागकण भरती हैं और जब किसी दूसरे फूल पर जाती हैं तब इन्हें वहाँ स्थानान्तरित कर देती हैं। मधुमक्खियों से परागित होने वाली पादप प्रजातियाँ इन कीटों को अपनी

चित्र-6 : भृंग परागण का एक उदाहरण। *ऐनसेलिया केलीफोर्निका* के फूल पर एक स्केरब भृंग।
Source: Marshal Hedin (uploaded by Jacopo Werther), Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Scarab_beetle_on_Encelia_californica_(3376142862).jpg. License: CC-BY.

ओर आकर्षित करने के लिए तरह-तरह की प्रक्रियाएँ अपनाती हैं। चूँकि मधुमक्खियाँ अपनी सूँघने की शक्ति पर ज़्यादा निर्भर होती हैं अत: इनके द्वारा परागित पौधों के फूलों में तीव्र गन्ध पाई जाती है। ऐसे पौधों के फूल चटकदार पीले, या नीले रंग के होते हैं जो इन्हें दूर से ही अपनी ओर आकर्षित करते हैं। ऐसा इसलिए क्योंकि मधुमक्खियों की दृष्टि ट्राइक्रोमेटिक विज़न होती है। इनकी आँखों में हरी, नीली व पराबैंगनी किरणों के प्रति संवेदी रंजक होते हैं जो इन्हें

चित्र-7 : तितली परागण का एक उदाहरण - डार्क ब्लू टाइगर।
Source: Jeevan Jose (Jkadavoor), Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia. org/wiki/File:Dark_Blue_Tiger_tirumala_septentrionis_by_kadavoor.JPG. License: CC-BY-SA.

देखने में सहायता करते हैं। परन्तु ये लाल रंग को नहीं देख पातीं (जो इन्हें काला दिखता है)। कई पौधे अपने परागणकर्ताओं को बैठने के लिए एक विशेष लैण्डिंग प्लेटफार्म

चित्र-8 : रात को उड़ने वाले पतंगे से परागण का एक उदाहरण *मेड्यूका सेक्सफटा* (केरोलिना स्फिंक्स मॉथ) *धतूरा राइटि* फूल से पोषण प्राप्त करता हुआ।
Source: Kiley Riffell Photography. For use with credit by Henry Art Gallery. URL: https://www.flickr.com/photos/115381928@N03/14255320758. License: CC-BY-NC.

चित्र-9 : *स्टेपेलिया जायजेंशिया* में मक्खियों द्वारा परागण।
Source: Ton Rulkens, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Stapelia_gigantea_-_fly_pollination_(5587930978).jpg. License: CC-BY-SA

उपलब्ध कराते हैं। इस प्रकार के फूलों में यह प्लेटफार्म निचले चौड़े होंठ के रूप में होता है। इस प्रकार मधुमक्खी-परागित फूल सामान्यतया अरीय सममिती (radial symmetry) के बजाय द्विपार्श्वीय सममिति (bilateral symmetry) वाले होते हैं। अक्सर इन फूलों पर कुछ धारियाँ या धब्बे होते हैं जिन पर पराबैंगनी प्रकाश में परावर्तित होने वाले कुछ ख़ास पैटर्न बने होते हैं जो मधु या मकरन्द का रास्ता दिखाने का कार्य कर सकते हैं। प्रत्यक्ष रूप से ऐसा लगता

चित्र-10 : ऑफरिस स्पेकुलम या मधुमक्खी आर्किड जो छद्म मैथुन द्वारा परागित हो जाते हैं। Source: Carsten Niehaus, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Ophrys_speculum_d.JPG. License: CC-BY-SA.

है कि फूलों पर इनका विकास मधुमक्खियों को मकरन्द की ओर ले जाने के लिए हुआ है। वास्तव में ये इस बात को सुनिश्चित करते हैं कि मधुमक्खियाँ उस जगह पहुँचें जहाँ ये उन्हें पहुँचाना 'चाहते' हैं। मधुमक्खियों से परागित होने वाले फूल अपने मेहमानों को बड़ी मात्रा में मकरन्द और पराग भी उपलब्ध कराते हैं। एक मधुमक्खी के छत्ते में एकत्र किए गए पराग की मात्रा 28 किलोग्राम प्रतिवर्ष से भी ज़्यादा होती है।

यद्यपि कीट-परागणकर्ताओं के रूप में मधुमक्खियों की चर्चा सबसे ज़्यादा होती है, भृंग भी परागणकर्ताओं के एक बड़े समूह का प्रतिनिधित्व करते हैं। इनको लगभग 85% पुष्पीय पौधों, जिनमें स्पाइस बुश और मेगनोलिया शामिल हैं, के परागण के लिए ज़िम्मेदार माना गया है। चूँकि भृंगों के पास तेज़ दृष्टि नहीं होती, अत: इनके द्वारा परागित पुष्प भी अधिकांशत: सफ़ेद या हल्के रंग के होते हैं। कुछ भृंग परागित पुष्प मकरन्द नहीं बनाते। बजाय इसके ये उन कीटों को पराग या पंखुड़ियों में उपस्थित विशेष संग्रह कोशिकाओं को भोजन के रूप में उपलब्ध कराते हैं जिन्हें ये भृंग खाते हैं। भृंग अक्सर फूलों को खाते हुए परागकोश तक पहुँचते हैं। ये प्राय: कलियों के अन्दर मल त्याग भी कर देते हैं - अत: इन्हें आम बोलचाल में 'गन्दे और ख़राब करने वाले' परागणकर्ता भी कहा जाता है।

यद्यपि फूलों पर मँडराती रंगीन तितलियों को देखना हमेशा एक मनमोहक दृश्य होता है फिर भी

चित्र-11 : मच्छरों द्वारा बॉग आर्किड का परागण।

अनोखे परागणकर्ता :

परागण में छिपकलियों की भूमिका को अभी हाल ही में स्वीकारा गया है। अध्ययनों से ज्ञात हुआ है कि छिपकलियाँ पौधों की कई प्रजातियों को अपना अस्तित्व बनाए रखने में सहयोग करती हैं। विशेष तौर पर द्वीपों पर पाई जाने वाली प्रजातियों का परागण करके। इस विचित्र व्यवहार के लिए मुख्य रूप से, द्वीपीय छिपकलियों की प्रजातियों के उच्च जनसंख्या घनत्व, पुष्पीय भोजन की अधिकता और मुख्य भू-भाग (मैन्लैण्ड) में पाई जाने वाली छिपकलियों की तुलना में शिकारियों के अपेक्षाकृत कम जोख़िम को, ज़िम्मेदार ठहराया जा सकता है। द्वीपीय छिपकलियाँ अक्सर कई प्रजातियों के पौधों के फूलों का मकरन्द पीती हैं और फलों का गूदा खाती हैं जबकि इन दोनों में प्रोटीन की मात्रा काफ़ी कम होती है।

चित्र-12 : फूल का परागण करती एक छिपकली।

न्यूज़ीलैण्ड में होप्लोडेक्टाइलस गेको केवल फूलों के मकरन्द की ओर ही आकर्षित होती है, पराग की ओर नहीं। तेज सुगन्ध वाले फूल भी छिपकलियों को लुभाते हैं क्योंकि इनमें सूँघने की क्षमता बहुत ज़्यादा होती है। छिपकली परागित फूलों का पर्याप्त बड़ा होना भी ज़रूरी है ताकि वे पोषण प्राप्त करते समय परागणकर्ता का भार सहन कर सकें।

इन छिपकलियों का एक और जटिल परागण तंत्र *फेलस्यूज़मा* गेको और भारतीय समुद्री द्वीप पर पाए जाने वाले अन्य कई पौधों में देखा गया है। इससे पता चलता है कि इनका एक साझा विकासवादी इतिहास है। ऑलेसन और साथियों ने 1998 में बताया कि मॉरीशस में पाए जाने वाले स्थानीय पौधों *सोंकोडॉन मॉरिशिएनस* और *ट्रोकेशिया बाटोनियना* के फूलों में हैरान कर देने वाला, खून के रंग के समान मकरन्द और *ट्रोकेशिया ब्लैकबरनियाना* के फूलों का पीला मकरन्द *फेलस्यूज़मा* गेको को लुभाने का कार्य करता है। ये छिपकलियाँ ऐसे फूलों पर जाना ज़्यादा पसन्द करती हैं जिनका मकरन्द रंगीन होता है, बजाय उन फूलों के जो रंगहीन मकरन्द वाले होते हैं।

चित्र-13 : हमिंगबर्ड फ्यूशिया का परागण करते हुए।
Source: Togzhan Ibrayeva, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Hummingbird_in_search_for_nectar.jpg. License: CC-BY-SA.

तितलियाँ मधुमक्खियों की तुलना में पौधों के परागकणों के स्थानान्तरण में कम प्रभावी हैं। इनमें परागकणों को एकत्र करने के लिए कोई विशेष संरचनाएँ नहीं होतीं। इतना ही नहीं इनका दुबला-पतला शरीर इनकी लम्बी-पतली टाँगों के कारण फूलों पर ऊँचा उठा रहता है। अत: इनके शरीर पर ज़्यादा परागकण नहीं चिपक पाते हैं। तितलियों को अक्सर चमकदार पीले, नीले या नारंगी फूलों पर मँडराते देखा जाता है और कभी-कभी लाल फूलों पर भी। इन फूलों की मकरन्द ग्रन्थियाँ फूलों की नली या स्पर के आधार पर होती हैं जहाँ तक केवल पतंगों और तितलियों की लम्बी सूँड ही पहुँच सकती है। तितलियों की तरह नज़र आने वाले पतंगे, जो रात में सक्रिय होते हैं, सफ़ेद या हल्के पीले रंग के फूलों पर ही जाते हैं जो उन्हें रात के अँधेरे में चाँदनी रात या तारों की रोशनी के बीच स्पष्ट नज़र आते हैं।

अन्य कीट जैसे छोटी जीभ वाली मक्खियाँ अफ़्रीकी मूल के स्टेपपेलिया जैसे फूलों का परागण करती हैं, जो सड़ते मांस की गन्ध वाले होते हैं। ये फूल हल्के लाल या बादामी रंग के होते हैं जिन्हें अक्सर इनकी तीक्ष्ण गन्ध और दिखावट के चलते केरियान फ्लॉवर कहा जाता है।

लगभग 35,000 प्रजातियों वाले आर्किड कुल के फूलों पर सभी प्रकार के परागणकर्ता

चित्र-14 : लम्बी जीभ वाला मेक्सिको का चमगादड़ ऐगेव (रामबाण) फूलों का परागण करते हुए।
Source: U.S. Fish and Wildlife Service Headquarters (uploaded by Dolovis), Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Choeronycteris_mexicana,_Mexican_long-tongued_bat_(7371567444).jpg. License: CC-BY.

आते हैं। अधिकांश आर्किड के परागकण एक छोटी थैलीनुमा संरचना में बनते हैं जिन्हें पोलिनिया कहते हैं और जिनके आधार पर विशेष चिपचिपे पैड्स लगे रहते हैं। जब कोई कीट इन फूलों के पास जाता है ये चिपचिपे पोलिनिया उनके सिर पर चिपक जाते हैं। चिपचिपे पैड पर लगा पदार्थ जल्दी ही सूख जाता है जिससे पोलिनिया वहाँ मज़बूती से चिपक जाते हैं। कुछ आर्किड में तो पोलिनिया परागणकर्ता पर एक ट्रिगर प्रक्रिया द्वारा जान-बूझकर चिपका दिए जाते हैं। उत्तरी अफ्रीका और यूरोप में मिलने वाले एक आर्किड वंश *ऑफरिस* में तो एक पँखुड़ी इतनी अधिक रूपान्तरित हो चुकी है कि वह एक मादा भंवरे या ततैये से हूबहू मिलती है (रूप, रंग, आकार, और सतही संरचनाओं तक में)। नर भंवरे या ततैये जो अपनी शंखी अवस्था से एक-दो सप्ताह पूर्व ही बाहर निकले हों, इन आर्किड फूलों को ग़लती से मादा भंवरा समझ समागम की कोशिश करते हैं। जब वे ऐसा करते हैं तब फूलों के पोलिनिया इनके सिर पर चिपक जाते हैं, जब ये दूसरे फूल पर जाते हैं तब ये पोलिनिया उस फूल के चिपचिपे स्टिगमा पर लग जाते हैं। परागणकर्ताओं की ऐसी प्रत्येक यात्रा में, एक फूल से लिए गए पोलिनिया दूसरे फूल से लाए गए पोलिनिया से बदल दिए जाते हैं। तितलियों और पतंगों से परागित होने वाले आर्किड के पोलिनिया पैड के बजाय इनकी लम्बी सूँड पर लगे चिपचिपे क्लैम्प से चिपक जाते हैं।

आर्किड में कुछ विचित्र परागण विधियाँ/प्रक्रियाएँ भी देखी गई हैं। उदाहरण के लिए कुछ दलदली आर्किड में पोलिनिया, परागणकर्ता मादा मच्छरों की आँख पर चिपक जाते हैं। इस प्रकार बार-बार इन फूलों पर आने से वे अन्धी हो जाती हैं। परागण की एक अन्य निराली प्रक्रिया में परागणकर्ता आर्किड के द्वारा स्रावित द्रव भरे एक कुण्ड में डूब जाते हैं। परागणकर्ता के लिए इस कुण्ड से बाहर आने का एकमात्र रास्ता इस प्रकार का होता है कि कीट का पोलिनिया और स्टिगमा से सम्पर्क सुनिश्चित हो जाता है। कुछ आर्किड पोलिनिया को कीटों से जोड़ने के पहले बहुत ही नशीली सुगन्ध बनाते हैं जो कीट को मदहोश कर देती है। जैसे ही पोलिनिया का स्थानान्तरण पूर्ण होता है आर्किड से निकलने वाली सुगन्ध क्षीण होने लगती है और अस्थायी रूप से स्तब्ध कीट धीरे-धीरे अपने होश में आने लगता है। जब वह फूल से बाहर निकलता है तब उसके शरीर पर पोलिनिया चिपके होते हैं।

पक्षी परागणकर्ता के रूप में

पक्षियों में सूँघने की क्षमता ज़्यादा नहीं होती है परन्तु उनकी दृष्टि गज़ब की होती है। ये उन फूलों पर मँडराते हैं जो बिना गन्ध या हल्की गन्ध वाले चटक लाल या पीले रंग के होते हैं। पक्षी परागित फूल सामान्यतया बड़े होते हैं जो एक पुष्प क्रम के रूप में या कुछ मामलों में पेड़ों के मुख्य तने पर लगे होते हैं। ये अक्सर एक लम्बी पुष्प नली के नीचे बड़ी मात्रा में मकरन्द भी बनाते हैं जो अधिकांश कीटों की पहुँच से दूर रहता है।

कुछ पक्षी जैसे, अफ्रीका के सनबर्ड (हमारे देश में भी ये ख़ूब पाए जाते हैं, जिन्हें शकरखोरे कहा जाता है) और अमरीका के हमिंगबर्ड (गुंजनपक्षी) विशिष्ट रूप से उन फूलों के लिए अनुकूलित हैं जिनका ये परागण करते हैं। हमिंगबर्ड कई फूलों, जिनमें गुड़हल (हिबिस्कस), केना, हनीसकल, साल्विया, फ्यूशिया आदि शामिल हैं, की ओर आकर्षित होते हैं। कुछ फ्यूशिया के फूलों के परागकणों से लम्बे धागेनुमा रचनाएँ निकली होती हैं। जब हमिंगबर्ड अपनी लम्बी चोंच इन फूलों के अन्दर डालता है तब परागकणों के ये धागे इनकी चोंच के पिछले हिस्से में पाए जाने वाले छोटे-छोटे कड़क बालों में चिपक जाते हैं। इस तरह यह पक्षी एक फूल से दूसरे फूल तक परागकणों को स्थान्तरित कर देते हैं।

चमगादड़ परागणकर्ता के रूप में

चमगादड़ की अधिकतर प्रजातियाँ जो परागणकर्ता के रूप में कार्य करती हैं दक्षिण-पूर्वी एशिया, अफ्रीका और प्रशान्त महासागर के द्वीपों पर पाई जाती हैं। चमगादड़ों द्वारा परागित होने वाले फूल अधिकतर सफ़ेद या हल्के पीले रंग के होते हैं जो रात में खिलते हैं तथा बड़े या गेंद के आकार के पुष्पक्रम वाले होते हैं। इनमें भी कई फूलों में बड़ी मात्रा में मकरन्द पाया जाता है, और ये फलों जैसी या कस्तूरी जैसी तेज़ गन्ध छोड़ते हैं जो चमगादड़ों को अपनी ओर आकर्षित करती है। यह गन्ध गन्धक-युक्त पदार्थों की उपस्थिति के कारण होती है, जो विशेष रूप से उन फूलों में मिलती है जो चमगादड़ परागित है। चमगादड़ इन रासायनिक संकेतों का उपयोग फूलों को ढूँढ़ने में करते हैं।

यह आपसी सम्बन्ध बड़े महत्त्व का है क्योंकि लगभग 500 उष्ण-कटिबन्धीय पादप प्रजातियाँ - जिनमें आम, लीची, केले और अमरूद शामिल हैं - आंशिक या पूर्ण रूप से अपने परागण के लिए चमगादड़ों पर आश्रित हैं। चमगादड़ द्वारा परागण ने इन क्षेत्रों के पौधों की आनुवंशिक विभिन्नता को भी बड़े पैमाने पर प्रभावित किया है|

निष्कर्ष

यद्यपि हमने यहाँ पौधे-परागणकर्ता सम्बन्धों के केवल कुछ ही उदाहरणों की छानबीन की है लेकिन ये उदाहरण पर्याप्त हैं यह दर्शाने के लिए कि ये परस्पर सम्बन्ध पौधों की प्रजातियों के प्रवर्धन को किस हद तक प्रभावित करते हैं। इस प्रकार ये इस ग्रह पर पाए जाने वाले सभी प्रकार के जीवों की उत्तरजीविता में निर्णायक भूमिका निभाते हैं।

परागणकर्ताओं के इस महत्त्व को एक अमेरिकन जीववैज्ञानिक, शोधकर्ता, प्रकृतिविद और लेखक इ. ओ. विल्सन के इन शब्दों में भली-भाँति स्पष्ट किया गया है

''इस ग्रह पर से यदि केवल कीटों का ही सफ़ाया कर दिया जाए, तो शेष जीवन और मानवता इसके साथ ही इस पृथ्वी पर से अधिकांश रूप से ग़ायब हो जाएगी, वह भी केवल कुछ ही महीनों में।''

Note: Credits for the image used in the background of the article title: Bee pollinating a rose, Debivort, Wikimedia Commons. URL: https://en.wikipedia.org/wiki/File:Bee_pollinating_a_rose.jpg. License: CC-BY-SA.

References

1. Plant-Pollinator Interactions: From Specialization to Generalization. Edited by Nickolas M. Waser and Jeff Ollerton. University of Chicago Press. URL: https://books.google.co.in/books?id=FbI5c9fUxTIC&printsec=frontcover&dq=pollination&hl=en&sa=X&ved=0ahUKEwjol5vF_tvOAhVEro8KHTvAC poQ 6AEIKTAC.
2. Lizards as pollinators and seed dispersers: An island phenomenon. Olesen, J. M., and A. Valido. Trends in Ecology and Evolution, 2003, 18(4): 177-181.
3. Celebrating Wildflowers: Bat pollination. USDA Forest Service, Rangeland Management Botany Program. 2006. Retrieved November 7, 2006. URL: http://www.fs.fed.us/wildflowers/.
4. Pollination. (2015, October 11). New World Encyclopedia. Retrieved 17:44, September 30, 2016. URL: http://www.newworldencyclopedia.org/p/index.php?title=Pollination&oldid=991213.
5. Helping to Feed Honey Bees and Other Pollinators. Glynn Young. URL: http://monsantoblog.com/2014/03/10/helping-to-feed-honey-bees-and-other-pollinators/.
6. Social Behavior in animals with special reference to vertebrates. N. Tinbergen. Springer Netherlands.
7. Pollinators in the Landscape II: Plants and Pollinators.Mandy Bayer. The Center for Agriculture, Food and the Environment. URL: https://ag.umass.edu/fact-sheets/pollinators-in-landscape-ii-plants-pollinators.
8. Orchid Pollination. RonMcHatton, AOS, June 2011. URL: http://staugorchidsociety.org/PDF/OrchidPollinationbyRonMcHatton.pdf.

मीनाक्षी पन्त अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, राज्य संस्थान, देहरादून में विज्ञान के स्रोत व्यक्ति के रूप में कार्यरत हैं। उन्होंने पर्यावरणीय जीवविज्ञान में स्नातकोत्तर किया है और बीएड की उपाधि प्राप्त की है। उन्होंने 15 वर्षों तक स्नातकोत्तर शिक्षक (जीवविज्ञान व पर्यावरणविज्ञान) के तौर पर कार्य किया है। उनमें वन्यजीव व उनके संरक्षण को लेकर एक तरह का जुनून हैं। उनसे meenakshi.pant@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** किशोर पंवार

कला और पारिस्थितिकी

अभिषेका कृष्णगोपाल

विद्यार्थियों को प्रकृति के महत्त्व के बारे में समझाने के लिए कला एक सशक्त माध्यम है, क्योंकि यह उनको सोचने और अनुभव करने के लिए प्रेरित करती है। यह लेख कुछ सरल कला आधारित गतिविधियों में ऐसी सम्भावनाएँ तलाशता है जिनके उपयोग से बच्चों को उनकी स्थानीय पारिस्थितिकी और पर्यावरण के प्रति संवेदनशील बनाया जा सके।

प्रकृति से हमारा बढ़ता हुआ अलगाव एक महत्त्वपूर्ण कारण है जिसके चलते मनुष्य अपने पर्यावरण पर कई प्रतिकूल प्रभाव अनुभव करता है। अतः अब यह व्यापक रूप से माना जाता है कि अधिक टिकाऊ जीवन के लिए हमें ऐसे शैक्षणिक अनुभव निर्मित करने होंगे जो बच्चों में प्राकृतिक जगत के प्रति अधिक संवेदनशीलता और आदर (appreciation) का भाव विकसित कर सकें।

अधिकांश राष्ट्रीय और राज्य शिक्षा मण्डल, इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए अपने विद्यालयीन पाठ्यक्रम में पर्यावरण शिक्षा को अध्ययन का अनिवार्य हिस्सा बना रहे हैं। यद्यपि कई कारणों से ऐसा प्रतीत होता है कि इन बातों का सीखने वाले बच्चों के मस्तिष्क पर बहुत कम प्रभाव होता है। पर्यावरण शिक्षा के पाठ्यक्रम पर्यावरण प्रदूषण, ग्लोबल वार्मिंग, ओजोन परत क्षति इत्यादि जैसे विषयों पर केन्द्रित होते हैं, जिनसे विद्यार्थी आसानी से सम्बन्ध स्थापित नहीं कर पाते। अधिकांश शिक्षक और विद्यार्थी पढ़ाने (और सीखने) के अतिशय बोझ से लदा हुआ अनुभव करते हैं चूँकि अन्य विषय भी पाठ्यक्रम में पहले से ही समाहित होते हैं। अतः प्रायः यह 'विषय' उपेक्षित रहता है या इसे किसी अन्य विषय की भाँति ही अध्ययन किया और 'याद रखा' जाता है ताकि परीक्षा में उत्तीर्ण हो सकें। स्वाभाविक रूप से ऐसा

> ...अधिक टिकाऊ जीवन के लिए हमें ऐसे शैक्षणिक अनुभव निर्मित करने होंगे जो बच्चों में प्राकृतिक जगत के प्रति अधिक संवेदनशीलता और आदर का भाव विकसित कर सकें।

प्रतीत होता है कि पर्यावरण शिक्षा के लिए उपयोग की जाने वाली शिक्षण विधियों का अध्ययनरत विद्यार्थियों के मस्तिष्क पर बहुत कम प्रभाव होता है। इसके विपरीत, विद्यार्थियों के लिए यह आवश्यक है कि वे केवल हमारे प्राकृतिक जगत के वैज्ञानिक तथ्यों को ही न जानें बल्कि प्रकृति के प्रति उनकी संवेदनशीलता बढ़े और वे पर्यावरणीय मुद्दों को उनके क़रीबी परिवेश में समझ सकें। ऐसा करने के लिए हमें उन विधियों और माध्यमों के साथ प्रयोग करने और सम्भावनाएँ तलाशने की ज़रूरत होगी जो बच्चों को प्राकृतिक जगत के प्रति जागरूक बनाएँ और उनमें संवेदनशीलता का पोषण करें।

सम्पूर्ण मानव इतिहास में कला और शिक्षा

एक-दूसरे से सम्बन्धित रहे हैं। वास्तव में प्रायः ज्ञान का प्रसार कला के माध्यम से हुआ है। मगर अब दुनिया की कई शिक्षण पद्धतियों में इन दोनों को बिलकुल अलग-अलग कर दिया गया है। शिक्षण साधन के रूप में कला का उपयोग करने से बच्चे सोचने, और अनुभव करने के लिए प्रेरित होते हैं तथा वे और अधिक संवेदनशील बनते हैं। प्रकृति के प्रति संवेदनशीलता कई प्रकार की कला प्रेरित गतिविधियों के द्वारा भी प्राप्त की जा सकती है, विशेष रूप से जब हम प्रकृति के बहुत क़रीब काम करें। वास्तव में जब बात प्राकृतिक जगत की समझ बनाने की हो तो कला के पास वह सामर्थ्य है जिसका पारम्परिक शिक्षण तरीक़ों में अभाव है।

कला के उपयोग से बच्चों को प्रकृति के बारे में अध्ययन करवाने के लिए व्यक्ति का कला में प्रशिक्षित या विषय विशेषज्ञ होना आवश्यक नहीं है। जिज्ञासु, खोजी और रचनात्मक बुद्धि वाले व्यक्ति कला के माध्यम से प्रयोग कर, कला आधारित नवीन गतिविधियों का निर्माण कर सकते हैं। विद्यालयीन शिक्षक कुछ कला आधारित सरल गतिविधियों द्वारा आसानी से पारिस्थितिकीविज्ञान और पर्यावरण को पढ़ा सकते हैं। ज़रूरी नहीं है कि यह गतिविधियाँ बहुत जटिल या अत्याधिक रचनात्मक हों। सरल प्रयोग भी बच्चों के सीखने की गुणवत्ता में अन्तर ला सकते हैं। इस लेख में हम ऐसी कुछ सरल गतिविधियों और प्रयोगों को जानेंगे, जिनका उपयोग बच्चों को उनके पर्यावरण के प्रति संवेदनशील बनाने के लिए किया गया है।

कला के माध्यम से अवलोकन आत्मविश्वास बढ़ाता है!

कला के माध्यम से बच्चों को प्राकृतिक जगत के बारे में पढ़ाने के लिए एक प्रयोग विद्यार्थियों के साथ बाघ संरक्षित क्षेत्र की तलहटी में संचालित किया गया। कला आधारित गतिविधियों की शुरुआत करने से पहले हमने एक प्रश्नावली आधारित सर्वेक्षण किया ताकि विद्यार्थियों के स्थानीय जैवविविधता से सम्बन्धित औसत ज्ञान का आकलन किया जा सके। सर्वेक्षण से प्राप्त निष्कर्ष आश्चर्यचकित करने वाले थे। हमें ज्ञात हुआ कि ये विद्यार्थी उनके घर के

कला के उपयोग से बच्चों को प्रकृति के बारे में अध्ययन करवाने के लिए व्यक्ति का कला में प्रशिक्षित या विषय विशेषज्ञ होना आवश्यक नहीं है। जिज्ञासु, खोजी और रचनात्मक बुद्धि वाले व्यक्ति कला के माध्यम से प्रयोग कर कला आधारित नवीन गतिविधियों का निर्माण कर सकते हैं।

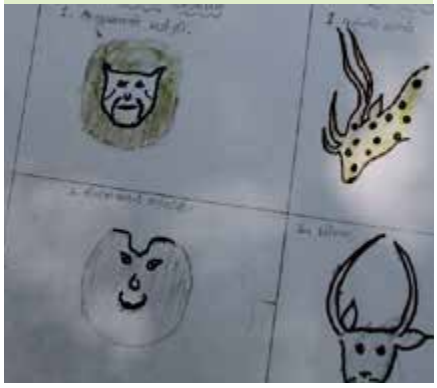

चित्र-1 : चित्रांकन ने बच्चों को अपरिचित जानवरों में अन्तर करने वाले लक्षणों को याद रखने में मदद की।
Credits: Abhisheka K. License: CC-BY-NC.

आँगन में पाई जाने वाली वन्य जीवन की विविधता से अनभिज्ञ थे। यद्यपि यह एक आदर्श स्थिति होती कि विद्यार्थियों को जंगल में ले जाकर उन्हें वन्यजीवों के बारे में कुछ प्रामाणिक अनुभव दिए जाते, लेकिन ऐसा करने के लिए अनुमति प्राप्त करना सम्भव नहीं था। इसके बजाय विद्यार्थियों को कक्षा अध्यापन सत्र में ही कला का उपयोग करते हुए वन्यजीवों को पहचानने का प्रशिक्षण देने का प्रयास किया गया। विद्यार्थियों को बाघ संरक्षित क्षेत्र में पाए जाने वाले अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्तनपायी जीवों के चित्र दिखाए गए, और उन्हें एक ही कुल में पाई जाने वाली विभिन्न प्रजातियों में भेद करने को कहा गया। उन्हें दो समूहों में बाँटा गया। एक समूह को केवल चित्रों को देखने का कार्य सौंपा गया, और दूसरे समूह को उन विभिन्न प्रजातियों के बीच अन्तर चित्रांकित करने को कहा गया, जिन्हें वे देख रहे थे। चूँकि जंगल में पाँच प्रजातियाँ नरवानर (primates), दो बड़ी बिल्लियों (big cats), और तीन प्रजातियाँ खुरधारियों (ungulates) की थीं, अत: बच्चों को प्रत्येक प्रजाति के बीच अन्तर करने के लिए उनके मुख्य लक्षणों को जानना और याद रखना आवश्यक था। कार्यशाला के पश्चात किए गए सर्वेक्षण के निष्कर्ष बताते हैं कि उन विद्यार्थियों का ज्ञान स्तर अपेक्षाकृत उच्च था जिन्होंने स्तनपायी जीवों के चित्र

चित्र-2 : कक्षा से बाहर चित्रांकन करने का उत्साह।
Credits: Abhisheka K. License: CC-BY-NC.

बनाए, बजाए उन विद्यार्थियों के जिन्होंने केवल चित्र देखे। चित्रांकन ने विद्यार्थियों को उन जानवरों के लक्षण भी याद रखने में मदद की जो उनके लिए अपरिचित थे। ज्ञान के स्तर में यह वृद्धि उन छात्राओं में भी महत्त्वपूर्ण रूप से देखी गई जिन्होंने चित्रांकन का चयन किया। यह इस बात को प्रदर्शित

करता है कि कला उन बच्चों के लिए एक उपयोगी साधन हो सकती है जिनको बाहर समय व्यतीत करने के सीमित अवसर प्राप्त होते हैं, ख़ासतौर पर उन गाँवों में जहाँ एक उम्र के बाद लड़कियों को घर के अन्दर ही रखा जाता है।

इसी प्रकार यह देखने के लिए बच्चों का परीक्षण किया गया कि वे वृक्षों की विशेषताओं को भली-भाँति केवल देखकर याद रख सकते हैं या उनके चित्र बनाकर। प्रत्येक कक्षा दो समूहों में बाँट दी गई। एक समूह को उनके विद्यालय परिसर में उगे हुए वृक्षों के अवलोकन के लिए कहा गया जबकि अन्य को विभिन्न भागों जैसे अवलोकन किए गए प्रत्येक वृक्ष की पत्तियों, फलों और फूलों के चित्र बनाने के लिए कहा गया। उन्हें प्रोत्साहित किया गया कि वे मोम रंगों (क्रेयोन्स) का उपयोग कर काग़ज़ पर वृक्षों की छाल की छाप लेकर उनके विन्यास (पैटर्न) का अध्ययन करें। दोनों समूहों द्वारा किए गए अवलोकनों को दी गई डेटा शीट्स में अंकित किया गया। इस गतिविधि के बाद यह स्पष्ट हुआ कि जिन्होंने अवलोकन किए गए वृक्षों का चित्रांकन किया था वे पत्तियों के आकार या छाल के भेद को बेहतर तरीक़े से और लम्बे समय तक याद रख पाए। मैदान में बनाए गए चित्रों की मदद लिए बिना वे पत्तियों और फलों के चित्र ब्लैकबोर्ड पर बनाने में भी सक्षम रहे। यह भी देखा गया कि जब बच्चों को इस गतिविधि के लिए पेड़ों का चयन करने को कहा गया तो केवल अवलोकन करने वाले विद्यार्थियों ने उन पेड़ों का चयन किया जिनसे वे पहले से परिचित थे जैसे इमली, बरगद या पपीते के पेड़। ये बच्चे अपने अवलोकनों को याद रखने के प्रति पूरी तरह आश्वस्त नहीं थे अत: उन्होंने ऐसे पेड़ों का चयन किया जिनका उन्हें पूर्वज्ञान था। इसके विपरीत जिन विद्यार्थियों को अवलोकनों के चित्रांकन हेतु कहा गया था उन्होंने सामान्यतया अपरिचित वृक्षों का चयन किया। कला ने नए पेड़ों के विभेदक लक्षण खोजने और समझने के उनके आत्मविश्वास को बढ़ाने में सहायता की जिसकी बदौलत उनके ज्ञान स्तर में भी वृद्धि हुई।

इसी प्रकार चित्रांकन का उपयोग चिड़ियों, कीटों और जीवन के विभिन्न रूपों को पहचानना सीखने के लिए किया जा सकता है। यद्यपि प्राकृतिक परिभ्रमण विद्यार्थियों को उन जीवन रूपों को देखने में मदद करता है जिन्हें वे पहले अनदेखा कर चुके होते हैं, चित्रांकन उन्हें बारीक़ी से देखने और उन्होंने

चित्र-4 : आदिवासी विद्यालय के माध्यमिक विद्यार्थियों के समूह द्वारा प्रकृति-प्रेरित कला।
Credits: Abhisheka K. License: CC-BY-NC.

चित्र-3 : घास की पत्ती के नीचे छुपा हुआ, चींटी का घोंसला चित्रित करते हुए।
Credits: Abhisheka K. License: CC-BY-NC.

इन अवलोकनों से क्या सीखा है उसे याद रखने में मदद करता है। उदाहरण के लिए जब ग्रामीण विद्यार्थियों के एक समूह को जन्तुओं के घर ढूँढ़ने और उनका चित्रांकन करने की चुनौती दी गई तो विद्यार्थियों ने विभिन्न जन्तुओं के घरों और इन्हें बनाने वाले जन्तुओं (यदि वे मौजूद हों तो) की विशेषताओं का अवलोकन करने में लम्बा समय व्यतीत किया। इनका चित्रांकन करने के लिए विद्यार्थियों ने बहुत सावधानी बरती और उन्होंने घरों की कुछ बहुत ही बारीक विशेषताओं पर ध्यान दिया। इन बारीकियों को वे नज़रअन्दाज़ कर सकते थे यदि वे

प्रकृति-प्रेरित कला विद्यार्थियों के ऐसे मानसिक अवरोधों को समाप्त कर उन्हें प्राकृतिक सामग्री के साथ किसी विशिष्ट अन्तिम उत्पाद को पाने की उम्मीद के बिना कार्य करने में मदद करती है। इसमें बच्चों का कला के साथ जुड़ने का अनुभव महत्त्वपूर्ण है न कि यह कि किया गया कलात्मक कार्य पूर्णता पर कैसा दिखता है।

प्राकृतिक परिभ्रमण में सरसरी तौर पर इन घरों का अवलोकन करते।

इस गतिविधि का संचालन विद्यालय परिसर में भी किया जा सकता है। शिक्षक विद्यार्थियों को जन्तुओं के घर देखने के लिए कह सकते हैं।

उनका ध्यान इस ओर भी खींचना चाहिए कि कैसे मकड़ियों के जाले या ततैया (बर्र) के छत्ते भी इन्हीं के उदाहरण हैं। यह बात बच्चों को केवल चिड़ियों के घोंसले पर ही ध्यान केन्द्रित करने से रोकने में मदद करेगी, जैसा कि प्राय: अधिकांश बच्चे करते हैं। शिक्षकों को विद्यार्थियों को जन्तुओं के खोजे गए घरों के अवलोकन और चित्रांकन करने के लिए पर्याप्त समय देना चाहिए। सत्र के अन्त में इस गतिविधि के दौरान बनाए गए चित्रों का प्रदर्शन किया जा सकता है और इनका उपयोग करके एक चर्चा शुरू की जा सकती है जिसका उद्देश्य यह सुनिश्चित करना हो कि पूरा समूह विभिन्न प्रकार के जन्तुओं और उनकी घर बनाने की कला को समझे। इस समूह चर्चा का उपयोग, इन जन्तुओं की अपनी अलग विशिष्टताओं, घर बनाने की उनकी ज़रूरतों और ख़तरे जिनसे ये घर उनका बचाव करते हैं आदि को स्पष्ट करने के लिए भी किया जा सकता है।

चित्र-5 : रैली गाँव, कलिम्पोंग में विद्यार्थियों द्वारा बनाए गए चिड़ियों के घोंसले।
Credits: Abhisheka K. License: CC-BY-NC.

प्रकृति-प्रेरित कला को प्रोत्साहन

प्रकृति-प्रशिक्षक के रूप में अपने अनुभवों के दौरान मुझे कई बार ऐसी स्थितियों का सामना करना पड़ा जब विद्यार्थियों को चित्रांकन करने में संकोच हुआ। शिक्षकों और अभिभावकों का सुन्दर दिखने वाला कलात्मक कार्य करने का दबाव, कलात्मक कार्य का इस तरह मूल्यांकन करना कि वह बनाई गई वस्तु से कितना अधिक मेल खाता है, और ऐसे ही अन्य कारण कई बच्चों को

चित्र-6 : रैली गाँव, कलिम्पोंग में बेकार गत्ते के बक्सों का उन्नयन चक्रण।
Credits: Abhisheka K.
License: CC-BY-NC.

कला से जुड़ने तथा उनकी रचनात्मकता की खोज करने को हतोत्साहित करते हैं। प्रकृति-प्रेरित कला, विद्यार्थियों के ऐसे मानसिक अवरोधों को समाप्त कर उन्हें प्राकृतिक सामग्री के साथ किसी विशिष्ट अन्तिम उत्पाद को पाने की उम्मीद के बिना कार्य करने में मदद करती है। इसमें बच्चों का कला के साथ जुड़ने का अनुभव महत्त्वपूर्ण है न कि यह कि किया गया कलात्मक कार्य पूर्णता पर कैसा दिखता है।

उन विद्यालयों में जहाँ बच्चों को कभी भी चित्रांकन का अवसर नहीं दिया जाता, बच्चों में चित्र बनाने और रंग भरने को लेकर एक भय रहता है। ऐसे प्रकरणों में, सीमित समयावधि में मैंने प्राकृतिक पदार्थों से कलाकारी करने को प्राथमिकता दी। इस तरह विद्यार्थी केवल पेंसिल, काग़ज़ और रंगों का उपयोग करने तक ही सीमित नहीं रहे बल्कि उन्होंने प्राकृतिक जगत के विभिन्न रंगों और बनावटों का उपयोग करना सीखा। जब विद्यार्थियों को अपने प्राकृतिक परिवेश से कला निर्माण कार्य के लिए सामग्री एकत्रित करने को कहा गया तो उनके लिए प्रकृति प्रदत्त सभी विकल्प खुले थे - कीचड़ और पत्थरों से लेकर पत्तियाँ, बीज, फल और लकड़ी के टूटे टुकड़े, सूखी घास, मरे हुए कीड़े और क्या नहीं! अचानक उन्होंने प्रकृति में कई नई चीज़ें खोजीं जिन्हें उन्होंने पहले कभी देखने की कोशिश नहीं की। उन्हें उन सभी वस्तुओं को अपने हाथों से अनुभव करने का अवसर भी मिला। विद्यार्थियों को बिना किसी विशेष विषयवस्तु के कलाकृति बनाने के अवसर प्रदान करना, उन्हें स्वयं की रचनात्मकता को खोजने की स्वतंत्रता का अनुभव करने में सहायक होता है। वे बिना किसी रोक-टोक के रंगों, बनावट और आकृति (डिज़ाइन) के साथ खेलना सीखते हैं और इस प्रक्रिया में कुछ अद्वितीय कलाकृतियों का निर्माण करते हैं! चूँकि कला के ये कार्य प्राकृतिक रूप से अल्पजीवी हैं अत: ये पृथ्वी में बिना

चित्र-7 : पानी और शैम्पू की ख़ाली बोतलों से बनी लटकनें। इन्हें उन जन्तुओं के चित्रों से सजाया गया है जिनसे प्राय: लोग डरते हैं या जिन्हें अपशकुन मानते हैं।
Credits: Abhisheka K. License: CC-BY-NC.

किसी हानिकारक प्रभाव के पुनर्चक्रित होते हैं, और बच्चे प्रकृति को एक अलग नज़रिये से देखने का अनुभव अपने साथ ले जाते हैं। प्राकृतिक जगत से अपने सम्बन्ध विकसित करने या सुधारने के लिए बच्चों को प्रोत्साहित करने का यह एक सुखद तरीक़ा है।

पर्यावरणीय जागरूकता

पर्यावरणीय सन्देशों को साझा करने और अपने गाँव/शहर/कस्बों के विशिष्ट, गम्भीर पारिस्थितिक मुद्दों के प्रति जागरूकता पैदा करने के लिए कला को एक माध्यम की तरह उपयोग किया जा सकता है।

स्थानीय पारिस्थितिकी तंत्र सुधारने में विद्यार्थियों की भूमिका के प्रति उन्हें जागरूक करने में भी कला आधारित गतिविधियों का उपयोग किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, मैंने गाँव के कुछ विद्यार्थियों से पूछा कि आप में से किन-किन को चिड़ियों के घोंसले नीचे गिराने की आदत रही है? फिर मैंने विद्यार्थियों को घास और पत्तियों जैसी सामग्री इकट्ठी करने को कहा, जिन्हें उन्होंने चिड़ियों को अपने घोंसले का निर्माण करने के लिए उपयोग करते हुए देखा था। इसके बाद उन्हें किसी भी तरह इस सामग्री का इस्तेमाल करके ऐसे घोंसले बनाने थे जिनमें अण्डे टिक सकें। इस अभियान पर घण्टों काम करने के बाद कुछ विद्यार्थी इस तरह के घोंसले बनाने में सफल रहे जो कि पर्याप्त मज़बूत थे और आवश्यक मानकों को पूरा करते थे। यद्यपि कुछ अन्य के घोंसले लटके हुए-से थे। इस साधारण-सी गतिविधि ने विद्यार्थियों को यह अनुभव करवाने में मदद की, कि वे क्षणभर में घोंसलों को नष्ट कर सकते हैं मगर चिड़िया को इसे बनाने के लिए बहुत समय लगता है और कठिन प्रयास करना पड़ते हैं। जब विद्यार्थियों से कहा गया कि जो घोंसले उन्होंने कठिन परिश्रम के साथ बनाए हैं, उन्हें इस गतिविधि

के बाद फेंक दिया जाएगा तो यह सुनकर वे घबरा गए और उन्होंने ख़ुद से ही ये वादा किया कि वे फिर कभी चिड़ियों के घोंसले नहीं तोड़ेंगे।

अपशिष्ट प्रबन्धन एक अन्य महत्त्वपूर्ण मुद्दा है जिसके बारे में बच्चों को जीवन में जितना जल्दी बता दिया जाए उतना ही अच्छा होगा। कला का इस सन्दर्भ में कुछ अलग तरीक़े से उपयोग किया गया। उदाहरण के लिए एक विशिष्ट सत्र अपशिष्ट प्रबन्धन, अपशिष्ट के अवनयन और पुनर्चक्रण व कम्पोस्ट खाद तैयार करने की चर्चा से शुरू होकर धीरे-धीरे कला के उपयोग से फेंके गए अपशिष्ट के उन्नयन चक्रण (अप-साइक्लिंग) तक पहुँचा। इसके बाद बच्चों से कहा गया कि वे अपने घर से फेंके हुए पदार्थ लेकर आएँ और उन्हें उपयोगी पदार्थों में बदलें। अपशिष्ट पदार्थ का एक ख़ूबसूरत उपयोगी पदार्थ में बदल जाना विद्यार्थियों के लिए हमेशा बहुत प्रेरक होता है और ये उन्हें किसी भी वस्तु को फेंकने के पूर्व बड़ी सावधानी से सोचने के लिए विवश करता है।

निष्कर्ष

भारतीय संस्कृति में कला के कई और रूप - साहित्य, कविता और संगीत से लगाकर नृत्य, मूर्तिकला और रंगमंच सभी - समाहित हैं। और इन सबका उपयोग, बच्चों में 'प्रकृति' से उनके सम्बन्ध की समझ व जागरूकता का भाव विकसित करने में मदद करने वाले साधनों के रूप में किया जा सकता है। उदाहरण के लिए प्रस्तुतिकरण कला (परफार्मिंग आर्ट्स) अध्यापन की एक बहुत बढ़िया विधा हो सकती है जो प्रकृति संरक्षण की आवश्यकता के बारे में अन्य बच्चों व प्रौढ़ श्रोताओं में जागरूकता फैलाने में अपनी भूमिका का निर्वाह करने हेतु विद्यार्थियों को प्रोत्साहित कर सकती है। कला हमें सबसे अधिक वंचित और हाशिये पर रहने वाले समुदायों में से कुछ तक उस समय पहुँच बनाने में मदद करती है, जब संवाद के अन्य सभी स्वरूप असफल हो जाते हैं।

कला के उपयोग के ज़रिए पारिस्थितिकी अध्यापन के लिए हालाँकि एक शिक्षक के रूप में हमें कुछ संवेदनशीलता, रचनात्मकता और खिलाड़ीपन विकसित करना चाहिए। यह लेख प्रकृति अध्ययन और अध्यापन के 'कुछ' तरीक़ों की सम्भावनाएँ तलाशता है जो इसे और मनोरंजक बना सकें। मैं आशा करती हूँ कि यह आपको अपनी कक्षा में कला को और रचनात्मक तरीक़े से उपयोग करने के लिए प्रोत्साहित करेगा।

अभिषेका कृष्णगोपाल एक पर्यावरणशास्त्री, कलाकार (दृश्य एवं प्रस्तुति) और प्रकृति-प्रशिक्षक हैं। वे पारिस्थितिकी क्षेत्र के अपने अनुभवों और कला माध्यम का उपयोग प्रकृति संरक्षण बारे में जागरूकता पैदा करने के लिए करती हैं। शहरी क्षेत्र के निश्चित वन्य प्राणियों और घायल जन्तुओं के पुनर्वास का उनको कई वर्षों का अनुभव है। उनसे abhishekagopal@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** भोलेश्वर दुबे

रेडियो खगोलशास्त्र और वृहत मीटरवेव रेडियो दूरदर्शक

जयराम एन चेंगालूर

यह ब्रह्माण्ड एक अनोखी और सुन्दर जगह है, अनपेक्षित वस्तुओं से भरी हुई। इसे समझने का एक ही तरीक़ा है, इसे बारीक़ी से देखना - जितने अलग-अलग तरीक़ों से सम्भव हो। इस लेख में, हम भारत के पुणे शहर के नज़दीक स्थित वृहत मीटरवेव रेडियो दूरदर्शक (जीएमआरटी) के माध्यम से खगोलीय वस्तुओं द्वारा प्रसारित किए जाने वाले रेडियो उत्सर्जनों का प्रेक्षण करने पर सामने आए अचम्भों पर एक नज़र डाल रहे हैं।

दो दशकों से भी पहले, कार्ल सैगान के काल्पनिक विज्ञान उपन्यासों में से एक, कॉन्टैक्ट, पर एक बड़ी हॉलीवुड फ़िल्म बनाई गई थी, जिसमें जोडी फॉस्टर ने नायिका डॉक्टर ऐलैनॉर "ऐली" ऐरॉवे का किरदार निभाया था। परग्रही बुद्धिमत्ता की खोज (Search for Extra-terrestrial Intelligence or SETI) या सेटी, जैसा कि इसे लोकप्रिय रूप से जाना जाता है पर आधारित कॉन्टैक्ट कहानी है एक दृढ़निश्चयी खगोलविज्ञानी की, जो बेहद विपरीत परिस्थितियों के बावजूद एक परग्रही सभ्यता के साथ रेडियो सम्पर्क बनाती है। इस फ़िल्म की एक चिरस्थायी छवि है अपने कानों में हैडफोन लगाए, बहुत ध्यान से इस परग्रही संकेत को सुनती जोडी फॉस्टर की, और पृष्ठभूमि में है एंटीना का विशाल समूह। उस पीढ़ी के कई लोगों के लिए, यह रेडियो खगोलशास्त्र के साथ उनका पहला और सम्भवतया अकेला परिचय है। लेकिन कुछ तरीक़ों से ज़्यादा आश्चर्यजनक बात यह है कि आम जन को रेडियो खगोलशास्त्र के बारे में कुछ ज्ञान है, और इसमें किसी बड़ी हॉलीवुड फ़िल्म का योगदान नहीं है।

चित्र-1 : फिल्म कॉन्टैक्ट में डॉक्टर ऐलेनॉर ऐरॉवे का किरदार निभातीं जोडी फॉस्टर। पृष्ठभूमि में दिख रहा रेडियो दूरदर्शक अमरीका में स्थित वैरी लार्ज ऐरे। जैसा कि इस लेख में बहुत विस्तार से वर्णन किया गया है, रेडियो खगोलज्ञ आमतौर पर परग्रही संकेतों को 'सुनते' नहीं हैं, चाहे हैडफोनों से या किसी और तरीक़े से। यह तस्वीर फ़िल्म के एक चित्र पर आधारित है।

रेडियो खगोलज्ञों का समुदाय एक छोटा और गुप्त समुदाय है। अन्तर्राष्ट्रीय खगोलीय संघ के रेडियो खगोलशास्त्र आयोग में सिर्फ़ कुछ सौ सदस्य हैं। भारत में संख्या इससे भी कम है लेकिन भारतीय रेडियो खगोलज्ञों की भूमिका वाली एक कल्पित रचना जरूर है - मनु जोसेफ का पुरस्कृत उपन्यास, *सीरियस मैन*। इतने छोटे-से समुदाय के हिसाब से रेडियो खगोलशास्त्र को निश्चित ही लोकप्रिय संस्कृति में असंगत प्रतिनिधित्व मिला है! और ऐसा, कम-से-कम अंशतः तो अन्तरिक्ष की खोज तथा परग्रही बुद्धिमत्ता की खोज (सेटी) के आकर्षण के

कारण होता है। पर रेडियो खगोलशास्त्र का सेटी से क्या वास्ता है? अगर आप सेटी से जुड़े हुए रेडियो खगोलज्ञों के छोटे-से हिस्से को देखें तो बहुत कुछ वास्ता नहीं लगता। लेकिन रेडियो खगोलशास्त्र को समझने के लिए सेटी के साथ इसके सम्बन्धों की पड़ताल करना शुरुआत करने के लिए सबसे सही जगह होगी।

रेडियो खगोलशास्त्र और परग्रही बुद्धिमत्ता की खोज

मोटेतौर पर बात करें तो रेडियो खगोलशास्त्र में खगोलीय वस्तुओं से आने वाली रेडियो तरंगों का प्रेक्षण किया जाता है। रेडियो तरंगें एक तरह की विद्युत चुम्बकीय तरंगें होती हैं। सबसे अधिक जानी-पहचानी विद्युत चुम्बकीय तरंगें हैं - प्रकाश की तरंगें (**बॉक्स-1** देखें)। हम सभी प्रतिदिन रेडियो तरंगों का इस्तेमाल करते हैं, भले ही इस बारे में सचेत न हों (**बॉक्स-2** देखें)। लेकिन इन तरंगों और खगोलशास्त्र के बीच क्या सम्बन्ध है?

बॉक्स-1 : विद्युत चुम्बकीय तरंगें कई प्रकार की होती हैं

ये कई मीटर लम्बी रेडियो तरंगों से लेकर बहुत छोटी गामा-किरणों तक कई प्रकार की होती हैं। प्रकाश (देखे जा सकने वाला वर्णक्रम), यानी वह विद्युत चुम्बकीय तरंग जिससे हम सबसे अधिक परिचित हैं, पूरे वर्णक्रम का बस एक छोटा-सा हिस्सा है।

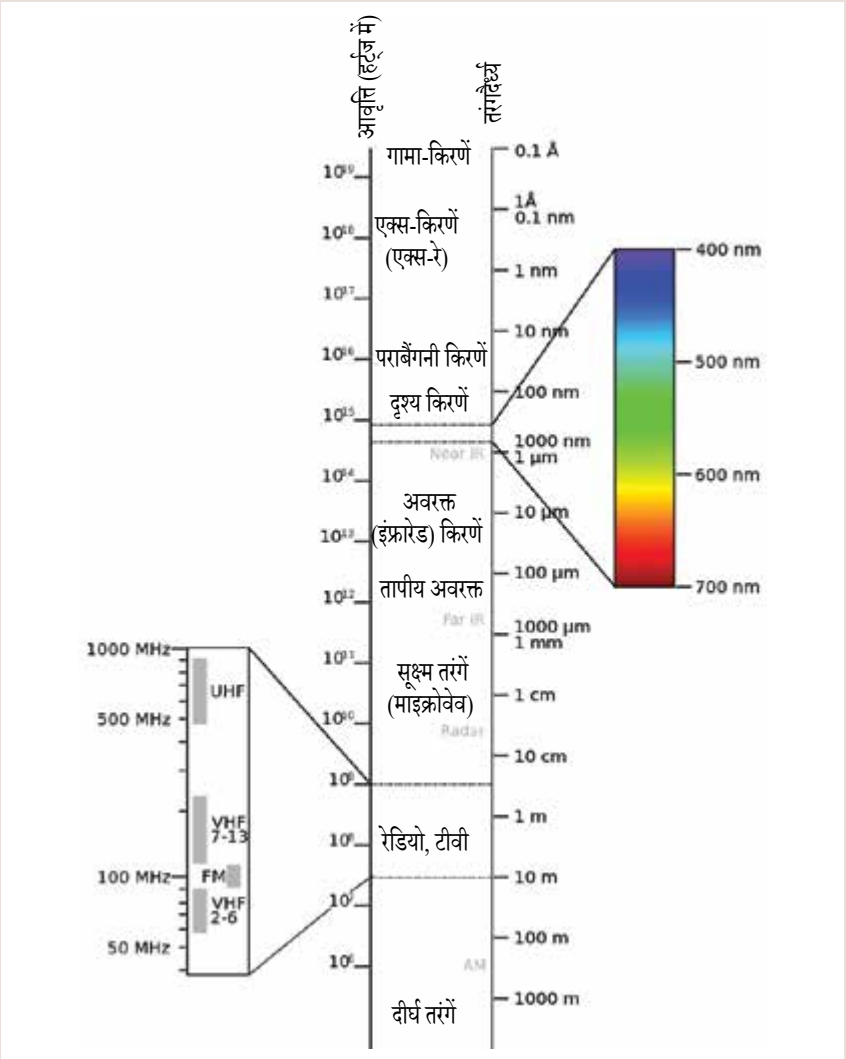

चित्र-2 : विद्युत चुम्बकीय वर्णक्रम। सभी विद्युत चुम्बकीय तरंगें प्रकाश की चाल से सफ़र करती हैं, लेकिन हर प्रकार की तरंग की ऊर्जा उसकी तरंगदैर्ध्य के बिलकुल विपरीत बदलती है। इसलिए, सबसे लम्बी तरंगदैर्ध्य वाली रेडियो तरंगें सबसे कम ऊर्जावान होती हैं, जबकि छोटी तरंगदैर्ध्यों वाली गामा-किरणें सबसे ऊर्जावान होती हैं। अपेक्षाकृत छोटी तरंगदैर्ध्य वाली एक्स-रे भी इतनी ऊर्जावान होती हैं कि वे मनुष्य की त्वचा और मांस को भेदकर निकल जाती हैं, लेकिन हड्डियों को नहीं भेद पातीं। इसीलिए एक्स-रे तस्वीर में हड्डियाँ फोटोग्राफ़िक प्लेट (एक्स-रे की प्लेट) पर अपनी छाया छोड़ती हैं।

Source: Victor Blacus, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Electromagnetic-Spectrum.svg. License: CC-BY-SA.

बॉक्स-2 : हम अपनी रोज़मर्रा की ज़िन्दगी में रेडियो तरंगों का उपयोग करते हैं।

रेडियो तरंगों का उपयोग मुख्य रूप से संचार के लिए किया जाता है - एफएम रेडियो संकेतों (लगभग 3 मीटर की तरंगदैर्ध्य वाली तरंगों का प्रयोग करके) और मोबाइल फ़ोन के संकेतों (लगभग 30 सेंटीमीटर की तरंगदैर्ध्य वाली तरंगें) को ले जाने से लेकर टीवी के संकेतों (ज़मीन-आधारित टीवी स्टेशनों के लिए सामान्यतया लगभग 50 सेंटीमीटर की तरंगदैर्ध्य वाली तरंगों से लेकर सैटेलाइट/उपग्रह टीवी के लिए कुछ सेंटीमीटर की तरंगदैर्ध्य वाली तरंगों तक) को ले जाने तक। माइक्रोवेव ओवन भी खाना गर्म करने के लिए रेडियो तरंगों (कुछ सेंटीमीटर की तरंगदैर्ध्य वाली) का उपयोग करते हैं।

खगोलशास्त्र ने पारम्परिक रूप से दृश्य प्रकाश का उपयोग किया है, क्योंकि यह विद्युत चुम्बकीय तरंग का वह अकेला प्रकार है जिसके प्रति मनुष्य की आँख संवेदनशील होती है। लेकिन, तारे तथा अन्य प्रकार के खगोलीय पिण्ड गामा-किरणों से लेकर रेडियो तरंगों तक तमाम प्रकार के विद्युत चुम्बकीय विकिरण उत्सर्जित करते हैं। सिद्धान्त रूप में, पर्याप्त रूप से संवेदनशील उपकरणों की सहायता से हम इन सभी तरंगदैर्ध्यों पर आकाश का अध्ययन कर सकते हैं। लेकिन फिर वही सवाल उठता है

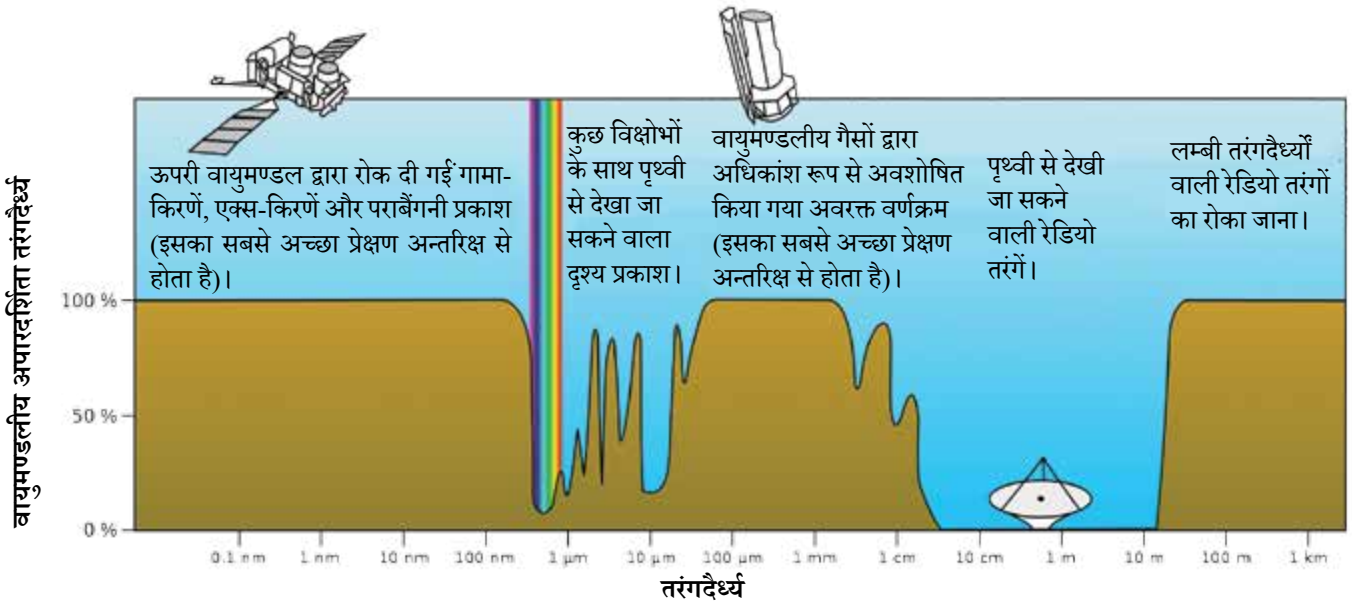

चित्र-3 : वायुमण्डलीय अपारदर्शिता तरंगदैर्ध्य का एक कार्य है। वायुमण्डल (और आयनमण्डल) विद्युत चुम्बकीय वर्णक्रम के अधिकांश हिस्सों में लगभग पूरी तरह से अपारदर्शी है। केवल प्रकाशीय (देखे जा सकने वाला सामान्य प्रकाश जिसके प्रति मनुष्य की आँखें संवेदनशील होती हैं) और रेडियो (जिस पर तरंगदैर्ध्य वाले रेडियो दूरदर्शक काम करते हैं) खिड़कियाँ ही ऐसी होती हैं जहाँ वायुमण्डल पारदर्शी होता है। चूँकि सुदूर स्थित खगोलीय स्रोतों से होने वाला विकिरण अन्य तरंगदैर्ध्यों पर पृथ्वी की सतह तक नहीं पहुँचता, उनका प्रेक्षण सिर्फ़ अन्तरिक्ष में प्रक्षेपित उपग्रहों द्वारा किया जा सकता है। यह, सामान्यतया, पृथ्वी पर दूरदर्शक तैयार करने से कहीं ज़्यादा ख़र्चीला होता है।
Source: Mysid, Wikimedia Commons. URL: https://en.wikipedia.org/wiki/Optical_window#/media/File:Atmospheric_electromagnetic_opacity.svg.
License: Public Domain.

– आख़िर क्यों कोई (धरती पर) ऐसा करना चाहेगा? फिर हमें पता चलता है (जैसा कि हम आगे देखेंगे) कि सिर्फ़ प्रकाश तरंगों में ब्रह्माण्ड का अध्ययन करने से, ब्रह्माण्ड में जितनी तरह की वस्तुएँ और जानकारियाँ छिपी हैं, उनकी बहुत सीमित समझ हमें मिल पाती है। काफ़ी कुछ नेत्रहीन लोगों और हाथी की कहानी की तरह, इस तरह ब्रह्माण्ड का अध्ययन करने से हम ब्रह्माण्ड की बिलकुल ग़लत तस्वीर बना सकते हैं। ब्रह्माण्ड को उसकी पूरी समृद्धि और विविधता में समझने के लिए हमें उसे तमाम सम्भव तरीक़ों से समझना होगा। और इससे हमारे सामने अगला सवाल खड़ा हो जाता है - अगर सभी सम्भव तरंगदैर्ध्यों पर ब्रह्माण्ड का प्रेक्षण करना ज़रूरी है तो रेडियो खगोलशास्त्र के बारे में ख़ास बात क्या है?

आकाश का प्रेक्षण करने के लिए रेडियो तरंगों का इस्तेमाल करने का एक बड़ा लाभ इस तथ्य से निकलता है कि पृथ्वी का वायुमण्डल इन तरंगों के लिए सुभेद्य होता है। इसका मतलब है कि परग्रही वस्तुओं से आने वाले रेडियो उत्सर्जन पृथ्वी की सतह पर बने दूरदर्शकों तक पहुँच सकते हैं। इसके विपरीत, एक्स-रे जैसी अन्य विद्युत चुम्बकीय तरंगें पृथ्वी की सतह पर पहुँचने के पहले ही अवशोषित कर ली जाती हैं (**चित्र-3** देखें)। यह हमारे लिए एक अच्छी बात है क्योंकि इनमें से कई किरणें जीवन के लिए हानिकारक होती हैं। दूसरी तरफ़, खगोलविज्ञानियों के लिए, यह एक मिश्रित वरदान है - पृथ्वी इन खगोलविज्ञानियों की मेज़बानी कर सकती है क्योंकि ऊर्जावान किरणें पृथ्वी की सतह तक नहीं पहुँच पातीं। लेकिन इन खगोलविज्ञानियों को अच्छे-ख़ासे महँगे उपग्रहों की आवश्यकता होती है और फिर उन्हें एहसास होता है कि वे कितने भाग्यशाली हैं कि उनके पास वायुमण्डल और आयनमण्डल का संरक्षण है!

फिर हमें पता लगता है कि सिर्फ़ पृथ्वी का वायुमण्डल ही ऐसा नहीं है जो रेडियो तरंगों के लिए सुभेद्य है। हमारी आकाशगंगा का अधिकांश हिस्सा भी रेडियो तरंगों के लिए सुभेद्य है। पर प्रकाश की तरंगों

बॉक्स-3 : पृथ्वी एक घूर्णन पूरा करने में एक दिन से थोड़ा कम समय लेती है।

हम दिन को 24 घण्टों का मानने के आदी हैं, और इस समय को हम पृथ्वी द्वारा अपना एक घूर्णन पूरा करने के लिए लगने वाला समय भी मानते हैं। पर अपनी धुरी के चारों ओर घूर्णन करने के अलावा, पृथ्वी सूर्य के चारों ओर भी चक्कर लगा रही है। इसलिए, वास्तव में तो एक दिन (या एक सौर दिन कहना ज़्यादा सही होगा) को, एक मध्याह्न (यानी वह समय जब सूर्य क्षितिज से अपनी सर्वाधिक ऊँचाई पर होता है) से अगले मध्याह्न तक की अवधि के रूप में परिभाषित किया जाता है। इसमें एक घूर्णन के लिए लगने वाले समय (**चित्र-4** देखें) से थोड़ा-सा अधिक समय (लगभग 4 मिनट) लगता है। इसलिए, 23 घण्टे और 56 मिनटों की आवधिकता (जिसे नक्षत्र दिवस कहा जाता है) तारों और अन्य खगोलीय वस्तुओं की विशेषता होती है।

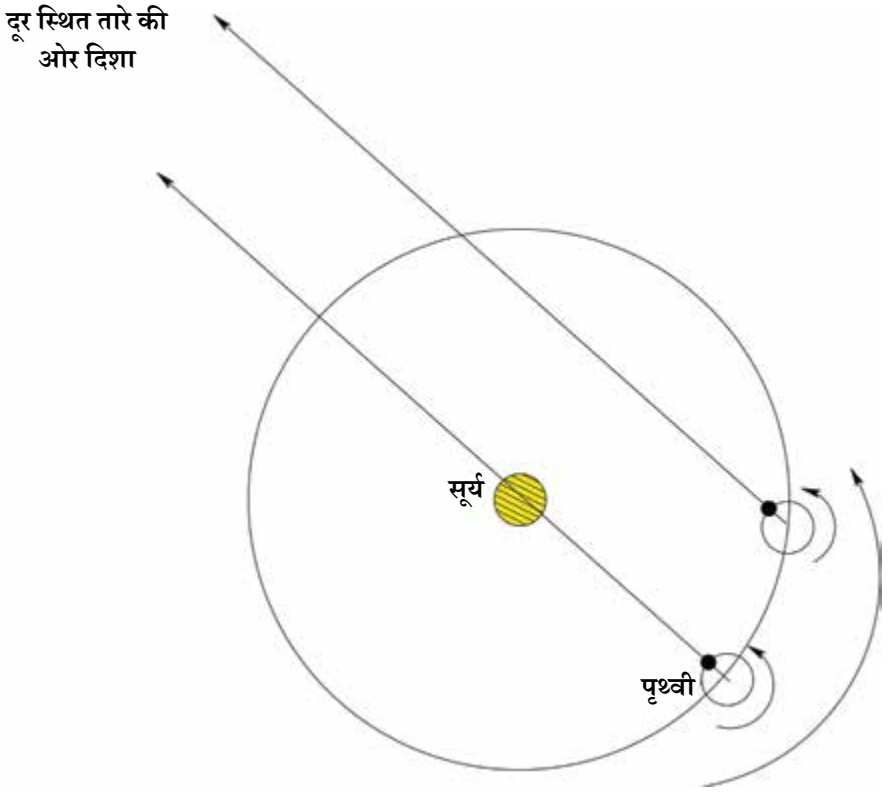

चित्र-4 : पृथ्वी अपनी धुरी पर घूर्णन करने के साथ ही सूर्य के चारों ओर भी चक्कर लगा रही है।

हम देख सकते हैं कि दिखाए गए समय के दोनों क्षणों पर पृथ्वी ने अपना एक घूर्णन पूरा कर लिया है (चूँकि, चिह्नित किया गया स्थान पुनः मूल दिशा की ओर इशारा कर रहा है)। जहाँ पहले समय के क्षण की दिशा सूर्य की ओर है, दूसरे समय के क्षण में ऐसा नहीं है। यह अन्तर इसलिए है क्योंकि दूसरे समय वाले क्षण तक पृथ्वी सूर्य के चारों ओर चक्कर लगाती हुई अपनी कक्षा में आगे बढ़ चुकी है और सूर्य एकदम सिर के ऊपर हो, ऐसी स्थिति में आने के लिए उसे थोड़ा और घूमना पड़ेगा। इसलिए, एक सौर दिन, पृथ्वी के घूर्णन के समय से थोड़ा लम्बा होता है। यह तथ्य हमें सुदूर स्थित वस्तुओं (जिनकी आवधिकता पृथ्वी के घूर्णन के समय यानी, 23 घण्टे और 56 मिनट के बराबर होगी) से आने वाले उत्सर्जनों और पास की वस्तुओं से आने वाले उत्सर्जनों के बीच अन्तर करने का मौक़ा देता है।

Credits: Jayaram N Chengalur.
License: CC-BY-NC.

के लिए ऐसा नहीं कहा जा सकता। तारों के बीच की जगह में धूल के बारीक़ कण होते हैं, जो प्रकाश को बिखेर देते हैं और उसे अवशोषित कर लेते हैं, पर ये कण रेडियो तरंगों पर कोई असर नहीं डालते। इसका अर्थ हुआ कि रेडियो तरंगें हमें गहरे अन्तरिक्ष के उन क्षेत्रों में झाँकने का मौक़ा देती हैं जो तारे के प्रकाश के लिए पूरी तरह से अपारदर्शी होते हैं। यह एक बड़ा कारण है कि सेटी द्वारा रेडियो तरंगों का इस्तेमाल किया जाता है। ये हमें आकाश के उन क्षेत्रों में प्रौद्योगिकी का इस्तेमाल करने वाली किसी सभ्यता के संकेतों को तलाशने का मौक़ा दे सकती हैं जहाँ पड़ताल करने का मौक़ा अन्वेषण के किसी अन्य तरीक़े से नहीं मिल सकता। उदाहरण के लिए, अगर हमें किसी अन्य सभ्यता के आन्तरिक संवाद को छिपकर सुनना हो, तो ऐसा कुछ भी 'सुनने' का हमारा सबसे अच्छा मौक़ा रेडियो तरंगदैर्ध्यों पर ही होगा। विद्युत चुम्बकीय तरंगों में सबसे कम ऊर्जावान होने के कारण रेडियो तरंगें संचार संकेतों का सबसे सस्ता स्वरूप होती हैं। यह एक और कारण है कि सेटी रेडियो तरंगों पर अपना ध्यान केन्द्रित करता है। पृथ्वी पर लम्बी दूरी के संचार ने, सिर्फ़ रेडियो तरंगों की खोज के बाद ही वाकई में ज़ोर पकड़ा। इसलिए यह बहुत आश्चर्यजनक नहीं है कि रेडियो खगोलशास्त्र को स्थापित करने में संचार इंजीनियरिंग की केन्द्रीय भूमिका रही है।

रेडियो संचार और रेडियो खगोलशास्त्र का जन्म

1930 के दशक के दौरान, रेडियो तरंगों से होने वाला ट्रांसअटलांटिक (अटलांटिक के आर-पार होने वाला) संचार अपने शैशवकाल में था। ट्रांसअटलांटिक संचार से जुड़ी कम्पनियाँ रेडियो तरंगों द्वारा पकड़े गए 'शोर' (स्टैटिक) के विभिन्न स्रोतों की पहचान करने, और सम्भव हो तो उन्हें हटाने के तरीक़ों की तलाश कर रही थीं। इस क्षेत्र में अगुआ, बॅल टैलीफ़ोन कम्पनी ने रेडियो संचार में शोर के लक्षण बताने का काम अपने एक इंजीनियर कार्ल जैंस्की को सौंपा। जैंस्की ने इसका अत्यन्त व्यवस्थित ढंग से प्रेक्षण किया और बहुत ही संभलकर, और मेहनत से किए गए प्रयास से उन्होंने उन्हें प्राप्त हो रहे शोर को तीन अलग-अलग श्रेणियों में बाँटा। **(अ)** आस-पास होने वाले आँधी-तूफ़ान से पैदा होने वाला शोर

बॉक्स-4: तारों से होने वाले रेडियो उत्सर्जन सूर्य से होने वाले उत्सर्जनों की तुलना में बहुत कमज़ोर होते हैं।

यह अन्तर, सूर्य से हमारी दूरी बनाम अन्य तारों से हमारी दूरी से सम्बन्धित है। सबसे क़रीबी तारे की हमसे दूरी, सूर्य की हम से दूरी से भी लगभग 300,000 गुना है, जिसका मतलब यह हुआ कि यदि वह रेडियो तरंगों में आन्तरिक रूप से सूर्य के जितना ही प्रकाशमान हो, तो वह लगभग 9000 करोड़ गुना कम प्रकाशमान दिखाई देगा। यह उत्सर्जन इतना हल्का था कि प्रारम्भिक रेडियो दूरदर्शक इसे पकड़ नहीं पाते थे।

(ब) दूर-दराज़ के आँधी-तूफ़ान से पैदा होने वाला शोर, और **(स)** अज्ञात उत्पत्ति वाला शोर। इसके बाद ध्यान से आगे की पड़ताल करने पर उन्होंने पाया कि शोर की तीसरी श्रेणी की आवधिकता 23 घण्टे और 56 मिनट की है, यानी पृथ्वी को एक घूर्णन पूरा करने में लगने वाला समय। इससे समझ में आया कि इस तीसरी श्रेणी का स्रोत कहीं दूर है, सौर मण्डल से भी बहुत दूर (**बॉक्स-3** देखें)। बारीक़ी से किए गए और प्रेक्षण, तथा प्रकाशीय (ऑप्टिकल) प्रेक्षणों से ज्ञात जानकारी के साथ तुलना करने से जैंस्की को यह निर्धारित करने का मौक़ा मिला कि वह जिन रेडियो तरंगों को प्राप्त कर रहे थे वे आकाशगंगा के केन्द्र की दिशा में सबसे शक्तिशाली थीं।

यह किसी परग्रही वस्तु से आने वाली रेडियो तरंगों की पहली खोज थी, और इसने लोगों का बहुत अधिक ध्यान अपनी तरफ़ खींचा। न्यूयॉर्क टाइम्स व अन्य अख़बारों ने अपने मुखपृष्ठ पर इसे छापा। लेकिन इसके कई साल बीत जाने के बाद ही पेशेवर खगोलविज्ञानियों ने इस खोज पर ध्यान दिया। कुछ इसलिए भी क्योंकि रेडियो खगोलशास्त्र के लिए ज़रूरी प्रौद्योगिकी, प्रकाशीय खगोलविज्ञानियों द्वारा उपयोग की जाने वाली प्रौद्योगिकी से बिलकुल अलग थी। प्रकाशीय खगोलविज्ञानियों के समुदाय को अपने आपको रेडियो खगौलविज्ञानियों के तौर पर पुनर्प्रशिक्षित करने के लिए कड़े प्रयास करने पड़े होंगे। (दरअसल, प्रकाशीय और रेडियो खगोलविज्ञानियों के बीच की खाई आज तक मौजूद है, और रेडियो खगोलशास्त्र अभी भी खगोलशास्त्र का एक अत्यन्त विशिष्ट उप-विषय बना हुआ है)। लेकिन, ऐसा होने का एक कारण यह भी था कि जैंस्की की खोज उस समय हुई जब अमरीका में महामन्दी का दौर था, जब नए और जोखिम भरे प्रयत्नों के लिए धनराशि जुटाना काफ़ी मुश्किल काम था। लेकिन, दूसरे विश्वयुद्ध के दौरान रेडियो प्रौद्योगिकी के विकास में अचानक एक विस्तार हुआ, जो मुख्य रूप से शक्तिशाली रक्षा रडार तंत्रों की आवश्यकता के कारण हुआ था। युद्ध के बाद, इनमें से कुछ रडार सुविधाओं का इस्तेमाल रेडियो इंजीनियरों द्वारा खगोलशास्त्र के लिए किया गया था। बहुत जल्दी ही इससे यह खोज हुई कि सूर्य खगोलीय रेडियो तरंगों के सबसे

बॉक्स-5 : चमकदार वस्तुओं को उनके द्वारा पैदा किए जाने वाले वर्णक्रम के प्रकार के द्वारा पहचाना जा सकता है।

सफ़ेद प्रकाश में अलग-अलग रंगों के प्रकाश का मिश्रण है, जिसे हम प्रिज्म का इस्तेमाल कर उसके संघटक रंगों में तोड़कर देख सकते हैं (आपने सीडी या डीवीडी को चलाते समय यह देखा होगा)। प्रकाश को उसके संघटक रंगों में वियोजित करना (या तरंगदैर्ध्यों में वियोजित करना क्योंकि अलग-अलग रंगों का प्रकाश अलग-अलग तरंगदैर्ध्यों के प्रकाश के सदृश होता है) ही वर्णक्रम कहलाता है। किसी चमकदार वस्तु का वर्णक्रम उसकी संरचना के बारे में तमाम जानकारी लिए रहता है। उदाहरण के लिए, आतिशबाज़ी में जो विभिन्न रंग हम देखते हैं वे दरअसल उन तमाम तत्वों से निकलते हैं जो उसके चूरे में घुले हुए रहते हैं, और हर तत्व अलग तरंगदैर्ध्य का प्रकाश उत्सर्जित करता है।

बॉक्स-6 : खगोलीय स्रोतों की तरंगदैर्ध्यों में बदलाव ब्रह्माण्ड के विस्तार के कारण होते हैं।

ब्रह्माण्ड के विस्तृत होने पर, दूरस्थ स्रोतों से उत्सर्जित होने वाले प्रकाश की तरंगदैर्ध्य भी उसके साथ प्रसार करती हैं। इसलिए, अन्त में पृथ्वी पर जो हमें प्राप्त होती है, वह मूल रूप से उत्सर्जित हुई तरंगदैर्ध्य की तुलना में लम्बी तरंगदैर्ध्य होती है। इसे ही रैडशिफ्ट कहा जाता है, क्योंकि इसमें लम्बी तरंगदैर्ध्यों या विद्युत चुम्बकीय वर्णक्रम में लाल-से रंगों की ओर स्थानान्तरण होता है।

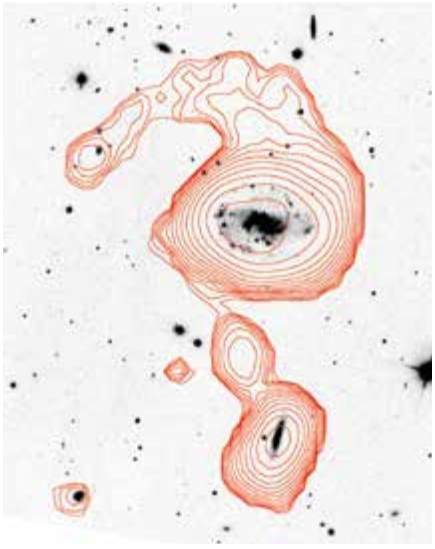

चित्र-5 : प्रकाशीय और रेडियो दूरदर्शक हमें ब्रह्माण्ड के अलग-अलग पहलू दिखाते हैं। काली और सफ़ेद तस्वीर एक प्रकाशीय (दृश्य प्रकाश) छवि है। दृश्य प्रकाश में तारे चमकदार दिख रहे हैं, इसलिए हम इस तस्वीर में पास की दो आकाशगंगाओं में तारों की स्थिति को देख रहे हैं। इस तस्वीर को उलटा कर दिया गया है (किसी तस्वीर के नेगेटिव की तरह) इसलिए तस्वीर में दिखने वाले अँधेरे-से क्षेत्र दरअसल चमकदार हैं। दृश्य प्रकाश में ये दोनों आकाशगंगाएँ काफ़ी सामान्य दिखाई देती हैं, और ऐसा लगता है कि उनका एक-दूसरे से कोई परस्पर सम्बन्ध नहीं है। इसके विपरीत, अध्यारोपित लाल रेखाएँ जीएमआरटी का इस्तेमाल करके रेडियो तरंगदैर्ध्यों पर बनाई गई एक तस्वीर की हैं। ये लाल रेखाएँ जो इन आकाशगंगाओं के इर्द-गिर्द गैस (हाइड्रोजन) के जमाव को दिखाती हैं, एक बहुत अलग ही कहानी कहती हैं। हर आकाशगंगा के इर्द-गिर्द जमा होने के अलावा, यह गैस दोनों आकाशगंगाओं को जोड़ने वाला सेतु, और बड़ी आकाशगंगा में से निकली एक लम्बी पूँछ बनाती है। यह दिखाता है कि ये दो आकाशगंगाएँ साफ़ तौर पर एक-दूसरे को परस्पर प्रभावित कर रही हैं, और सम्भवतया भविष्य में ये एक-दूसरे में समा जाएँ (उदाहरण के लिए, जून 2016 के **आई वंडर...** के अंक में आनन्द नारायणन का लेख, 'बाह्य अन्तरिक्ष में होने वाली अन्तर्क्रियाएँ' देखें)

Credits: Jayaram N Chengalur. License: CC-BY-NC.

प्रकाशमान स्रोतों में से एक है, और आकाश दरअसल रेडियो स्रोतों से भरा पड़ा है।

ब्रह्माण्ड के रहस्य खोलना - रेडियो दूरदर्शक क्या 'देखते' हैं?

रात के आकाश की सबसे आकर्षक बात उसके चारों तरफ़ बिखरे तारों का चित्रपट है। इसके साथ ही यह तथ्य सामने आने से कि सूर्य रेडियो तरंगों का एक शक्तिशाली स्रोत है, ऐसी सम्भावना लगने लगी कि ये नए प्रेक्षण कुछ नए क़िस्म के तारों को खोज रहे थे, जिन्हें रेडियो तारे कहा गया। लेकिन, पता चला कि तारों से होने वाला रेडियो उत्सर्जन बहुत कमज़ोर होता है (**बॉक्स-4** देखें)। और इन शुरुआती प्रेक्षणों में खोजे गए स्रोतों में से लगभग कोई ऐसा नहीं था जो ज्ञात तारों के अनुरूप हो। तो फिर तारों के अलावा वे ऐसी कौन-सी खगोलीय वस्तुएँ थीं जिनकी खोज रेडियो दूरदर्शक कर रहे थे?

इस सवाल का जवाब लम्बे समय तक स्पष्ट नहीं हो सका। शुरुआती रेडियो दूरदर्शकों का कोणीय विभेदन (angular resolution) बहुत ख़राब था (**बॉक्स-7** देखें), जिसके कारण रेडियो स्रोतों को प्रकाशीय तस्वीरों में दिखने वाले स्रोतों से मिलाकर उनकी पक्की पहचान करना बहुत मुश्किल था। लेकिन, 1962 में, पार्क्स रेडियो दूरदर्शक के रेडियो प्रेक्षणों का इस्तेमाल करके सबसे प्रकाशमान रेडियो स्रोतों में से एक, 3सी273 की सही-सही स्थिति का पता लगाया गया। उस युग के सभी दूरदर्शकों की तरह पार्क्स रेडियो दूरदर्शक का रैजोल्यूशन भी बहुत साधारण था। लेकिन, बाद में पता चला कि 3सी273 को कभी-कभी चन्द्रमा द्वारा ढँक दिया (छिपा दिया) जाता है। इस ग्रहण के दौरान 3सी273 की रेडियो चमक जिस तरह से बदली, उसका बारीक़ी से प्रेक्षण करने पर खगोलज्ञों ने ठीक-ठीक उस समय का पता लगा लिया जब चाँद का सिरा इस स्रोत के पार गया। इससे पुरानी प्रकाशीय छवियों की रहस्यमयी रेडियो तरंगों के स्रोत की भी पहचान हो सकी। आश्चर्यजनक रूप से, यह स्रोत कोई अवर्गीकृत, और काफ़ी कुछ तारे जैसे दिखने वाला पिण्ड प्रतीत हुआ। तो क्या रेडियो दूरदर्शक, आख़िरकार, किस तरह के तारों की खोज कर रहे थे?

इस सवाल का जवाब देने के लिए, मार्टीन श्मिड्ट नाम के खगोलविज्ञानी ने तारे जैसे 3सी273 के वर्णक्रम (**बॉक्स-5** देखें) का प्रेक्षण किया। कोई तारा जिस तरह के वर्णक्रम को पैदा करता है, वह उसकी संरचना को निर्धारित करने में मदद करता है। उदाहरण के लिए, सूर्य के वर्णक्रम में एक विशेष तेज़ रंग है (जिसे वर्णक्रम रेखा कहते हैं) जो हीलियम नामक तत्व (जिसका यह नाम, सबसे पहले सौर वर्णक्रम के प्रेक्षणों के कारण पहचान में आने से पड़ा है) की वजह से उभरता है। 3सी273 के वर्णक्रम में कई वर्णक्रम रेखाएँ भी थीं, लेकिन उनकी तरंगदैर्ध्य, हमें ज्ञात किन्हीं भी तत्वों के लिए प्रत्याशित तरंगदैर्ध्यों से मेल नहीं खाती थी।

इन्हीं सब बातों पर माथापच्ची करते हुए, मार्टीन श्मिड्ट को अचानक से यह एहसास हुआ कि वर्णक्रम रेखाएँ दरअसल ज्ञात तत्वों की तरंगदैर्ध्यों के सदृश ही थीं, लेकिन वे सभी 15.8 प्रतिशत ज़्यादा लम्बी तरंगदैर्ध्यों पर पहुँचा दी गई थीं! खगोलीय स्रोतों से आने वाले प्रकाश के ज़्यादा लम्बी तरंगदैर्ध्यों (जिन्हें रैडशिफ्ट कहा जाता है) की ओर स्थानान्तरण का प्रेक्षण भी तब तक कई दशकों से हो रहा था, और यह समझा जाता था कि ये परिवर्तन ब्रह्माण्ड के विस्तार के कारण हो रहे होंगे। लेकिन, चूँकि 3सी273 के वर्णक्रम की तरंगदैर्ध्यों में हुआ बदलाव, पहले देखे गए किसी भी रैडशिफ्ट की तुलना में इतना बड़ा था कि उसकी वर्णक्रम रेखाओं को रैडशिफ्ट हुए तंत्र की रेखाओं के रूप में पहचानने में कुछ समय लगा। यह 1962 तक खोजी गई सबसे दूरदराज़ की वस्तु थी, और इसलिए हमें पता चली सबसे चमकदार वस्तुओं में से एक भी थी। दरअसल यह किसी भी ज्ञात तारे से कहीं ज़्यादा चमकदार थी। अब हम जानते हैं कि 3सी273 कोई तारा नहीं है, बल्कि एक ब्लैक होल है, और इसका द्रव्यमान सूर्य के द्रव्यमान से अरबों गुना अधिक है! किसी ब्लैक होल के इर्द-गिर्द घूमने वाला पदार्थ, ब्लैक होल द्वारा उसे निगले जाने के पहले अत्यधिक तापमानों तक पहुँच जाता है, और लगभग प्रकाश की चाल से चमकीली फुहारें जैसी छोड़ता रहता है। इन फुहारों में जो पदार्थ होता है, यही पदार्थ वह रेडियो उत्सर्जन पैदा करता है जिसे दूरदर्शकों द्वारा पकड़ा जाता है। इसलिए, रेडियो खगोलज्ञों ने एक बिलकुल ही नए प्रकार की वस्तु की खोज की थी जिसे अब सामान्य रूप से रेडियो गैलेक्सी के नाम से जाना जाता है। यह इस बात का सिर्फ़ एक उदाहरण है कि किस तरह अलग-अलग तरंगदैर्ध्यों पर ब्रह्माण्ड को देखने से कई नई चौंका देने वाली खोजें सामने आ सकती हैं। और वाकई में अक्सर ऐसा ही होता रहा है, और प्रेक्षण के नए झरोखों के खुलने से सामान्यतया नई अनोखी वस्तुओं की खोज होती रही है।

रेडियो गैलेक्सियों के केन्द्र में होने वाले भीमकाय ब्लैक होल, रेडियो खगोलशास्त्र द्वारा खोजे जाने वाली अकेली खगोलीय वस्तुएँ नहीं हैं। प्रारम्भिक खोजों में पल्सर तारे (ऐसे पिण्ड जिनका घनत्व परमाणु नाभिकों के समान होता है, लेकिन उनकी त्रिज्याएँ कुछ किलोमीटर की होती हैं, और द्रव्यमान सूर्य के द्रव्यमान जितने होते हैं) और खगोलीय पार्श्व सूक्ष्मतरंगी विकिरण (बिग बैंग या महाविस्फोट के बाद के समय के बचे हुए विकिरण, जब ब्रह्माण्ड पर्याप्त रूप से इतना ठण्डा हो चुका था कि इलेक्ट्रॉनों और प्रोटॉनों ने मिलकर न्यूट्रल परमाणु बनाए थे) भी शामिल हैं। तारों के बीच पाई जाने वाली विसरित गैस भी रेडियो तरंगों की शक्तिशाली उत्सर्जक है। आमतौर पर, प्रकाशीय दूरदर्शक हमें दिखाते हैं कि

जीएमआरटी ऐंटीना की स्थिति (30 छतरियाँ)

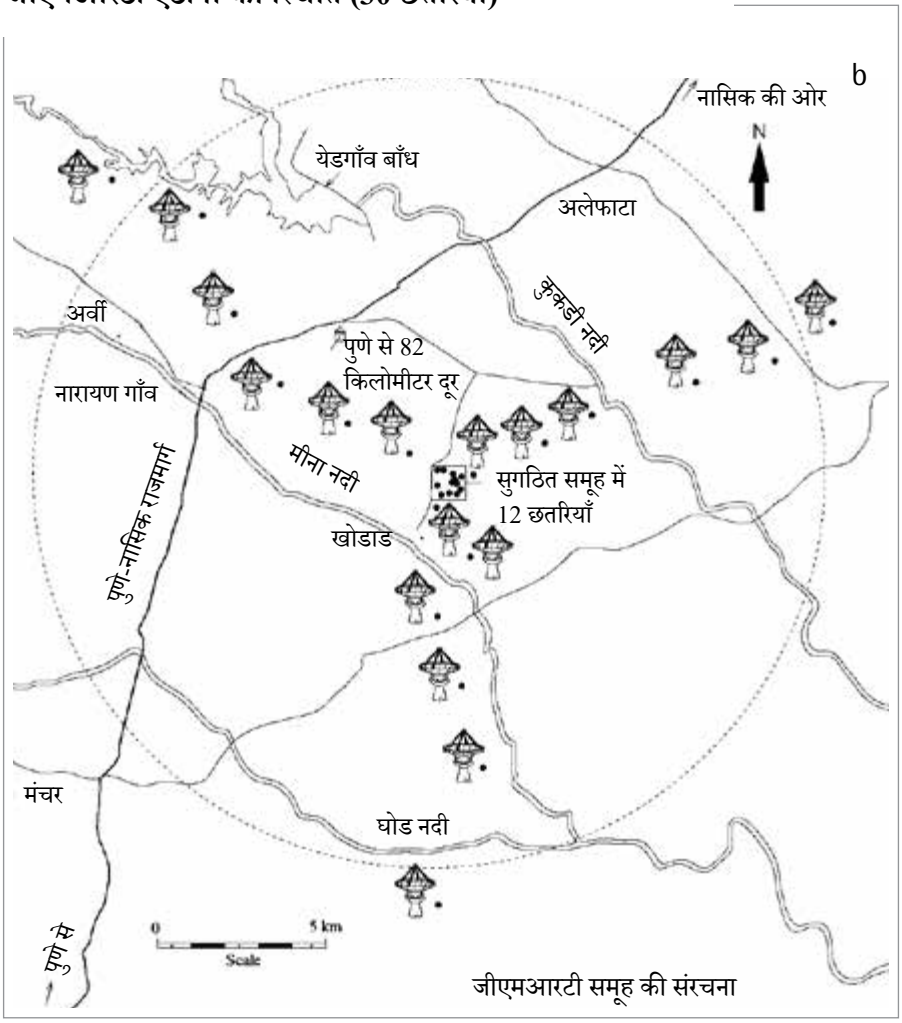

तारे कहाँ हैं, जबकि रेडियो दूरदर्शक हमें इस गैस का वितरण दिखाते हैं। ये बहुत अलग हो सकते हैं (**चित्र-5** देखें), जिससे फिर यह बात सिद्ध होती है कि अपने आस-पास के संसार को समझने के लिए हमें कई प्रकार के प्रेक्षणों की ज़रूरत होती है।

वृहत मीटरवेव रेडियो दूरदर्शक (जीएमआरटी)

1960 का दशक - भारत रेडियो खगोलशास्त्र में दख़ल रखने वाले राष्ट्रों की मण्डली में शामिल हो गया।

ऊधगमण्डलम के पास की पहाड़ियों पर स्थित, 1960 के दशक में बना, ऊटी रेडियो दूरदर्शक (ओआरटी) भारत का पहला बड़ा दूरदर्शक है। यह बेलनाकार दूरदर्शक 530 मीटर लम्बा और 30 मीटर चौड़ा है। इसे टाटा मूलभूत अनुसंधान संस्थान (टीआईएफआर), मुम्बई के प्रोफ़ेसर गोविन्द स्वरूप के नेतृत्व वाले एक समूह द्वारा सोचा और बनाया गया था।

चित्र-6 : पुणे के पास खोडाड गाँव में स्थित वृहत मीटरवेव रेडियो दूरदर्शक (जीएमआरटी) के ऐंटीना। जीएमआरटी दुनिया के विशालतम रेडियो इंटरफेरोमीटर में से एक है, और अपने संचालन की तरंगदैर्ध्यों पर भी सबसे संवेदनशील दूरदर्शकों में से एक है। 25 किलोमीटर के क्षेत्रफल में फैले हुए जीएमआरटी के ऐंटीना पूरे तालमेल के साथ तस्वीरें बनाते हैं जिनका कोणीय विभेदन 25 किलोमीटर आकार वाले किसी दर्पण जैसा होता है। **(अ)** इसके कुछ ऐंटीना। जीएमआरटी में ऐसे 30 ऐंटीना हैं और इनमें से हर एक का व्यास 45 मीटर है। **(ब)** जीएमआरटी ऐंटीना की स्थिति। एक सुसंगत समूह में स्थापित की गईं 12 छतरियाँ पुणे के पास खोडाड गाँव में हैं। बाक़ी के ऐंटीना लगभग Y जैसी आकार वाली 3 भुजाओं से लगकर फैले हैं, और इनमें से हर एक भुजा लगभग 14 किलोमीटर लम्बी है। एक-दूसरे से सबसे ज़्यादा दूर स्थित ऐंटीना के बीच की दूरी लगभग 25 किलोमीटर है।
Credits: B. Premkumar, NCRA-TIFR.

बॉक्स-7 : जीएमआरटी के 30 ऐंटीना से मिलने वाले संकेतों को द्वारक संयोजन (Aperture Synthesis) नामक प्रक्रिया द्वारा एक-दूसरे से जोड़ा जाता है।

यह सोचना स्वाभाविक लग सकता है कि बड़ा दूरदर्शक छोटे दूरदर्शक से बेहतर होगा। पर बड़ा दूरदर्शक किन बातों में बेहतर होगा?

किसी दूरदर्शक के प्रदर्शन को आँकने के लिए दो अलग-अलग कसौटियाँ हैं। पहली है, किसी दूरस्थ वस्तु की बहुत बारीक़ जानकारियों को भी देख पाने की क्षमता (उदाहरण के लिए, हम दो पास स्थित तारों के बीच भेद कर सकें, या फिर दूरदर्शक की तस्वीर इतनी धुँधली है कि वे दो की बजाय एक ही तारे के रूप में दिख रहे हैं)। इसे ही दूरदर्शक का विभेदन (resolution of the telescope) कहते हैं। दूसरी क्षमता है, मद्धिम वस्तुओं को भी खोज पाने की क्षमता। कोई स्रोत जितना दूर होता है, उतना ही मद्धिम प्रतीत होता है, तो दरअसल यह क्षमता है किसी रेडियो स्रोत के दूर, और दूर जाते जाने पर भी उसका प्रेक्षण कर पाने की। इस कसौटी को सामान्य तौर पर दूरदर्शक की संवेदनशीलता कहा जाता है।

परवलयिक दूरदर्शकों में, द्वार पर गिरने वाला सारा प्रकाश फोकस पर संकेन्द्रित रहता है (**चित्र-7** देखें)। स्पष्ट है, कि जितना बड़ा दूरदर्शक होगा, उतना अधिक प्रकाश वह बटोरेगा, यानी दूरदर्शक प्रकाश को भरने वाली एक विराट बाल्टी की तरह काम करेंगे। आसानी से देखा जा सकता है कि जितना बड़ा दूरदर्शक होगा, उतना ही अधिक प्रकाश वह बटोरेगा, और उतना ही अधिक संवेदनशील होगा। जो बात इतनी स्पष्ट नहीं है वह यह कि बड़े दूरदर्शकों का रैजोल्यूशन भी बेहतर होता है। यह विवर्तन (diffraction) के माध्यम से होता है (सभी प्रकार की तरंगों में देखा गया), जो किसी निर्धारित तरंगदैर्ध्य पर दूरदर्शक के रैजोल्यूशन को उसके दर्पण के आकार के बढ़ने के साथ-साथ बेहतर करता जाता है। इसी प्रकार, परावर्तक के किसी निर्धारित आकार के लिए, तरंगदैर्ध्य के घटने के साथ रैजोल्यूशन बेहतर होता जाता है (इससे मिलता-जुलता एक तथ्य जिससे पाठक ज़्यादा परिचित होंगे, वह यह कि ब्लू रे डीवीडी जो अपेक्षाकृत छोटी तरंगदैर्ध्य वाले नीले प्रकाश के साथ काम करती हैं, वे समान ज्यामितीय क्षेत्रफल में सामान्य डीवीडी की तुलना में कहीं अधिक जानकारी संग्रह कर सकती हैं)।

दृश्य प्रकाश की तरंगदैर्ध्य उन रेडियो तरंगों से कोई करोड़ों गुना छोटी होती है जिनके प्रति जीएमआरटी संवेदनशील है। कुछ सेंटीमीटर आकार के प्रकाशीय दूरदर्शक के रैजोल्यूशन जितने ही रैजोल्यूशन वाला रेडियो दूरदर्शक बनाने के लिए तो उसका आकार लम्बाई में दसियों किलोमीटर होना पड़ेगा - यह तो एक विकट चुनौती है! हम ऐसा दूरदर्शक कैसे बनाएँ जिसका रैजोल्यूशन दसियों किलोमीटर आकार वाले दर्पण के जैसा हो?

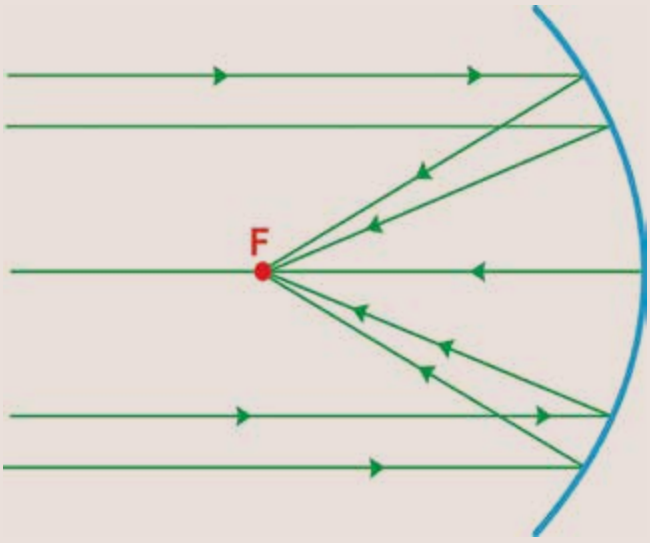

चित्र-7 : परवलयिक दर्पण पर गिरती प्रकाश की किरणें फोकस पर जाकर इकट्ठा हो जाती हैं। परवलयिक दर्पण प्रकाश की बाल्टियों के रूप में काम करते हैं। वे अपनी सतह पर गिरने वाली तमाम ऊर्जा का संग्रह करके उसे अपने केन्द्र बिन्दु (फोकल पॉइंट) पर इकट्ठा कर देते हैं। स्पष्ट है, कि बड़े दूरदर्शक ज़्यादा प्रकाश एकत्र करेंगे, या वे ज़्यादा संवेदनशील होंगे, ज़्यादा धुँधली वस्तुओं को भी खोज पाएँगे। और यह पाया जाता है कि बड़े दूरदर्शकों का रैजोल्यूशन भी बेहतर होता है, या स्रोत की बारीक़ जानकारियों को पकड़ पाने की उनकी क्षमता बेहतर होती है।
Credits: S. Meshra, NCRA-TIFR. License: CC-BY-NC.

ज़रा कुछ समय रुककर, पहले हम यह समझ लें कि दरअसल दर्पण उस पर गिरने वाले प्रकाश का क्या

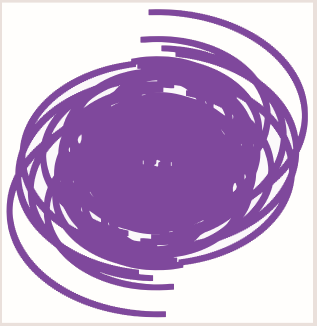

चित्र-8 : किसी स्रोत का उदय से अस्त होने तक प्रेक्षण करते समय जीएमआरटी के ऐंटीना द्वारा अपने समूह के केन्द्रीय भाग में खींचे गए मार्ग। जैसा कि इस चित्र से देखा जा सकता है, थोड़े-से ऐंटीना के साथ भी, पृथ्वी के घूर्णन से उस 'दर्पण' का काफ़ी अच्छा दायरा बन जाता है जिसके समन्वय की कोशिश की जा रही है।

इस वर्णन में जिस एक मुद्दे की अनदेखी की गई है, वह यह है कि किस तरह हम छोटे दर्पणों के संकेतों को 'साथ मिलाते' हैं कि हमें आकाश को बारीक़ी से देखने वाले एक बड़े दर्पण का संकेत प्राप्त हो जाता है। दरअसल, यह एक बेहद विस्तृत तकनीकी विषय है, और इस पर चर्चा करने से हम अपने विषय से बहुत आगे चले जाएँगे। लेकिन, एक बात जिसे स्पष्ट किया जाना शायद ज़रूरी है वह यह कि इस प्रक्रिया में बहुत परिष्कृत डिजिटल इलैक्ट्रॉनिक्स और सॉफ्टवेयर अल्गोरिद्म (कलन) का प्रयोग किया जाता है - रेडियो खगोलविज्ञानी उनके दूरदर्शकों में से निकलने वाले संकेतों को हैडफोन लगाकर नहीं सुनते!

Credits: Jayaram N Chengalur.
License: CC-BY-NC.

करता है। जैसा कि **चित्र-7** में देखा जा सकता है, पूरा परावर्तित प्रकाश फोकस पर संकेन्द्रित रहता है। यही प्रभाव हम छोटे-छोटे दर्पणों का संग्रह बनाकर भी ला सकते हैं। उनमें से प्रत्येक के फोकस पर संकेन्द्रित विकिरण को समेटकर, और इन सारे संकेतों को एक साथ मिलाकर ऐसा किया जा सकता है। यह संयुक्त संकेत वैसा ही होगा जैसे किसी विराट दर्पण (ऐसा दर्पण जिसका आकार छोटे दर्पणों के बीच के सबसे बड़े विभाजन के बराबर हो) से मिला संकेत। बस अन्तर यही होगा कि यह दर्पण पूर्ण नहीं होगा, इसमें बड़े-बड़े छिद्र होंगे।

ऐसा इसलिए क्योंकि प्रकाश का संग्रह सिर्फ़ छोटे दर्पणों के दायरे में आने वाले क्षेत्रों से ही किया जाता है, और बीच के क्षेत्रों (यानी 'छिद्रों') पर पड़ने वाला प्रकाश खो जाता है। इसलिए, छोटे दर्पणों के संग्रह से मिलने वाले संकेतों को उपयुक्त रूप से साथ मिलाकर बनाए गए दूरदर्शक का रैजोल्यूशन ऐसे दर्पण के रैजोल्यूशन जितना होगा जिसका आकार दर्पणों के बीच के सबसे बड़े विभाजन के सदृश हो, लेकिन उसकी संवेदनशीलता ऐसे दर्पण के सदृश होगी जिसका क्षेत्रफल छोटे दर्पणों के क्षेत्रफलों के योग के बराबर हो।

अगर हम एक क़दम और आगे बढ़ें, तो हम यह देख सकते हैं कि किसी रेडियो स्रोत पर उसके उदय होने से लेकर अस्त होने तक नज़र रखने पर क्या होता है। इस सुदूरवर्ती स्रोत के दृष्टिकोण से हो यह रहा है कि पृथ्वी के घूर्णन के कारण ये छोटे दर्पण भी अन्तरिक्ष में घूम रहे हैं। समान रूप से, जब हम किसी स्रोत का उसके उदय से अस्त होने तक प्रेक्षण करते हैं तो पाते हैं कि ये छोटे दर्पण, उस काल्पनिक विशाल दर्पण के बड़े दायरों को समाविष्ट कर लेते हैं। परिणामस्वरूप जो दर्पण बनता है (यानी, जिस अपर्चर को संयोजित किया गया है) वह विभिन्न छोटे-छोटे दर्पणों से निकले स्नैपशॉट से बने दर्पण की तुलना में एक परिपूर्ण दर्पण के काफ़ी ज़्यादा नज़दीक होता है (**चित्र-8** देखें)। इसे ही पृथ्वी के घूर्णन का द्वारक संयोजन कहा जाता है, और यही वह तकनीक है जिसे जीएमआरटी और ऐसे ही अन्य दूरदर्शक आकाश की हाई रैजोल्यूशन तस्वीरें लेने के लिए अपनाते हैं।

ओआरटी को कई महत्त्वपूर्ण अध्ययनों के लिए उपयोग किया गया है, जैसे चन्द्रमा द्वारा होने वाले ग्रहणों का उपयोग करके रेडियो स्रोतों के आकार का पता लगाना, हमारी आकाशगंगा में आयनीकृत गैस से निकलने वाले वर्णक्रम रेखा वाले उत्सर्जनों का प्रेक्षण, और सूर्य द्वारा उत्सर्जित शक्तिशाली प्लाज्मा के प्रसार की माप आदि। प्लाज्मा के ये प्रेक्षण (जिन्हें सामान्य रूप से 'अन्तरिक्ष के मौसम' का अध्ययन कहते हैं) ऐसे युग में लगातार और महत्त्वपूर्ण होते जा रहे हैं जहाँ हमारा अधिकांश संचार उपग्रहों पर निर्भर करता है, और शक्तिशाली सौर घटनाओं द्वारा इसे बुरी तरह से प्रभावित किया जा सकता है। 30 वर्ष से भी ज़्यादा पुराना होने के बावजूद, आज भी ओआरटी, जिन आवृत्तियों पर यह काम करता है, उन पर काम करने वाले दुनिया के सबसे संवेदनशील दूरदर्शकों में से यह एक है। इसके अलावा, ओआरटी को बनाने, उसका रखरखाव करने, और उसका इस्तेमाल करने के अनुभव ने भारत में एक स्वस्थ रेडियो खगोलीय समुदाय के विकास में मदद की है।

1990 का दशक और एक 'वाकई में' बड़ा दूरदर्शक

1980 के दशक के मध्य में, यह बात स्पष्ट होने लगी थी, कि हालाँकि ओआरटी अभी भी एक संवेदनशील दूरदर्शक था, लेकिन यह अमरीका की वेरी लार्ज ऐरे (वीएलए) और ऑस्ट्रेलिया स्थित ऑस्ट्रेलिया टेलिस्कोप कॉम्पैक्ट ऐरे (एटीसीए) जैसे रेडियो दूरदर्शकों की अगली पीढ़ी की भाँति बहुमुखी नहीं था। ऊटी स्थित टीआईएफआर के रेडियो खगोलशास्त्र समूह, जिसका नेतृत्व भी प्रोफ़ेसर गोविन्द स्वरूप कर रहे थे, ने कहीं बड़े रेडियो दूरदर्शक की संरचना पर काम करना शुरू किया जिसका नाम वृहत मीटरवेव रेडियो दूरदर्शक (या जीएमआरटी) रखा गया।

बड़े दूरदर्शकों को बनाना बहुत महँगा होता है, और परिणामस्वरूप, दुनिया के बहुत कम देश इन्हें बनाने में निवेश करते हैं। प्रकाशीय दूरदर्शक के सामने यह समस्या भी होती है कि उसे एक ऐसा स्थान चाहिए होता है जहाँ अँधेरा हो, जो काफ़ी ऊँचाई पर हो, जितना सम्भव हो बारिश से मुक्त रहे। पृथ्वी पर ऐसे बहुत कम स्थान हैं जो इन कसौटियों को पूरा करते हैं, इनके अपवाद हैं हवाई में मौना किआ, और चिली के ऊँचे पर्वत। परिणामस्वरूप, दुनिया के कई देश अन्त में इन स्थानों पर प्रकाशीय दूरदर्शक बनाते हैं।

दूसरी तरफ़, रेडियो दूरदर्शकों (ख़ासतौर से वे जो लम्बी तरंगदैर्ध्यों पर काम करते हैं) का ऐसी ऊँचाई वाले स्थानों पर स्थित होना ज़रूरी नहीं है, और इसलिए इन्हें दुनिया के कई और हिस्सों में लगाया जा सकता है। रेडियो दूरदर्शक के लिए किसी स्थान को चुनने की मुख्य कसौटी यह सुनिश्चित करना है कि वह मानव द्वारा निर्मित व्यवधानों (जैसे मोबाइल फ़ोन व टॉवर, टीवी और रेडियो स्टेशन, आदि) से सुरक्षित रहे। टीआईएफआर समूह ने भारत में ऐसे कई स्थानों का निर्धारण किया, जिनमें से एक पुणे से क़रीब 80 किलोमीटर दूर, खोडाड गाँव के पास स्थित है। यह जगह बड़े शहर पुणे के पास होने से एक बड़े दूरदर्शक को बनाने के लिए ज़रूरी निर्माण सामग्री आसानी से उपलब्ध हो सकती थी। साथ ही, प्रस्तावित स्थान इतना दूर भी था (और चारों ओर से घिरी हुई पहाड़ियों द्वारा संरक्षित भी) कि यह पुणे और मुम्बई में उद्योग, टीवी और रेडियो द्वारा पैदा किए जाने वाले व्यवधान से भी सुरक्षित था। लेकिन इस दूरदर्शक को बनाने का ख़र्चा अभी भी एक चुनौती बना हुआ था।

मितव्ययी इंजीनियरिंग और 'स्मार्ट' डिज़ाइन

आखिरकार प्रोफ़ेसर गोविन्द स्वरूप ने एक नूतन डिज़ाइन प्रस्ताव सामने रखकर ख़र्च

की समस्या को भी हल कर दिया। उन्होंने पारम्परिक रूप से रेडियो खगोलविज्ञान में उपयोग में आते रहे ऐंटीना से कहीं सस्ते प्रकार का ऐंटीना बनाने का प्रस्ताव रखा।

अधिकांश रेडियो दूरदर्शक, यहाँ तक कि पूर्व में उल्लेखित वीएलए और एटीसीए जैसे नए दूरदर्शक भी ऐसी छोटी रेडियो तरंगदैर्ध्यों पर काम करते हैं जिन्हें महँगी ठोस परावर्ती सतहों की आवश्यकता होती है। लेकिन, चूँकि भारतीय रेडियो खगोलशास्त्र समूह मुख्य रूप से लम्बी रेडियो आवृत्तियों पर ही काम करता रहा है, इसलिए यह उचित ही था कि एक बड़ी, लम्बी तरंगदैर्ध्य वाला रेडियो दूरदर्शक बनाया जाए जो अपना एक अलग वैश्विक स्थान बनाए। प्रोफ़ेसर स्वरूप के डिज़ाइन के प्रस्ताव में ठीक इसी भेद का लाभ उठाया गया। उनके इस डिज़ाइन का आधार यह तथ्य था कि किसी दर्पण की वे त्रुटियाँ जो उसके कार्य करने की तरंगदैर्ध्य से छोटी होती हैं, उनका उस दर्पण के प्रदर्शन पर न के बराबर असर पड़ता है। उदाहरण के लिए, ऊबड़-खाबड़ खड़ी चट्टानों में आवाज़ (जिसकी तरंगदैर्ध्य काफ़ी लम्बी होती है) काफ़ी अच्छे से गूँजती (प्रतिध्वनित होती) है, लेकिन यही चट्टानें प्रकाश (जिसकी तरंगदैर्ध्य छोटी होती है) का तनिक भी परावर्तन नहीं कर पातीं। इसलिए, लम्बी तरंगदैर्ध्यों वाले रेडियो दूरदर्शकों को बहुत बारीक़ी से चमकाई गई परावर्ती सतहों की आवश्यकता नहीं थी जिनकी ज़रूरत छोटी तरंगदैर्ध्यों में पड़ती।

रेडियो दूरदर्शक में परावर्ती सतह की गुणवत्ता का उसकी लागत पर गुणात्मक प्रभाव पड़ता है। चिकनी सतहों के लिए ऐसी सामग्री की आवश्यकता होती है जिसे बारीक़ी से आकार दिया जा सकता है और चमकाया जा सकता है, जिसका मतलब कि ये सतहें सामान्यतया ठोस होती हैं। इन सतहों को ठण्डे देशों में प्राथमिकता दी जाती है, जहाँ इन सतहों का ऐसा होना इसलिए ज़रूरी है ताकि ये ठण्ड के मौसम में बर्फ़ के भारी बोझ को झेल सकें। परिणामस्वरूप परावर्ती दूरदर्शक को सहारा देने के लिए शक्तिशाली सहायक ढाँचों की ज़रूरत पड़ती है, और इसलिए इसे बनाने की लागत बहुत बढ़ जाती है। निम्न आवृत्तियों पर और पुणे जैसे अर्ध-कटिबन्धीय स्थान पर ये सभी स्थितियाँ अप्रासंगिक हो जाती हैं। प्रोफ़ेसर स्वरूप ने ऐसा डिज़ाइन ईजाद किया, जहाँ परावर्ती सतह एक साधारण तार की जाली थी, फिर हजारों तारों को एक हल्के सहायक ढाँचे से जोड़कर एक परवलयिक (पैराबॉलिक) ढाँचा बनाया गया, और हर तार को बिलकुल सही मात्रा में ताना गया ताकि पूरी जाली वांछित आकार ले सके। उन्होंने इस नए डिज़ाइन को स्मार्ट (Stretched Mesh Attached to Rope Trusses) नाम दिया। स्मार्ट डिज़ाइन ने इस पूरी संरचना को बनाने की लागत में ज़बरदस्त कमी कर दी, जिससे अपेक्षाकृत कम पैसों में एक बड़ा दूरदर्शक बनाने के बारे में सोचा जा सका।

जीएमआरटी, टीआईएफआर के रेडियो खगोलशास्त्र समूह के लिए आगे की ओर उठाया गया एक निर्भीक क़दम था, और इसमें रेडियो खगोलशास्त्र से जुड़े शोध में भारत को एक अगुआ देश के रूप में स्थापित करने का वादा भी था। नब्बे के पूरे दशक के दौरान बने जीएमआरटी को, 2001 में श्री रतन टाटा ने राष्ट्र को समर्पित कर दिया। इस दूरदर्शक का डिज़ाइन और इसका निर्माण पूरी तरह से देशी हाथों द्वारा हुआ है। इसके अधिकांश तंत्रों को तो टीआईएफआर के राष्ट्रीय रेडियो खगोल भौतिक केन्द्र (जिसे ख़ासतौर पर जीएमआरटी के सन्दर्भ में ही स्थापित किया गया था) में ही तैयार किया गया और कुछ उप-प्रणालियों को बेंगलूरु के रमन अनुसंधान संस्थान (आरआरआई) में डिज़ाइन और निर्मित किया गया।

इस दूरदर्शक में 30 अलग-अलग ऐंटीना हैं - इनमें से हर एक ऐंटीना 45 मीटर व्यास वाली एक परवलयिक छतरी (parabolic dish) है। जीएमआरटी की 30 छतरियाँ 25 किलोमीटर व्यास वाले क्षेत्रफल में फैली हुई हैं। ये सभी ऐंटीना ऑप्टिकल फाइबर द्वारा एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं, और सामंजस्यपूर्ण ढंग से काम करते हुए, सामने की ओर 25 किलोमीटर के रैजोल्यूशन वाले दूरदर्शक जैसे रैजोल्यूशन की तस्वीरें पैदा करते हैं (**चित्र-6** देखें)। इन ऐंटीना से निकलने वाले संकेतों को जिस तकनीक के द्वारा जोड़ा जाता है, उसे सामान्य रूप से व्यतिकरणमिति (interferometers) या द्वारक संयोजन (Aperture Synthesis) कहा जाता है (**बॉक्स-7** देखें)। जीएमआरटी दुनिया के सबसे विशाल क्रियाशील इंटरफैरोमेट्री समूहों में से एक है, और भारत उन चन्द देशों में से एक है जिनमें ऐसी सुविधा क्रियाशील है। वीएलए और एटीसीए (जो क्रमशः अमरीका और ऑस्ट्रेलिया द्वारा संचालित होते हैं) जैसी इस तरह की अन्य सुविधाओं की तरह यहाँ भी जीएमआरटी में प्रेक्षण समय का आवंटन प्रस्तावक की राष्ट्रीयता से स्वतंत्र होता है। सारे प्रस्ताव अन्तर्राष्ट्रीय समकक्ष समीक्षा की प्रक्रिया से गुज़रते हैं, और सबसे ऊँचे दर्जे वाले प्रस्तावों को समय आवंटित किया जाता है। जीएमआरटी हर साल क़रीब सौ अलग-अलग परियोजनाओं पर काम करता है और विभिन्न तरह की खगोलीय वस्तुओं का प्रेक्षण करता है जिनमें हमारे सौर मण्डल के ग्रहों से लेकर ब्रह्माण्ड के अत्यन्त दूरदराज़ के क्षेत्रों से विसरित गैस से निकलने वाले उत्सर्जन तक शामिल हैं। पिछले कई सालों में जीएमआरटी में प्रेक्षण के कुल समय का क़रीब आधा समय भारत के खगोलज्ञों को आवंटित किया गया है, जबकि बाक़ी आधा दुनिया भर के खगोलज्ञों को आवंटित किया जाता है।

निष्कर्ष

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद उपयोग में आने वाले पहले उपकरणों से लगाकर अब तक रेडियो दूरदर्शकों ने बहुत लम्बा सफ़र तय

किया है। जीएमआरटी सहित आज के सबसे संवेदनशील दूरदर्शकों की संवेदनशीलता पहली पीढ़ी के दूरदर्शकों की तुलना में कहीं अधिक है। आधुनिक दूरदर्शक बहुमुखी होते हैं। उदाहरण के लिए, जीएमआरटी का उपयोग कई तरह के उत्सर्जनों के बारे में खोज करने के लिए किया गया है - 1200 करोड़ साल पहले (यानी सबसे पहले तारों और ब्लैक होल्स द्वारा पूरी अन्तरगैलेक्सीय गैस को एक गर्म प्लाज्मा में बदल देने के बिलकुल पहले) पूरे ब्रह्माण्ड को भरने वाली हाइड्रोजन के उत्सर्जनों से लगाकर सौर मण्डल के अन्य ग्रहों से होने वाले उत्सर्जनों तक। अभी तक, रेडियो खगोलविज्ञानियों द्वारा की गई खोजों के लिए तीन नोबेल पुरस्कार दिए जा चुके हैं। हालाँकि रेडियो खगोलविज्ञान का समुदाय छोटा है, लेकिन यह स्पष्ट है कि समाज पर इसका असंगत प्रभाव रहा है, और ऐसा सिर्फ़ फ़िल्मों और उपन्यासों के कारण नहीं है। एक छोटा समुदाय होने के कारण इन लोगों का रवैया भी सहयोगपूर्ण और भविष्यवादी रहा है। उदाहरण के लिए, रेडियो खगोलविज्ञानियों का समुदाय, ऐसे कुछ थोड़े-से शोध समुदायों में से एक है जो अपने दूरदर्शकों का निशुल्क इस्तेमाल करने देता है। जैसा कि पहले भी वर्णन किया गया है, जीएमआरटी का उपयोग दुनिया का हर वह व्यक्ति कर सकता है जिसके प्रस्ताव को बेहतर पाया जाता है (विशेषज्ञों के एक अन्तर्राष्ट्रीय पैनल द्वारा)। इसी प्रकार, भारतीय खगोलविज्ञानी अन्य देशों द्वारा बनाए गए रेडियो दूरदर्शकों का उपयोग कर सकते हैं। बढ़ती संकीर्णता और पृथकतावाद के परिवेश में, रेडियो खगोलविज्ञानी न सिर्फ़ ब्रह्माण्ड में अपनी स्थिति को देखने का एक वृहत दृष्टिकोण प्रदान करते हैं, बल्कि मिलकर काम करने के फ़ायदों का एक व्यावहारिक उदाहरण भी प्रस्तुत करते हैं।

Note: Credits for the image used in the background of the article title: One of the antennae of GMRT telescope, Pune, India. Photographer: Rohit Gowaika. URL: https://www.flickr.com/photos/18419987@N00/3119728744. License: CC-BY-SA.

Further Reading and useful links:

1. A brief introduction to radio astronomy and SETI can be found at: http://www.bigear.org/guide.htm.
2. The Australia Telescope National Facility has some interesting material on radio astronomy and radio telescopes: http://www.atnf.csiro.au/outreach/education/everyone/radio-astronomy/index.html.
3. More about the GMRT at Pune can be found at: http://www.ncra.tifr.res.in/ncra/.
4. A very readable account of the discovery of pulsars can be found at: http://www-outreach.phy.cam.ac.uk/camphy/pulsars/pulsars_index.htm.
5. More about galactic interactions and mergers can be found in the article titled – Interactions in Outer Space, by Anand Narayan, **i wonder...**, Issue 2, June 2016, Page 4.
6. A popular account of radio astronomy can be found in the book, The Invisible Universe, by Gerrit Verschuur, Springer Publishing.

जयराम एन. चेंगालूर एक रेडियो खगोलविज्ञानी हैं और टाटा मूलभूत अनुसंधान संस्थान, मुम्बई स्थित राष्ट्रीय रेडियो खगोलभौतिकी केन्द्र में काम करते हैं। वे शिक्षित तो इंजीनियर के रूप में हुए, और अकस्मात इस क्षेत्र में आ गए, और फिर इसी में बने रहे क्योंकि यह उन्हें मज़ेदार-सा लगा।
अनुवाद : भरत त्रिपाठी

विज्ञान के शिक्षकों को सामाजिक न्याय का ध्यान क्यों रखना चाहिए

डे ग्रीनबर्ग

यह लेख इस बात की पड़ताल करता है, कि विज्ञान की शिक्षा में सामाजिक न्याय के शिक्षण की क्या ज़रूरत है, और इससे क्या हासिल हो सकता है, ख़ासतौर से उन विद्यार्थियों के लिए जो उन समुदायों से आते हैं जिन्हें विज्ञान की शिक्षा और उससे जुड़े पेशों से दूर रखा गया है। लेख में सामाजिक न्याय की ओर उन्मुख विज्ञान शिक्षण के एक उदाहरण से मिली सीखों का भी उल्लेख किया गया है।

"शिक्षकों और विद्यार्थियों को जो नई भूमिकाएँ निभाना होंगी उसके लिए उन्हें तैयार करना ज़रूरी है..। स्कूली शिक्षा और ख़ासतौर से विज्ञान की शिक्षा के बारे में हमारा नज़रिया सहभागिता-आधारित लोकतंत्र के साथ ज़्यादा नज़दीकी जुड़ाव रखता है जिसमें नागरिक एक-दूसरे के साथ सक्रिय रूप से सहयोग करते हैं... आने वाली पीढ़ियों के लिए।"

– माइक म्युलर

"मैं ऐसा सोचा करती थी कि स्कूल जाने का कोई बहुत मतलब नहीं होता, लेकिन इस कार्यक्रम ने मुझे यह एहसास दिलाया कि मैं भी स्कूल का हिस्सा थी, कि स्कूल में मेरे होने से भी फ़र्क़ पड़ता था, इसलिए मुझे स्कूल जाना ही पड़ा क्योंकि इससे मुझे तो मदद मिली है, स्कूल को भी बहुत मदद मिली।"

– फातिमा, प्राथमिक स्कूल की एक विद्यार्थी जिसने स्कूल में "क्रियात्मक शोध" (एक्शन रिसर्च) कार्यक्रम में भाग लिया था।

इस वक़्त जब हमारी दुनिया सामाजिक, राजनैतिक, पारिस्थितिक, चिकित्सकीय, डिजिटल और आर्थिक जैसे कई आयामों में लगातार बदल रही है, तब यह और ज़रूरी होता जा रहा है कि विज्ञान के शिक्षक विद्यार्थियों को ऐसे कौशल, जानकारियाँ और मौक़े दें जिनके माध्यम से, उन्होंने जो कुछ भी सीखा हो उसका अपने आस-पास की दुनिया में उपयोग कर सकें। इन शिक्षकों को कोशिश करना चाहिए कि वे अपने विद्यार्थियों को ऐसी क्षमता और साधनों से लैस कर सकें जिनकी मदद से वे वर्तमान और भविष्य की चुनौतियों का सामना आत्मविश्वास के साथ कर सकें। लेकिन अक्सर यह होता है कि शिक्षक यह मानकर चलते हैं कि उनके विद्यार्थी छोटी उम्र में कोई बड़ी उपलब्धियाँ हासिल नहीं कर सकते। ख़ासतौर से उनकी यह धारणा उन विद्यार्थियों के बारे में अधिक होती है जो ऐसे समुदायों से आते हैं जिन्हें मुख्यधारा की विज्ञान की शिक्षा और उससे जुड़े पेशों से दूर रखा गया है (यानी वे विद्यार्थी जो बाहर से आकर बसे समुदायों और जातीय अल्पसंख्यक समुदायों के सदस्य हैं, और वे

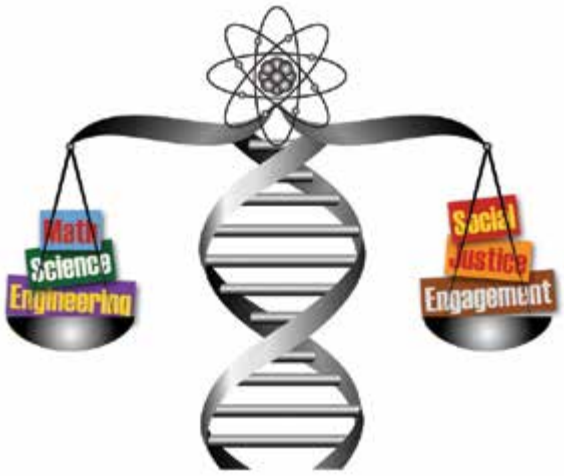

चित्र-1 : विज्ञान और सामाजिक न्याय - सन्तुलन की तलाश!
Credits: Illustration by Punya Mishra, 2016. License: CC-BY-NC.

विद्यार्थी जो अल्प संसाधनों वाले स्कूलों और इलाक़ों से आते हैं)।

सामाजिक न्याय के प्रति उन्मुख विज्ञान शिक्षा क्या है?

सामाजिक न्याय के प्रति उन्मुख विज्ञान की शिक्षा के उद्देश्य और उसके व्यावहारिक रूप में, विज्ञान के ज्ञान और कौशलों का इस्तेमाल दुनिया को सभी के लिए ज़्यादा निष्पक्ष और न्यायसंगत स्थान बनाने के लिए करना, शामिल है। सामाजिक न्याय की सोच को कक्षा की अपनी गतिविधियों के साथ जोड़ने पर शिक्षकों को वे उपकरण मिल जाते हैं जिनके द्वारा वे इस लक्ष्य को हासिल कर सकते हैं।

विज्ञान के वे शिक्षक जो सामाजिक न्याय के लिए काम करते हैं वे अपनी कक्षा की गतिविधियों का इस्तेमाल अपने विद्यार्थियों को सामाजिक, राजनैतिक, और शैक्षिक रूप से सशक्त बनाने के उपकरण के रूप में करते हैं। विद्यार्थी सत्ता की मौजूदा व्यवस्थाओं पर सवाल उठाना सीखते हैं - ऐसी व्यवस्थाएँ जो विद्यार्थियों और उनके समुदायों को दबाती हैं। विज्ञान के शिक्षक अपने विद्यार्थियों को सशक्त व समर्थ बनाने के लिए अपनी विज्ञान की कक्षा को ऐसा स्थान बनाते हैं जहाँ विद्यार्थी अपने कौशलों और ज्ञान को ऐसे तरीक़ों से विकसित और इस्तेमाल कर सकते हैं जो उन तरीक़ों को प्रतिबिम्बित करते हों जिनकी माँग वास्तविक दुनिया उनसे पहले से करती आ रही है (और आगे भी करती रहेगी) और/या उनके ये कौशल और ज्ञान इस वास्तविक दुनिया को मुँहतोड़ जवाब देने के काम आ सकते हैं। ये शिक्षक अपने विद्यार्थियों को दिखाते हैं कि सामाजिक-वैज्ञानिक प्रश्नों और चुनौतियों से कैसे निपटना है - ये ऐसे प्रश्न हैं जिनमें विज्ञान के ज्ञान और उससे जुड़ी गतिविधियाँ शामिल होती हैं। शिक्षक उन्हें यह भी दिखाते हैं कि ऐसी समस्याओं से जुड़े सामाजिक कारकों पर किस तरह आलोचनात्मक सवाल किए जाएँ या उनकी पड़ताल की जाए। वे इतनी जगह बना देते हैं जो उनके विद्यार्थियों को दूसरों के साथ मिलकर अपने लिए और दुनिया के लिए बदलाव लाने की प्रेरणा देती हैं। अन्ततः ऐसे विद्यार्थी सकारात्मक बदलाव लाने, और अधिक न्यायपूर्ण समाज बनाने के लिए दूसरों के साथ मिलकर विज्ञान का इस्तेमाल एक उपकरण के रूप में करना सीख जाते हैं। इससे विज्ञान सीखने में भी लाभ मिल सकता है क्योंकि एक वर्ग के रूप में कोई ख़ास सकारात्मक बदलाव लाने की साझी आकांक्षा विद्यार्थियों को विज्ञान सीखने के सम्बन्धित लक्ष्यों को हासिल करने के लिए प्रेरित कर सकती है। फिर विद्यार्थी ज्ञान की अन्तर्वस्तु के अपने स्वामित्व (सिर्फ़ उसका अवशोषण नहीं) को सक्रिय करके ख़ुद कोई क़दम उठा सकते हैं और/या सत्ताधारी और विशेष अधिकारों वाले अन्य लोगों को सकारात्मक बदलाव लाने के लिए राज़ी कर सकते हैं। उदाहरण के लिए, वे विद्यार्थी जो बाढ़ के क्षेत्र में रहते हैं, विद्यार्थियों द्वारा आयोजित एक सार्वजनिक संवाद अभियान को इस बारे में जानकारी देकर, कि वे लोग स्थानीय लोगों को ज़्यादा मज़बूत बाढ़ नियंत्रण संरचनाएँ बनाने के लिए किस प्रकार प्रशिक्षण दे सकते हैं, भौतिकी सीखने के लक्ष्यों की ओर बढ़ सकते हैं। इस उदाहरण में हम देखते हैं कि, जब विद्यार्थियों को यह समझ में आता है कि वे भौतिकी की प्रासंगिक अन्तर्वस्तु (यानी ऊर्जा, बल, चाल, भार, इत्यादि) का उपयोग, अपने परिवारों और दोस्तों को जागरूक बनाने में, और उन्हें सुरक्षित रखने में, कर सकते हैं तो यह अन्तर्वस्तु उनके लिए और ज़्यादा सीधे तौर पर महत्त्वपूर्ण और सार्थक हो जाती है।

शोध अध्ययन क्या कहते हैं?

विज्ञान को उसके विद्यार्थियों के लिए महत्त्वपूर्ण बनाने हेतु विज्ञान के शिक्षक क्या कर सकते हैं? किस तरह वे विद्यार्थियों को ऐसे साधन उपलब्ध करा सकते हैं ताकि उनके विद्यार्थी विज्ञान के साथ समझ-बूझ से भरे और सार्थक काम करने वाले अगुआ बन सकें।

शैक्षिक शोधकर्ता ऐलेक्ज़ेण्ड्रा शिण्डेल डिमिक ने हाईस्कूल में पर्यावरणविज्ञान

चित्र-2 : कक्षा के सन्दर्भ में सहभागिता-आधारित प्रयास।
Credits: Illustration by Punya Mishra, 2016.
License: CC-BY-NC.

के शिक्षण के एक नमूने का एक अध्ययन किया जिसे, बृहद सामाजिक न्याय के लिए सामुदायिक अभियान, के लक्ष्य के इर्द-गिर्द आयोजित किया गया था। उनका अध्ययन विज्ञान के शिक्षक मिस्टर कार्सन पर केन्द्रित था जिन्होंने अपने हाई स्कूल के पर्यावरणविज्ञान पाठ्यक्रम में सामाजिक न्याय के कार्यों को शामिल किया था। मिस्टर कार्सन ने अपने विद्यार्थियों के साथ स्थानीय पर्यावरण की समस्याओं पर चर्चा की थी, और फिर उन्हें मौक़ा दिया कि वे इन समस्याओं पर काम करने के लिए अपने को तीन अलग-अलग क्रियात्मक समूहों में बाँट लें। इन विद्यार्थियों ने अपने स्थानीय जलमार्ग में प्रदूषकों के बारे में जाना और प्रयोगशालाओं में पानी के रसायनविज्ञान से सम्बन्धित प्रयोग किए। फिर उन्होंने पानी से जुड़े विज्ञान के विषयों पर लोगों को जागरूक करने के लिए पोस्टर भी बनाए। अन्त में, उन्होंने अपने स्थानीय तटीय नगर के पर्यावरण से जुड़ी समस्याओं को सुलझाने के लिए सामूहिक कार्य परियोजनाएँ पूरी कीं।

Recommended Articles to Learn More

1. Birmingham, D., & Calabrese Barton, A. (2014). Putting on a green carnival: Youth taking educated action on socioscientific issues. Journal of Research in Science Teaching, 51(3), 286–314. http://doi.org/10.1002/tea.21127
2. Vakil, S. (2014). A Critical Pedagogy Approach for Engaging Urban Youth in Mobile App Development in an After-School Program. Equity & Excellence in Education, 47(1), 31–45. http://doi.org/10.1080/10665684.2014.866869.

विद्यार्थियों द्वारा किए गए कार्यों पर, और उनमें से कुछ (कक्षा के कुल 24 विद्यार्थियों में से 9) के साथ की गई बातचीत के आधार पर ऐलेक्ज़ेण्ड्रा को यह समझ में आया कि जब उनके सीखने की दिशा सामाजिक न्याय की ओर उन्मुख होती है तो उन्हें अपने भीतर अधिक सामर्थ्य का एहसास होता है। मिस्टर कार्सन समझाते हैं :

...(विद्यार्थी) उन्हें प्रभावित करने वाली किसी परिस्थिति को बदलने में ख़ुद को समर्थ महसूस करते हैं, और इस बदलाव को लाने के लिए वे दूसरों पर निर्भर नहीं कर रहे हैं। परिस्थिति से प्रभावित लोग भी वे हैं, और बदलाव लाने की कोशिश भी वे ही कर रहे हैं।

लेकिन यह बात ध्यान में रखना होगी कि मिस्टर कार्सन के सब-के-सब विद्यार्थी यह नहीं मानते थे कि यह परियोजना पूरी तरह से सफल रही थी। सामाजिक न्याय की ओर उन्मुख विज्ञान की शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जो विद्यार्थियों को सामाजिक, राजनैतिक और शैक्षिक रूप से समर्थ बनाए। ऐलेक्ज़ेण्ड्रा के अध्ययन ने दिखाया कि विद्यार्थियों ने इन तीन आयामों में से एक के नदारद होने को महसूस किया, और विज्ञान से जुड़े कार्य करके परिवर्तन लाने वालों के रूप में सफल होने के लिए जिस सहयोग की वे अपेक्षा करते थे उसके न मिलने पर उन्होंने अपनी निराशा भी ज़ाहिर की। एक और बात ध्यान में रखना होगी कि भले ही मिस्टर कार्सन पर्यावरणविज्ञान पढ़ाते थे, लेकिन **सामाजिक न्याय की ओर उन्मुख कार्यों को हर तरह की विज्ञान की कक्षाओं में समाहित किया जा सकता है।**

चित्र-3 : शान्ति का प्रतीक, जैतून की शाख मुँह में दबाए कबूतर। विज्ञान का प्रतिनिधित्व करने वाले चित्रों से बना कबूतर "सामाजिक न्याय" पर विकीपीडिया के पेज पर मौजूद सभी शब्दों से बने शब्दों के बादल के बग़ल से उड़ता हुआ।

Credits: Photograph and Illustration by Punya Mishra, 2016. License: CC-BY-NC.

शिक्षक किस भाँति सामाजिक न्याय की ओर उन्मुख विज्ञान शिक्षक बन सकते हैं?

विज्ञान की कक्षाओं में सामाजिक न्याय के विचारों को अमल में लाने के प्रयास की सफलताओं और असफलताओं के बारे में इस अध्ययन से हम क्या सीख सकते हैं? यहाँ उन तीन अवयवों की चर्चा की जा रही

है जिन्हें अपनाना, सामाजिक न्याय के लिए सफलतापूर्वक विज्ञान पढ़ाने हेतु महत्त्वपूर्ण प्रतीत होता है।

गाइड 1 : विद्यार्थियों में नेतृत्व और सहयोग को बढ़ावा देना (सामाजिक अवयव)

जब विद्यार्थियों ने बदलाव के लिए काम करने के बारे में अपने विचारों को सीमित करने के पक्ष में वोट डाले, उसके बाद मिस्टर कार्सन के कहने पर उन्होंने अपने को तीन अलग-अलग समूहों में बाँट लिया। लेकिन मिस्टर कार्सन ने इन लोगों को समूह द्वारा लिए जाने वाले निर्णयों के बारे में या फिर चर्चा के समय को लेकर न तो कोई विशेष नीतियाँ बताईं और न ही कोई दिशा-निर्देश दिए। परिणामस्वरूप समूह की गतिकी का असर व्यक्तिगत प्रयासों पर पड़ा, और उससे उनकी रफ़्तार और कार्यक्षमता भी प्रभावित हुई।

अमल में कैसे लाना है : विद्यार्थियों को छूट दें कि वे विषय के आधार पर ख़ुद अपने कार्य-समूह बनाएँ लेकिन समूह की गतिकी को सही दिशा देने के लिए उन्हें ज़रूरी साधन उपलब्ध कराएँ। उन्हें अवसर दें कि, वे समूह के ऐसे सामाजिक नियमों के सहयोगात्मक ढाँचे के तहत, जिन पर विद्यार्थी एक साथ सहमत हो सकें, मिलकर स्वस्थ ढंग से काम करने की तथा समझौता करने की भावना का विकास कर सकें। उन्हें मौक़ा दें कि वे मिलकर एक ऐसा सामाजिक अनुबन्ध बनाएँ जो यह तय करे कि समूहों में कैसे बर्ताव करना चाहिए और संघर्ष की स्थितियों को कैसे हल किया जा सकता है। अपने विद्यार्थियों को समर्थ बनाएँ कि वे साथ मिलकर अच्छे से कार्य कर सकें और इसके लिए उन्हें साझी अपेक्षाएँ, और ऐसे साधनों, को बनाने में मदद करें जिनके द्वारा वे स्वयं अपनी समस्याओं का समाधान कर सकें।

गाइड 2 : बदलाव के लिए कार्य करने हेतु विद्यार्थियों को तैयार करना (राजनैतिक अवयव)

विद्यार्थियों द्वारा समूह बना लिए जाने के बाद मिस्टर कार्सन ने खुद को कक्षा के क्रियाकलापों से अलग कर लिया। उनके विद्यार्थियों को वह सहयोग नहीं मिला जिसकी मदद से वे 'कार्य करने' को रोज़मर्रा की, व्यक्तिगत ज़िम्मेदारियों के सन्दर्भ में समझने से आगे बढ़कर उसे, बदलाव लाने के लिए ज़रूरी कहीं ज़्यादा बड़ी, ज़्यादा रूपान्तरकारी सक्रिय भागीदारी करने के सन्दर्भ में समझ पाते। परिणामस्वरूप, कुछ विद्यार्थियों ने तो विज्ञान को साथ लेकर काम करने की अपनी ही बृहद समझ बना ली, लेकिन अन्य विद्यार्थियों ने तो यह परियोजना बिना यह जाने ही ख़त्म कर दी कि विज्ञान के साथ सामाजिक न्याय को जोड़ने के लिए आगे और बड़े और जटिल काम कैसे किए जाएँ।

अमल में कैसे लाना है : विद्यार्थियों के आपसी क्रियाकलाप का सक्रिय हिस्सा बनें ताकि उनके और उनके समुदाय के लिए महत्त्वपूर्ण बदलाव किए जा सकें। एक व्यक्ति द्वारा उठाए जाने वाले क़दमों और सामूहिक प्रयासों के बीच के फ़र्क़ की चर्चा करें, और लोगों को दुःख-दर्द देने वाले, या पर्यावरण तंत्रों को नष्ट करने वाले सत्ता के ढाँचों पर आलोचनात्मक सवाल खड़े करने में विद्यार्थियों की मदद करें। 'समस्याओं के उन मौलिक कारणों' का पता लगाने में उनकी मदद करें जो अक्सर सामाजिक अन्याय से सम्बद्ध होते हैं लेकिन जिन्हें वैज्ञानिक खोजबीन के माध्यम से भी बेहतर ढंग से समझा जा सकता है। उदाहरण के लिए, विज्ञान के शिक्षक यह पूछने में अपने विद्यार्थियों का सहयोग कर सकते हैं कि, एक स्थानीय स्कूल की इमारत के ढाँचे में होने वाले संक्रमण का शिक्षा के ऊपर ख़र्च होने वाले बजट प्रस्तावों पर होने वाली राजनैतिक चर्चाओं से क्या नाता है? आनुवंशिकी का उपयोग किस तरह मौजूदा आबादियों को हाशिए पर डालने के लिए किया गया है? कोयला ऊर्जा के उपयोग और खनन का लाभ किसे मिलता है? कम्प्यूटर विज्ञान के प्रति महिलाओं के योगदान को कम्प्यूटिंग के इतिहास में किस तरह नज़रअन्दाज किया गया है?

गाइड 3 : ज्ञान को साधन के रूप में प्रयोग करने में विद्यार्थियों की मदद करना (शैक्षिक अवयव)

जब सामाजिक न्याय लक्ष्य हो, और विज्ञान का ज्ञान तथा उसका प्रयोग, आपके उपकरण हों तो विद्यार्थियों के सशक्तिकरण को विज्ञान की शिक्षा के सीखने और सिखाने के साथ जोड़ा जा सकता है। विद्यार्थी अपने आप को वैज्ञानिक ज्ञान से समर्थ महसूस कर सकें इसके लिए यह ज़रूरी है कि शिक्षक सक्रिय होकर उन्हें ज़रूरी अनुभव और सहयोग संसाधन तथा जानकारी उपलब्ध करवाएँ। विद्यार्थियों को सिर्फ़ नेतृत्व करने का अवसर देना ही काफ़ी नहीं है, यह भी ज़रूरी है कि विज्ञान के शिक्षक विद्यार्थियों को ऐसी वैज्ञानिक योग्यताओं और ज्ञान से समर्थ बना सकें कि वे बदलाव के लिए जो भी कार्य करना चाहें, कर सकें।

अमल में कैसे लाना है : इस प्रतिरूप का प्रत्येक अवयव महत्त्वपूर्ण है, लेकिन विज्ञान के ज्ञान के साथ सामाजिक न्याय के कार्यों को सहयोग प्रदान करने के लिए शिक्षकों को तीनों अवयवों का प्रयोग करना होगा।

उन तरीक़ों के बारे में सीखने में विद्यार्थियों की मदद करें, जिनमें विद्यार्थी जो कार्य करना चाहते हों उन्हें विज्ञान के सीखने और उसे अमल में लाने के द्वारा सहयोग दिया जा सकता हो। एक बार विद्यार्थियों के मन में कोई बड़ा लक्ष्य आ जाए तो उसे छोटे-छोटे, पहुँच में आने वाले लक्ष्यों में तोड़ने में उनकी मदद करें। और उन्हीं की अगुआई में

यह चर्चा करवाएँ कि इन छोटे-छोटे लक्ष्यों में से हर एक को हासिल करने के लिए उन्हें कौन-सी वैज्ञानिक जानकारियों और कौशलों को सीखने की ज़रूरत है। जब वे छोटे लक्ष्यों को प्राप्त करने लगें तो निरन्तर उनसे जानकारी लेते रहें और चर्चा करते रहें कि उनकी चरणबद्ध प्रगति उन्हें बड़ा बदलाव लाने के उनके बड़े लक्ष्य के कितने क़रीब ला रही है (पर साथ ही उन्हें इस गर्व का एहसास भी कराएँ कि किस प्रकार ज्ञान और कौशलों का उनका संचय आकार और गहराई में निरन्तर बढ़ता ही जा रहा है)।

निष्कर्ष

यह ज़रूरी है कि विज्ञान के शिक्षक अपने विद्यार्थियों को वे संसाधन और सहयोग प्रदान करें जिनके द्वारा वे सामाजिक, राजनैतिक, और शैक्षिक विकास को एक-दूसरे से जोड़कर विज्ञान के साथ सामाजिक न्याय लाने के लिए काम कर सकें। जब मिस्टर कार्सन ने सभी तीनों घटकों को जोड़ा नहीं था और सब पर बराबर ध्यान नहीं दिया था तो उनके विद्यार्थी निराश हुए थे। उनके मुताबिक उनके सामाजिक और राजनैतिक रूप से जाने-समझे क़दमों को शैक्षिक ज्ञान का पर्याप्त सहयोग नहीं मिला और न ही इसे उनके कक्षा में सीखने से पर्याप्त रूप से जोड़ा गया। पर जब तीनों पहलू एक साथ काम करते हैं तो नतीज़े सकारात्मक होते हैं। जैसा कि एक अन्य सामाजिक न्याय युक्त विज्ञान शिक्षण परियोजना की 13 वर्षीय विद्यार्थी जैनिस ने समझाया :

"हम जानते हैं कि हम क्या कर रहे हैं। हमें पता है कि बदलाव कैसे लाना है। हम जानते हैं कि ऊर्जा की बचत कैसे करना है, और बेहतर तरीक़ों से बिजली का उपयोग करने के लिए लोगों को राज़ी कैसे करना है। इस बारे में तो हम विशेषज्ञ हैं।"

शिक्षकों को अपने विद्यार्थियों को विज्ञान के साथ इस तरह समर्थ बनाना चाहिए कि विद्यार्थियों के पास ऐसे साधन हों जिनके द्वारा वे उन वास्तविक समस्याओं को हल कर सकें जो उन्हें प्रभावित करती हैं और उन लोगों और परिवेशों को प्रभावित करती हैं जो उनके प्रिय हैं और जिन पर वे निर्भर करते हैं। इसके लिए विद्यार्थियों को सशक्त कर्ता बनने की अनुमति देने से ज़्यादा भी कुछ करना होगा। इसके लिए ज़रूरी है कि, जब विद्यार्थी बड़ी और ज़्यादा पेचीदा समस्याओं को हल करने की तरफ़ बढ़ते हुए एक-एक चरण को पूरा करने के लिए काम कर रहे हों, तो उन्हें आवश्यक वैज्ञानिक, सामाजिक, और राजनैतिक ज्ञान तथा साधनों द्वारा सहयोग दिया जाए।

Note: Credits for the image used in the background of the article title: Cudrefin-justice, Roland Zumbuehl, Wikimedia Commons.
URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Cudrefin-justice.jpg. License: CC-BY-SA.

References

1. Calabrese Barton, A., Birmingham, D., Sato, T., Tan, E., & Calabrese Barton, S. (2013). Youth As Community Science Experts in Green Energy Technology. After school Matters. Retrieved from http://eric.ed.gov/?id=EJ1016811.
2. Dimick, A. S. (2012). Student empowerment in an environmental science classroom: Toward a framework for social justice science education. Science Education, 96(6), 990–1012. Retrieved from http://doi.org/10.1002/sce.21035.
3. Langhout, R. D., Collins, C., & Ellison, E. R. (2014). Examining Relational Empowerment for Elementary School Students in a yPAR Program. American Journal of Community Psychology, 53(3-4), 369–381. Retrieved from http://doi.org/10.1007/s10464-013-9617-z.
4. Mueller, M., Tippins, D., Bryan, L. (2012). The Future of Citizen Science. Democracy & Education. 20(1), 1-12.
5. Shin, M., Calabrese Barton, A., Greenberg, D., Nazar, C.R., Tan, E. (2015, April). "Little Kids Can Do Ginormous Works": Youth's Engineering Design and Identity Work. In Division C 29.030. Equity-Focused Implementation of the Next Generation Science Standards: Exploring Models of Hope and Possibility. Structured poster session presented at the American Educational Research Association, Chicago, IL.

डे ग्रीनबर्ग मिशीगन स्टेट यूनिवर्सिटी से एजुकेशनल साइकॉलोजी एण्ड एजुकेशनल टैक्नॉलोजी में डॉक्टरेट की पढ़ाई कर रही हैं। डे, विज्ञान और इंजीनियरिंग के क्षेत्र में किशोर-पूर्व उम्र के बच्चों के सीखने के, और उनकी पहचान के विकास से जुड़े अनुभवों पर शोध कर रही हैं। स्कूल के बाद के विज्ञान तथा इंजीनियरिंग के सीखने की जगहों और प्रोग्रामिंग का स्वरूप तय करने वाली प्रमुख व्यक्ति के रूप में उनका शोध स्कूल के बाहर के परिवेशों और परिस्थितियों पर केन्द्रित है। उनसे green106@msu.edu, web: daygreenberg.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

रिसर्च टू प्रैक्टिस की इस शृंखला का सम्पादन, मैरी लू फुल्टन टीचर्स कॉलेज, ऐरीजोना स्टेट यूनिवर्सिटी में स्कॉलरशिप व इनोवेशन के एसोसिएट डीन **डॉक्टर पुण्य मिश्र** (email: punya.mishra@asu.edu; web: punyamishra.com) तथा मिशीगन स्टेट यूनिवर्सिटी के कॉलेज ऑफ़ एजुकेशन में प्राध्यापक **डॉक्टर ऐंजेला कैलाब्रेस बार्टन** (email: acb@msu.edu; web: barton.wiki.educ.msu.edu) द्वारा किया गया है।
अनुवाद : भरत त्रिपाठी

मेरे जीवन का एक सप्ताह

आफ़ताब दीवान

जब मैं एक शोधकर्ता के रूप में अपना परिचय देता हूँ तो लोग अक्सर मुझसे पूछते हैं "शोधकर्ता के रूप में आप क्या करते हैं?" चूँकि शोध एक खुला उद्यम है, इसलिए इस सवाल का जवाब देना हमेशा आसान नहीं होता। उदाहरण के लिए, पिछले सप्ताह के दौरान, मैंने कुछ गणनाएँ की हैं, जिस प्रयोगशाला में मैं काम करता हूँ वहाँ एक नए लेजर पथ का संरेखण (सीधी रेखा में लाना) किया है, एक इलैक्ट्रॉनिक तंत्र में समस्याओं के निराकरण में शामिल रहा हूँ, अन्य शोधकर्ताओं द्वारा लिखे गए शोधपत्रों को पढ़ा ताकि अपने क्षेत्र में हो रही नवीनतम घटनाओं से अवगत रह सकूँ। लेकिन इनमें से कोई भी गतिविधि इस सवाल का ठीक-ठीक जवाब नहीं देती कि 'मैं क्या करता हूँ।'

आइए इनमें से पहली गतिविधि को लें, यानी मेरे द्वारा की गई गणनाएँ। मेरे कार्य का एक भाग चुम्बकीय फन्दे में परमाणुओं को फँसाना है। चुम्बकीय फन्दे को आप परमाणुओं से भरे एक चीनी मिट्टी के कटोरे के रूप में देख सकते हैं, सिर्फ़ इस परिवर्तन के साथ कि यह कटोरा चीनी मिट्टी का न होकर चुम्बकीय क्षेत्र की रेखाओं का बना होता है। चुम्बकीय क्षेत्र की इन रेखाओं को अक्सर दो गोलाकार विद्युतीय कुण्डलियों (तार के फन्दों) का इस्तेमाल करके बनाया जाता है जिन्हें एक-दूसरे से अलग एक निश्चित दूरी पर रखा जाता है। कटोरे के किसी भी भाग के चुम्बकीय क्षेत्र की गणना करना काफ़ी मुश्किल कार्य है, लेकिन परमाणुओं के सबसे नज़दीकी भाग में, जो कटोरे के केन्द्र में होता है, यह गणना करना आसान होता है। मैंने यह गणना मुख्यतः खुद को यह समझाने में मदद करने के लिए की है कि एक सामान्य चुम्बकीय फन्दा कैसा दिखता है।

हम अपनी प्रयोगशालाओं में जिन प्रमुख उपकरणों का इस्तेमाल करते हैं वे लेजर हैं। इन लेजर किरणों का इस्तेमाल हमारे प्रयोगों की ज़रूरतों के मुताबिक परमाणुओं को फँसाने, उनकी पड़ताल करने और उनमें हेरफेर करने के लिए किया जाता है। मेरी प्रयोगशाला में हाल ही में एक नया लेजर तंत्र आया है, जिसका बिलकुल ठीक-ठीक संरेखण करना ज़रूरी होता है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि उसकी किरणें परमाणुओं से बिलकुल उसी जगह टकराएँ जहाँ हम चाहते हों। चूँकि एक लेजर किरण, तथा परमाणुओं के बादल, दोनों का आकार मिलीमीटर के दसवें हिस्से से कम होता है, अतः इस संरेखण तक पहुँचना एक नाज़ुक प्रक्रिया है। इस सप्ताह के मेरे कार्य में दो अलग-अलग दर्पणों का इस्तेमाल करके इस नए लेजर तंत्र का संरेखण करना शामिल था। इनमें से एक दर्पण का काम था लेजर किरण को सही स्थान पर निर्देशित करना, और दूसरे का काम था इस निर्देशित किरण को संरेखित करना।

लेजर किरण क्या होती है?
लेजर किरण प्रकाश की अत्यधिक केन्द्रित और संधानिक (बिलकुल समानान्तर और सरेखित) किरण होती है। यह अपनी आकृति बदले बिना बहुत लम्बी दूरी तक जा सकती है।

इलैक्ट्रॉनिक तंत्रों के साथ काम करना तो किसी प्रयोग करने वाले भौतिकशास्त्री के लिए लगभग ज़रूरी होता है। उदाहरण के लिए, हमारे प्रयोगों में ख़ास आवृत्तियों पर फेंकी जाने वाली लेजर किरणों का इस्तेमाल शामिल रहता है। इन आवृत्तियों को लॉक बॉक्सों (लेजर को 'बाँधने' वाले डब्बे) का इस्तेमाल करके स्थिर किया जाता है। हालाँकि हमें अपने प्रयोग करने

बोस-आइंस्टीन संघनन (बीईसी) क्या है?

हम सबको पढ़ाया जाता है कि पदार्थ की तीन अवस्थाएँ होती हैं : ठोस, द्रव और गैस। अपने जिये गए अधिकांश अनुभव में, सिर्फ़ इन तीन अवस्थाओं को जानना पर्याप्त होता है। लेकिन, भौतिकी में, पदार्थ की कई और दशाएँ (या अवस्थाएँ) हो सकती हैं (और वाक़ई में होती हैं)। बोस-आइंस्टीन संघनन पदार्थ की एक ऐसी अवस्था है जो तब घटित होती है जब किसी ख़ास प्रकार के कण (यानी, बोसॉन) इतने ठण्डे हो जाते हैं कि वे सब संघनित होकर समान क्वाण्टम (प्रमात्रा) अवस्था में पहुँच जाते हैं। याद रखने की बात यह है कि परिवेश को देखते हुए, यह अवस्था एक ऐसा विन्यास है जो संघनित होते कणों के लिए ऊर्जा की दृष्टि से सबसे अनुकूल है।

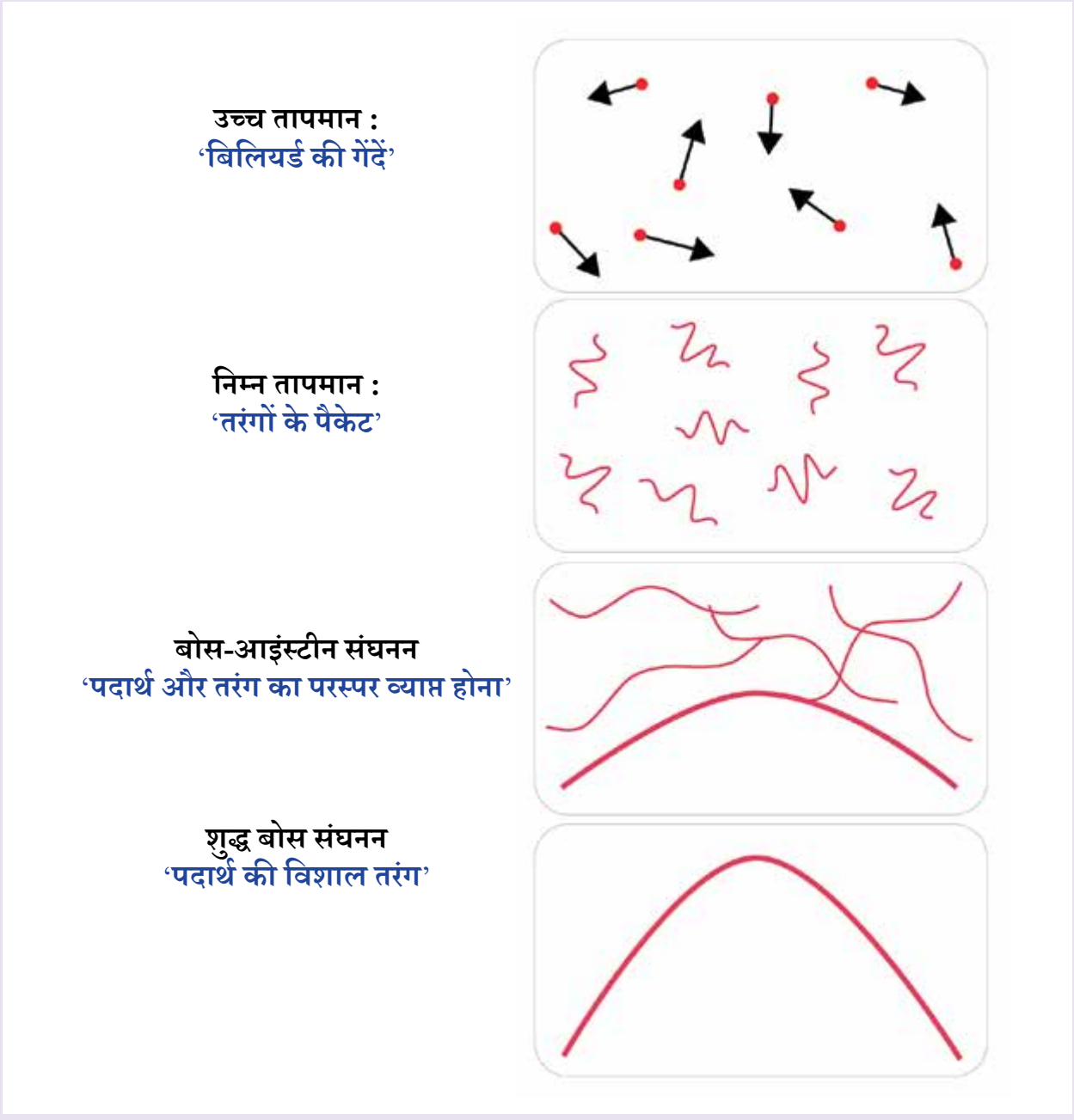

चित्र-1 : बीईसी का नुस्ख़ा। जो बात बीईसी को एक अवस्था के रूप में ख़ासतौर से रोचक बनाती है वह यह कि, यह स्थूल क्वाण्टम अवस्था का एक बहुत अच्छा उदाहरण है। इसलिए, किसी बीईसी में हेरफेर करके दरअसल हम एक ख़ास स्थूल अवस्था में हेरफेर कर रहे होते हैं, ऐसे तरीक़ों से जो उस परिघटना की प्रकृति के लिए ख़ास हैं जिनकी पड़ताल करने में हम रुचि रखते हैं।

के लिए तो एक ही लॉक बॉक्स की ज़रूरत होती है, लेकिन फिर भी दो-एक अतिरिक्त लॉक बॉक्स रखना अच्छा रहता है। चूँकि हम अपनी प्रयोगशाला में नियमित रूप से लगभग छह से दस लेजर आवृत्तियों का उपयोग करते हैं, इसलिए आप समझ सकते हैं कि हमें बहुत से लॉक बॉक्सों की ज़रूरत क्यों होती है। इसलिए, जब हाल ही में हमने कुछ नए लॉक बॉक्स लिए, और पाया कि वे ढंग से काम नहीं कर रहे थे तो मैंने कुछ समय उनमें आ रही समस्या को समझने और उन्हें ठीक करने में लगाया।

मुझे शायद यह समझाना चाहिए कि लेजर को ताला बन्द करने (लॉक करने) से, या अगर हम सामान्य शब्दों में कहें तो, किसी संकेत को लॉक करने से, मैं दरअसल क्या समझता हूँ? कल्पना करें कि आपके पास एक लेजर किरण है, और आप उसे विद्युत शक्ति की किसी ख़ास मात्रा या आवृत्ति पर उपयोग करना चाहें - उदाहरण के लिए, हो सकता है कि मैं किसी ख़ास बिन्दु पर 500 मेगावॉट के स्थाई आउटपुट (उत्पादन) पर इस किरण का उपयोग करना चाहूँ। मेरे प्रयोग में लेजर किरण की जो वास्तविक शक्ति मैं उपयोग करता हूँ वह कई कारणों की वज़ह से परिवर्तित हो सकती है, जिनमें तापमान या आर्द्रता, यांत्रिकीय कम्पन, हवा की धाराओं आदि में बदलाव प्रमुख हैं। और ये परिवर्तन मेरी लेजर किरण की शक्ति को 10 – 20% तक बदल सकते हैं। तो इस बात को मैं कैसे सुनिश्चित करूँ कि लेजर किरण बिलकुल उसी विद्युत शक्ति/आवृत्ति पर रहे जैसी मुझे ज़रूरत है। मैं यह करता हूँ कि उस विद्युत शक्ति पर लेजर को क़ैद कर देता हूँ। ऐसा करने के लिए, मैं लेजर संकेत के नियत गन्तव्य पर उसकी शक्ति को माप लेता हूँ। चलिए इस संकेत को A कहते हैं। अब इसकी तुलना जो संकेत मुझे चाहिए, उससे करते हैं। इसे हम B कहेंगे (जो इस मामले में 500 मेगावाट के बराबर है)। लॉक बॉक्स दरअसल यह करता है कि यह लेजर नियंत्रक को एक संकेत (आइए इसे हम लॉक संकेत, या L कहें) दे देता है जो वास्तविक समय में लेजर की शक्ति को परिवर्तित कर देता है। जब हम लॉक बॉक्स को किसी ख़ास शक्ति पर किसी संकेत को क़ैद करने के लिए कहते हैं, तो वह संकेत L को बदलकर, संकेत A को संकेत B के निकटतम लाने का प्रयास करता है, और वह यह सब बहुत ही जल्दी करता है, कुछ माइक्रोसैकेण्ड के भीतर ही। इसी की बदौलत प्रयोग के दौरान लेजर शक्ति/आवृत्ति नहीं बदलती। सामान्यतया इस पद्धति का प्रयोग किसी भी संकेत को किसी ख़ास मूल्य पर अत्यन्त सटीकता के साथ क़ैद करने के लिए किया जा सकता है।

इन सभी अलग-अलग कामों के पीछे एक बड़ा लक्ष्य है, ऐसा लक्ष्य जो उस शोध परियोजना की ओर ले जाता है, जिसका मैं हिस्सा हूँ। इस परियोजना का लक्ष्य है, उन सारे उपकरणों का प्रयोग करके, जिनका मैंने अभी वर्णन किया है, परमाणुओं को लगभग -273 डिग्री सैल्सियस या लगभग 0 केल्विन जैसे अत्यन्त निम्न तापमानों तक ठण्डा करके, इन तापमानों पर उनके बर्ताव की पड़ताल करना। लेकिन इस तापमान को 0 केल्विन तक ले जाना अपने आप में ही कोई मामूली बात नहीं है, और इसमें कई सारे चरण होते हैं और उन सबका आपस में मेल होना ज़रूरी है। जिन परमाणुओं का हम इस्तेमाल करते हैं वे रूबीडियम के एक समस्थानिक (आइसोटोप) रूबीडियम 87 के हैं। रूबीडियम के इस समस्थानिक के एक खण्ड को ओवन में सेंककर उसके गैसीय रूप में परिवर्तित किया जाता है। अब जो गैस बनती है उसके परमाणु बेहद गर्म होते हैं, और इसलिए वे बहुत तेज़ी-से गति करते हैं। इन परमाणुओं को चुम्बकीय फन्दे में फाँसने और उसमें बनाए रखने के लिए, इन्हें ठण्डा किया जाना बहुत ज़रूरी है, और इन्हें ठण्डा करने का एक ही तरीक़ा है कि जितना सम्भव हो, इनकी गति को धीमा कर दिया जाए। हम कई चरणों में ऐसा करते हैं। पहला चरण है इनके सफ़र करने की दिशा के उलटी दिशा में एक लेजर किरण को प्रसारित करना। इन परमाणुओं तथा लेजर को बनाने वाले फोटॉनों के बीच होने वाले टकराव परमाणुओं का वेग इतना कम कर देते हैं कि उन्हें चुम्बकीय फन्दे में फँसाया जा सकता है। ये काफ़ी कुछ वैसा ही है जैसे कोई बहती हवा या पानी की धारा के विपरीत तेज़ी-से दौड़ने की कोशिश करे तो घर्षण का बल उसकी गति को धीमा कर देगा। एक बार परमाणु चुम्बकीय फन्दे में फँस जाएँ तो हम एक चुम्बकीय क्षेत्र और लेजर किरणों के संयोजन का इस्तेमाल करके उनकी गति को क़रीब 400 मिली केल्विन तक धीमा कर सकते हैं। इस चरण का सिद्धान्त वही है जो पहले चरण का है, अन्तर सिर्फ़ यही है कि इससे परमाणुओं का तापमान कई डिग्री और कम हो जाता है। इस चरण के पूरा हो जाने के बाद, परमाणुओं को एक प्रकाशीय (ऑप्टिकल) फन्दे में स्थानान्तरित कर दिया जाता है, जहाँ वे लेजर किरणों के एक जोड़े के द्वारा बँधे रहते हैं। इस प्रक्रिया के अन्तिम चरण में प्रकाशीय फन्दे में फँसे परमाणुओं का वाष्पीकरण करवाया जाता है। इससे ज़्यादा ऊर्जा वाले परमाणु फन्दे से बाहर निकल जाते हैं। बारीक़ी से हर चीज़ का समायोजन बैठाने के बाद आख़िरकार बोस-आइंस्टीन संघनन, यानी बीईसी, प्राप्त किया जा सकता है। बीईसी पदार्थ की नई अवस्था होती है, जहाँ परमाणुओं के पूरे समूह एक अस्तित्व की तरह बर्ताव करते हैं। इसका मतलब कि इस चरण में, संघनित पदार्थ बनाने वाले लगभग 100000 अलग-अलग परमाणुओं में भेद करने का कोई तरीक़ा नहीं है। वे सभी एक समान प्रतीत होते हैं। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि एक तरह से वे सभी एक ही स्थान में बसे हुए होते हैं। और चूँकि वे सभी रूबीडियम समस्थानिक के परमाणु हैं, तो एक ही स्थान में होने के कारण उनके बीच फ़र्क़ कर पाना असम्भव हो जाता है।

वर्तमान में हम अपनी प्रयोगशाला में इस भौतिक तथ्य की पड़ताल कर रहे हैं, कि इन बीईसी का ढेर अलग-अलग परिदृश्यों में कैसा बर्ताव करेगा। इसे सरल ढंग से समझाने के लिए कल्पना करें कि बीईसी एक विशाल तरबूज़ है, जिसे हम कई-कई लम्बवत हिस्सों में बाँट देते हैं। इसके बाद हम पड़ताल करते हैं कि इन हिस्सों को अलग करने पर, उन्हें थोड़ा विकृत करने पर, और फिर वापस मूल स्थिति में लाने पर क्या होता है। क्या वे अभी भी, मिलकर, तरबूज़ बना देते हैं? या फिर वे कुछ और बनाते हैं?

पर बात यहीं ख़त्म नहीं होती। इस प्रयोग को पूरा कर लेने के बाद, हम एक और प्रयोग कर सकते हैं, और किसी बिलकुल ही भिन्न चीज़ को ले सकते हैं। समय के साथ, इन प्रयोगों के संचयी परिणाम, धीरे-धीरे प्राकृतिक दुनिया के बारे में, और इस तरह से, मानव ज्ञान की बड़ी परियोजना के बारे में हमारे ज्ञान में बढ़ोतरी करने में मदद करते हैं। यही हमारा शोध है, लेकिन इसे करने के लिए एक साथ कई भूमिकाएँ निभाना पड़ती हैं। और इसीलिए इस सवाल का कोई सीधा-सरल जवाब नहीं है कि 'आप क्या करते हैं?' इसका जवाब अक्सर यही होता है - बहुत सारी चीज़ें!

Note: Credits for the image used in the background of the article title: Laser play, Jeff Keyzer from San Francisco, CA, USA, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Laser_play.jpg. License: CC-BY.

आफ़ताब दीवान वर्तमान में मैरीलैण्ड विश्वविद्यालय में पीएचडी कर रहे हैं। उनसे aftaab.dewan@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।
अनुवाद : भरत त्रिपाठी

दस बातें जो आप नहीं जानते हैं समुद्री सूक्ष्मजीवों के बारे में

लेखिका : माहिरा काकाजीवाला

समुद्र में करोड़ों सूक्ष्मजीव, किन्तु इतने छोटे कि हम उन्हें देख नहीं सकते

1. इसकी पूरी सम्भावना है कि समुद्रों में जीवन की शुरुआत साढ़े तीन अरब वर्ष पहले हुई। पृथ्वी के इतिहास के 50 से 90 प्रतिशत समय तक जीवन के जो ज्ञात रूप थे वे केवल समुद्री सूक्ष्मजीव थे। अपने उद्भव के समय से ही समुद्री सूक्ष्मजीव पृथ्वी की पर्यावरणीय परिस्थितियों में लगातार परिवर्तन करके जीवन के सभी अन्य रूपों के विकास को अत्यधिक प्रभावित करते रहे हैं।

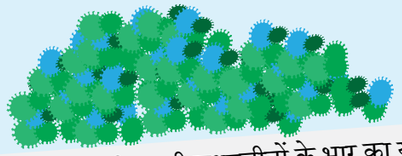

2. यदि आप सभी समुद्री सूक्ष्मजीवों के भार का योग करें तो वह समुद्र में रहने वाले सभी स्तनधारियों, शार्क, मछलियों और जीवन के अन्य रूपों के भार के योग से कहीं अधिक होगा। वास्तव में, अनुमानों के अनुसार समुद्री जल के हर एक मिलीलीटर में एक लाख सूक्ष्मजीव रहते हैं। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि पृथ्वी पर जितने मनुष्य रहते हैं उनसे अधिक सूक्ष्मजीव समुद्र में रहते हैं।

3. खुले समुद्र से लेकर किनारों तक, भूमध्य रेखा से लेकर ध्रुवों तक और बर्फ़ से ढके उत्तर ध्रुवीय और दक्षिण ध्रुवीय क्षेत्रों से लेकर समुद्र की गहराइयों में स्थित उबलती हुई ऊष्माजलीय दरारों (hydrothermal vents) तक समुद्र में हर प्रकार के पर्यावरण में सूक्ष्म जीव पाए जाते हैं। वे प्लवक (plankton) (समुद्र की सतह पर स्वतंत्र रूप से तैरने वाले जीव) में, मूंगों पर सहजीवियों के रूप में, समुद्री जन्तुओं की सतह पर, यहाँ तक कि समुद्र के तल पर पाई जाने वाली तलछट में भी पाए जाते हैं।

4. समुद्री सूक्ष्मजीव एक बहुत विविधतापूर्ण समूह है। इनमें प्रमुख रूप से जीवाणु और आर्किया होते हैं, किन्तु इनमें सूक्ष्म यूकैरियोट्स और विषाणु (जिन्हें कुछ लोग जीवित तक नहीं मानते हैं और इसलिए उन्हें जीवन-वृक्ष पर स्थान नहीं दिया जाता) भी शामिल हैं।

साझा पूर्वज

जीवाणु	आर्किया	यूकैरियोट्स
इन्हें **असली जीवाणुओं (True Bacteria)** के रूप में जाना जाता है। ये सूक्ष्म और प्रोकैरियोट्स होते हैं तथा इनमें केन्द्रक और झिल्ली में बन्द अंगक (enclosed organelles) नहीं होते।	चरम पर्यावरणों में रहने वाले सूक्ष्म जीव होते हैं जिन्हें extremophyles भी कहा जाता है। कुछ प्रजातियाँ साधारण तापक्रम और लवणीयता पर रहती हैं। कुछ तो आपकी आँत में भी रहती हैं।	सदस्य यूकैरियोट्स होते हैं (केन्द्रक और झिल्ली में बंद अंगक उपस्थित)। अधिकांश उच्च पौधों और जन्तुओं के समान वे सूक्ष्म या बड़े आकार के हो सकते हैं।

5. समुद्री सूक्ष्मजीव - वे चाहें स्वपोषी (autotrophic) हों या रसायनपोषी (chemotrophic) या विषमपोषी (hetro-trophic), समुद्री भोजन शृंखला की सबसे निचली पायदान कहलाते हैं। उन्हें स्वतंत्र रूप से तैरने वाले जन्तु खाते हैं, जिन्हें छोटी मछलियाँ खाती हैं। इन छोटी मछलियों को उनसे क्रमिक रूप से बड़े और बड़े जन्तु खाते हैं।

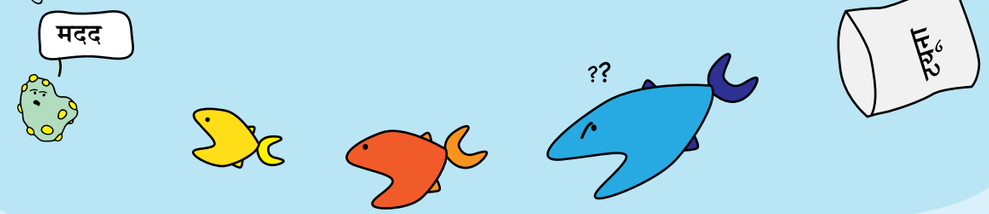

भोजन शृंखला में सूक्ष्मजीवों की चलित स्टॉइकियोमीट्री

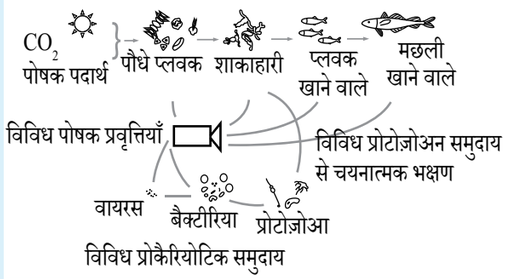

8. समुद्री विषमपोषी अपना भोजन स्वयं नहीं बना सकते। इनमें से कुछ मूंगे के पॉलिप्स के साथ सहजीवियों के रूप में रहते हैं। विषाणुओं के समान अन्य सूक्ष्मजीव विभिन्न प्रकार के जीवों पर परजीवी के रूप में रहकर वृध्दि और जनन के लिए आवश्यक ऊर्जा और भोजन प्राप्त करते हैं। स्वतंत्रजीवी विषमपोषी जीवाणु सूक्ष्मजीवी पाश (microbial loop) के माध्यम से समुद्र में कार्बन चक्रीकरण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ये जीवाणु एकमात्र ऐसे जीव हैं जो ऐसे घुलित कार्बनिक कार्बन का भोजन के रूप में उपयोग कर सकते हैं जो किसी समय किसी जीवित जीव का अंश था। जैसे-जैसे अन्य, बड़े जीव उत्सर्जन करते और मरते रहते हैं और इन सूक्ष्मजीवों के लिए कार्बन तथा अन्य पोषक पदार्थ उपलब्ध कराते रहते हैं, यह कार्बनिक पदार्थ भोजन शृंखला में पहुँचा दिए जाते हैं।

ऊर्जा

7. गहरे समुद्र में कई रसायनपोषी सूक्ष्मजीव होते हैं जिन्हें जीवित रहने के लिए सूर्य के प्रकाश या ऑक्सीजन की आवश्यकता नहीं होती। इसके बजाय वे रासायनिक प्रक्रियाओं की एक व्यापक रेन्ज से ऊर्जा प्राप्त करते हैं जैसे समुद्री दरारों से निकलने वाली हाइड्रोजन सल्फाइड। कार्बन डाइऑक्साइड से कार्बन प्राप्त करके वे बड़े जीवों के लिए भोजन का स्रोत बनते हैं। इस प्रकार ये सूक्ष्मजीव अन्धकार मय गहराइयों के प्राथमिक उत्पादकों के समकक्ष होते हैं।

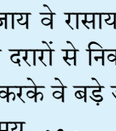

9. अधिकांश समुद्री सूक्ष्मजीव हमारे लिए लाभदायक होते हैं, किन्तु इनका एक लघु प्रतिशत हानिकारक भी हो सकता है। उदाहरण के लिए, बहुत अधिक प्रदूषित जल में ये अपने संक्षिप्त जीवनचक्र के कारण तेज़ी से जनन करते हैं जिसका परिणाम हानिकारक शैवाल प्रस्फुटन (algal blooms) में होता है। चूँकि कुछ शैवाल विषैले पदार्थों का निर्माण करते हैं, वे उन्हें खाने वाले जीवों के लिए हानिकारक हो सकते हैं। यदि वे विषैले न भी हों तो भी शैवाल प्रस्फुटन के कारण जल में ऑक्सीजन की कमी हो जाने और सूर्य के प्रकाश के उन तक न पहुँच पाने के कारण मछलियों और पौधों पर विपरीत असर पड़ता है।

6. स्वपोषी प्लवक स्थलीय पौधों के समान होते हैं। वे जीवित रहने और वृध्दि करने के लिए प्रकाश संश्लेषण पर निर्भर होते हैं। वास्तव में, पृथ्वी पर होने वाले प्राथमिक उत्पादन का आधा भाग समुद्र में होता है और समुद्र में होने वाले इस उत्पादन का आधा भाग केवल स्वपोषी जीवाणुओं के द्वारा ही किया जाता है। इसका मतलब यह भी होता है कि समुद्र में रहने वाले स्वपोषी जीवाणु और एक-कोशिकीय शैवाल मिलकर उतनी ऑक्सीजन का निर्माण करते हैं जितनी सभी स्थलीय पौधे मिलकर करते हैं। डायऐटम नामक एक-कोशिकीय शैवाल और सायनोबैक्टीरिया (Prochlorococcus and Syenchococcus) हमारे द्वारा साँस में ली गई ऑक्सीजन की आधी मात्रा का निर्माण करते हैं।

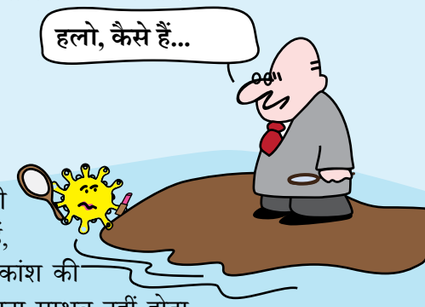

10. प्रतिदिन नए समुद्री सूक्ष्मजीव खोजे जा रहे हैं, किन्तु चूँकि इनमें से अधिकांश की प्रयोगशाला में वृध्दि करवाना सम्भव नहीं होता, उनका अध्ययन करना कठिन होता है। इसी कारण से इनका अध्ययन करने के लिए सूक्ष्मजीवविज्ञानी लगातार नई विधियाँ तलाशते रहते हैं। विशेष रूप से ऐसी विधियाँ जो आनुवंशिक सामग्री के नमूनों पर आधारित हों, ताकि नए सूक्ष्मजीवों की सही पहचान हो सके और पृथ्वी पर उनकी भूमिका के बारे में हमारी समझ अधिक परिष्कृत हो सके।

Poster Design: Vidya Kamalesh

माहिरा काकाजीवाला ने यूनिवर्सिटी ऑफ सदर्न कैलिफोर्निया से समुद्री जीवविज्ञान में स्नातकोत्तर उपाधि प्राप्त की है। समुद्री जीवविज्ञान में कई वर्षों तक शोधकार्य करने (विशेष रूप से बैक्टीरिया को संक्रमित करने वाले वायरसों पर) के बाद अब वे दक्षिण फ़ाउण्डेशन, बेंगलूरु के साथ विद्यार्थियों को अनुभव-आधारित स्थानीय विषयवस्तु उपलब्ध कराने पर अपना ध्यान केन्द्रित कर रही हैं। उनसे mahirazk@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** अरविन्द गुप्ते

i wonder...
Rediscovering school science

Azim Premji University

बिग बैंग

आनन्द नारायणन

बिग बैंग (महा विस्फोट) सिद्धान्त, वर्तमान में आधुनिक ब्रह्माण्डविज्ञान का सबसे महत्त्वपूर्ण विषय है। और फिर भी, आधी सदी पहले, यह संसार के बारे में कुछ भिन्न धारणाओं में से एक भर था, और ये सभी सत्य के प्रतिस्पर्धी दावे प्रस्तुत करते थे। यह लेख खगोलभौतिकी के किनारों से उसके केन्द्र तक पहुँचने की बिग बैंग प्रतिरूप की यात्रा की कुछ पथ-प्रदर्शक घटनाओं को उजागर करता है। यह एक ऐसी यात्रा है जो अभी जारी है और जिसका अन्त अभी बहुत दूर है।

"कौन वाकई में जानता है, कौन बता सकता है?
इस सृष्टि का प्रारम्भ कब हुआ या कहाँ से हुआ?
कब और कहाँ से यह सृष्टि उदित हुई?
शायद इसने स्वयं ही अपनी रचना की होगी, या शायद नहीं।"

- ऋग्वेद (10: 129), 9वीं सदी ईसा पूर्व।

ये शब्द 2000 साल से भी पहले लिखे गए थे। और फिर भी, अगर ये आज के लिखे लगते हैं, तो ऐसा इसलिए है क्योंकि ये एक ऐसी विशेषता को प्रतिध्वनित करते हैं जो स्पष्ट रूप से मानवीय है। यह विशेषता है हमारी प्रजाति की, अपने आस-पास की दुनिया को देखने, और उस पर चकित होकर यह सोचने की क्षमता, कि इस संसार की उत्पत्ति कैसे हुई होगी। आपने भी यही सवाल कितनी बार किए होंगे?

हम यह मानते हैं कि सभी चीज़ों की कोई शुरुआत होती है। क्या यह बात इस विराट और जटिल ब्रह्माण्ड के लिए भी सही हो सकती है? अगर हाँ, तो इसकी उत्पत्ति का क्षण कौन-सा था, और किस घटना ने इसमें उत्प्रेरक की भूमिका निभाई होगी? इसके अलावा, यह सवाल भी है कि अगर हमारे ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति हुई थी तो क्या किसी दिन इसका अन्त भी होगा?

परमाणविक से लेकर अन्तरिक्षीय तक, मनुष्यों ने हमेशा ही अपने आस-पास की चीज़ों की उत्पत्ति के बारे में सोच-विचार किया है। कवियों और दार्शनिकों, धर्मशास्त्रियों और वैज्ञानिकों, सभी ने अपने अनोखे तरीक़ों से ब्रह्माण्ड को समझने की कोशिश की है। लेकिन, पिछले क़रीब 120 सालों में ही विज्ञान ने यह सम्भव किया है कि, हम बहुत लम्बे समय से चले आ रहे सवालों में से कुछ के जवाब पाने के नज़दीक पहुँच सकें।

ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति और विकास का वैज्ञानिक अध्ययन ब्रह्माण्डविज्ञान कहलाता है। बीसवीं सदी के प्रारम्भिक वर्षों से, वैज्ञानिक ब्रह्माण्डविज्ञान के प्रेक्षणात्मक पहलुओं पर व्यापक रूप

चित्र-1 : अमरीका के कैलीफोर्निया राज्य में स्थित माउण्ट विल्सन वेधशाला में रखे 100 इंच के दूरदर्शक के नेत्रक (आईपीस) में से अन्तरिक्ष को देखते ऐडविन हबल। इसी दूरदर्शक का प्रयोग करते हुए हबल ने ब्रह्माण्डविज्ञान के क्षेत्र में अपनी कई बुनियादी खोजें कीं।

से ध्यान दिया जाने लगा था। ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि ऐडविन हबल जैसे वैज्ञानिकों द्वारा की गई चौंका देने वाली खोजों की एक छोटी शृंखला ने भौतिक ब्रह्माण्ड को देखने के हमारे नज़रिये को बदल दिया।

हबल के पास ऐसी सुविधा थी जो बीसवीं सदी के प्रारम्भ में इने-गिने खगोलविज्ञानियों के पास थी, और वह थी कैलीफोर्निया की माउण्ट विल्सन वेधशाला का उपयोग करने की सुविधा। इसी वेधशाला में उस समय के सबसे बड़े दूरदर्शक रखे थे, और उनसे उच्च स्तरीय तथ्य सामने आते थे। साथी खगोलविज्ञानी मिल्टन ह्यूमेसन की मदद से, जो माउण्ट विल्सन दूरदर्शक का उपयोग करने में दक्ष थे, हबल ने मिल्की-वे आकाशगंगा के पड़ोस की लगभग दो दर्जन आकाशगंगाओं का प्रेक्षण करना शुरू किया।

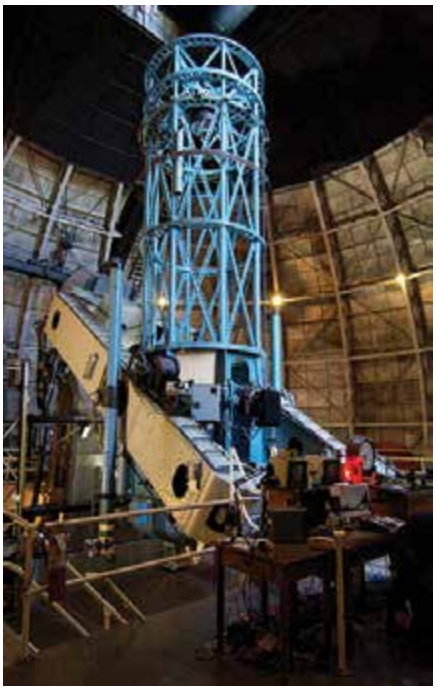

चित्र-2 : माउण्ट विल्सन वेधशाला में रखे हुकर दूरदर्शक का दृश्य। 100 इंच के व्यास वाले दर्पण वाला यही वह दूरदर्शक था जिसका प्रयोग ऐडविन हबल ने ब्रह्माण्ड के प्रसार की खोज के लिए किया था।

Source: Ken Spencer, Wikimedia Commons.
URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:100_inch_Hooker_Telescope_900_px.jpg.
License: CC-BY-SA.

बॉक्स-1 : वर्णक्रम में होने वाले रेड और ब्लू शिफ्ट :

हम जानते हैं कि जब प्रकाश किसी प्रिज्म से होकर गुज़रता है, तो वह अपने भीतर मौजूद फोटॉनों (प्रकाश के कण) की भिन्न-भिन्न ऊर्जाओं के अनुरूप कई भिन्न-भिन्न रंगों में बँट जाता है। खगोलविज्ञानी रंगों के इस इन्द्रधनुष के पार जाने वाले प्रकाश की चमक को मापकर, इस प्रकाश का उत्सर्जन करने वाली वस्तु के **वर्णक्रम** को जान लेते हैं।

किसी चमकदार वस्तु का वर्णक्रम जानकारियों की स्वर्ण खदान होता है। उदाहरण के लिए, किसी तारे, आकाशगंगा या निहारिका (nebula) का वर्णक्रम उसके तापमान, रासायनिक संघटन, दाब और घनत्व का पता लगाने में मदद करता है। इसके द्वारा उस वस्तु के वेग को भी मापा जा सकता है, अगर वह वस्तु हमारे सापेक्ष गति कर रही हो। इसलिए, अगर प्रकाश उत्सर्जित करती हुई कोई वस्तु हमसे दूर जा रही है, तो उसके वर्णक्रम का ज़्यादा लम्बी तरंगदैर्ध्यों और निम्न ऊर्जाओं की ओर बदलाव दिखाई देगा, इसे ही **रैडशिफ्ट** कहा जाता है। इसकी बजाय, यदि वस्तु आपकी ओर आ रही हो, तो उसके वर्णक्रम का अपेक्षाकृत छोटी तरंगदैर्ध्यों और अधिक ऊर्जाओं की ओर बदलाव दिखाई देगा, जिसे **ब्लूशिफ्ट** कहते हैं। हमारे सापेक्ष इस वस्तु का वेग जितना अधिक होगा, उसकी ऊर्जा में उतना ही अधिक बदलाव होगा।

चित्र-3 : एक प्रिज्म से होकर गुज़रता हुआ सफेद प्रकाश रंगों का पूरा वर्णक्रम पैदा करता है।

Source: Vilisvir, Wikimedia Commons.
URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Optical-dispersion.png. License: CC-BY-SA.

परिणामस्वरूप, खगोलीय वस्तुओं के वर्णक्रम को दर्ज करना, खगोलविज्ञान का एक नियमित हिस्सा बन चुका है। यह स्पैक्ट्रोग्राफ़ नामक उपकरण द्वारा किया जाता है। और इस उपकरण के पुराने मॉडल प्रिज्म का उपयोग करके प्रकाश को फोटॉनों, की विभिन्न ऊर्जाओं में बाँट देते हैं, और नए मॉडल प्रिज्म की जगह ग्रेटिंग नामक एक प्रकाशिक यंत्र (ऑप्टिकल डिवाइस) का प्रयोग करते हैं।

हबल और ह्यूमेसन ने पहले कुछ बहुत चौकस प्रेक्षणों के माध्यम से पृथ्वी से हर एक आकाशगंगा की दूरी की गणना कर ली थी। अब उन्होंने इनमें से हर एक आकाशगंगा के वर्णक्रमों (स्पैक्ट्रा) को दर्ज करना शुरू किया (**बॉक्स-1** देखें)। इन प्रेक्षणों का बहुत ध्यान से अध्ययन करते हुए हबल ने दो आश्चर्यजनक प्रवृत्तियाँ देखीं। कुछ अपवादों को छोड़कर, उनके द्वारा देखी गई लगभग हर आकाशगंगा ने रैडशिफ्ट का प्रदर्शन किया, यानी वह हमसे दूर जा रही थी। इसका अर्थ यह था कि ब्रह्माण्ड स्थिर नहीं है। यदि वह स्थिर होता, तो या तो कोई भी आकाशगंगा हमारे सापेक्ष कोई गति नहीं दिखाती, या इतनी ही आकाशगंगाएँ हमारे क़रीब आ रही होतीं। यह प्रेक्षण कि आकाशगंगाओं की भारी बहुसंख्या हमसे दूर जा रही है सिर्फ़ किसी विस्तार करते ब्रह्माण्ड के लिए ही सही हो सकता है। यह महत्त्वपूर्ण रहस्योद्घाटन अल्बर्ट आइंस्टीन सहित उस समय के कई शीर्ष वैज्ञानिकों की धारणा के बिलकुल विपरीत था (**बॉक्स-2** देखें), कि ब्रह्माण्ड स्थिर था, न तो फैल रहा था और न ही संकुचित हो रहा था।

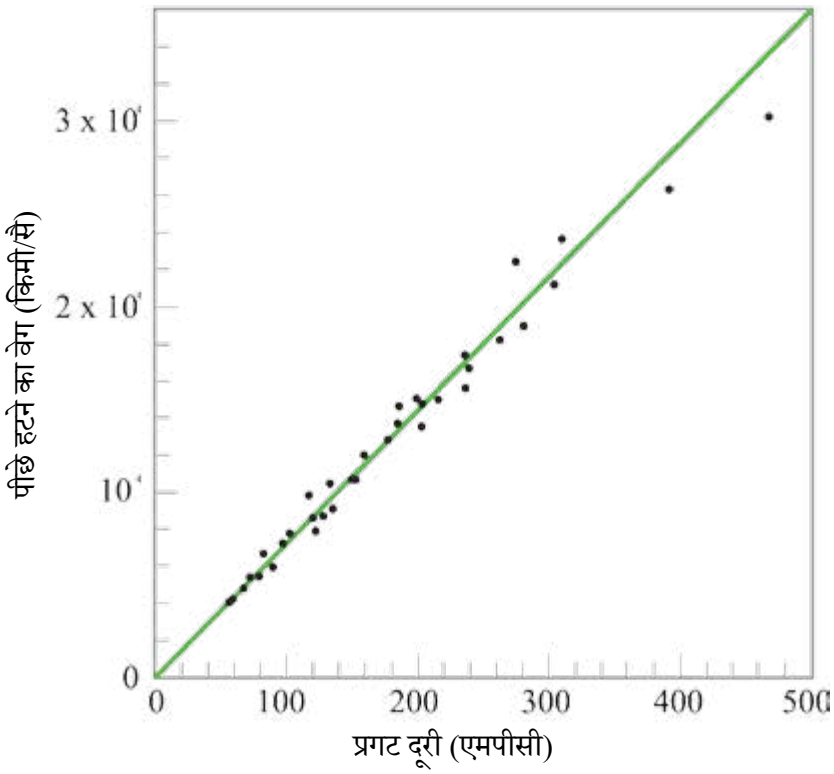

चित्र-4 : आकाशगंगाओं के लिए वेग-दूरी का सम्बन्ध दिखाता, हबल और ह्यूमेसन द्वारा बनाए गए आलेख से मिलता-जुलता, एक आलेख। लम्बवत अक्ष पर किलोमीटर प्रति सैकेण्ड की इकाइयों में वेग दर्शाया गया है। क्षैतिज अक्ष पर मिल्की-वे आकाशगंगा से इन आकाशगंगाओं की दूरी मिलियन पारसैकों (1 पारसैक 3.26 प्रकाश वर्षों के बराबर होता है) में दी गई है। काले बिन्दु इस नमूने में शामिल हर एक आकाशगंगा को दिखा रहे हैं। जैसा कि हम देख सकते हैं, वे आकाशगंगाएँ जो हमसे ज़्यादा दूर हैं, हमारे सन्दर्भ में उनके वेग भी अपेक्षाकृत अधिक हैं। इस आलेख में फैले आँकड़े सापेक्ष वेग और दूरी के बीच एक रैखिक सम्बन्ध की ओर इशारा करते हैं। यह रैखिक सम्बन्ध मोटी हरी रेखा द्वारा निरूपित किया गया है। और इस रेखा की ढाल हबल का नियतांक है।

बॉक्स-2 : मेरे जीवन की सबसे बड़ी भूल!

1916 में, हबल और ह्यूमेसन के पथ-प्रदर्शक प्रेक्षणों के लगभग एक दशक पहले, आइंस्टीन ने कुछ गणितीय समीकरण निकाले थे जो एक नए नज़रिये से गुरुत्वाकर्षण की व्याख्या करते थे। सामान्य सापेक्षता के इन समीकरणों का एक तार्किक निष्कर्ष था एक ऐसा ब्रह्माण्ड जो आकार में निरन्तर बढ़ता रहता है। दूसरे शब्दों में, इन समीकरणों ने एक अस्थिर ब्रह्माण्ड का दावा किया था। खुद आइंस्टीन इस निष्कर्ष से भयभीत हो गए थे और उन्हें समझ नहीं आ रहा था कि वे इसे किस प्रकार समझें। उस समय की प्रचलित धारणा यह थी कि ब्रह्माण्ड स्थिर था, और ऐसा कोई प्रमाण मौजूद नहीं था कि इससे विपरीत कोई बात मानी जाए। आइंस्टीन ने यह माना कि उनका यह प्रतिरूप ग़लत था। इसे सुधारने के लिए, और समीकरणों को ठीक करने के लिए उन्होंने इनमें एक नियतांक जोड़ दिया। पर हबल की खोज के बारे में सुनने के बाद आइंस्टीन ने ख़ुशी-ख़ुशी इस नियतांक को अपने समीकरणों से हटा दिया, और सामान्य सापेक्षता के अपने समीकरणों में इसे ज़बरदस्ती ठूँसने को अपने जीवन की 'सबसे बड़ी ग़लती' करार दिया।

मज़े की बात यह है कि, आइंस्टीन के कुछ समकालीन वैज्ञानिक, जैसे विलियम डि सिटर, ऐलेक्जेंडर फ्रीडमैन और जॉर्ज लेमेत्रे भी आइंस्टीन के सामान्य सापेक्षता के समीकरणों का इस्तेमाल करके गणितीय रूप से इसी निष्कर्ष पर पहुँचे थे कि ब्रह्माण्ड का विस्तार हो रहा है। हालाँकि उन्होंने अपने निष्कर्षों को विभिन्न वैज्ञानिक पत्रिकाओं में प्रकाशित किया था, इन्हें वैज्ञानिक समुदाय ने तब जाकर गम्भीरता से लिया जब कि हबल और ह्यूमेसन के प्रेक्षणों को व्यापक रूप से दोहराया और प्रमाणित कर दिया गया था।

दूसरी प्रवृत्ति पर हबल ने तब ग़ौर किया जब उन्होंने हर आकाशगंगा के पीछे हटने के वेग को, हमसे उसकी दूरी के सामने, आलेखों में रखा (**चित्र-4** देखें)। इन आलेखों ने यह दिखाया कि कोई आकाशगंगा हमसे जितनी दूर थी, उसके पीछे हटने की गति उतनी ही तेज़ थी। इन दो राशियों के बीच का सम्बन्ध लगभग रैखिक है (**बॉक्स-3** देखें)।

बॉक्स-3 : रैखिक सम्बन्ध

दो राशियों के बीच का सम्बन्ध, जो हबल वेग-दूरी रेखाचित्र के जैसा दिखता है, उसे रैखिक सम्बन्ध कहा जाता है। जब एक राशि अपने मान का दोगुना हो जाती है, तो दूसरी राशि भी दोगुनी हो जाती है। इसी प्रकार, जब एक राशि को आधा किया जाता है, तो दूसरी राशि भी आधी हो जाती है। जब भी दो राशियों के बीच ऐसी प्रवृत्ति देखी जाती है तो वैज्ञानिक उसे एक सीधी रेखा की मदद से संहिताबद्ध करने की कोशिश करते हैं।

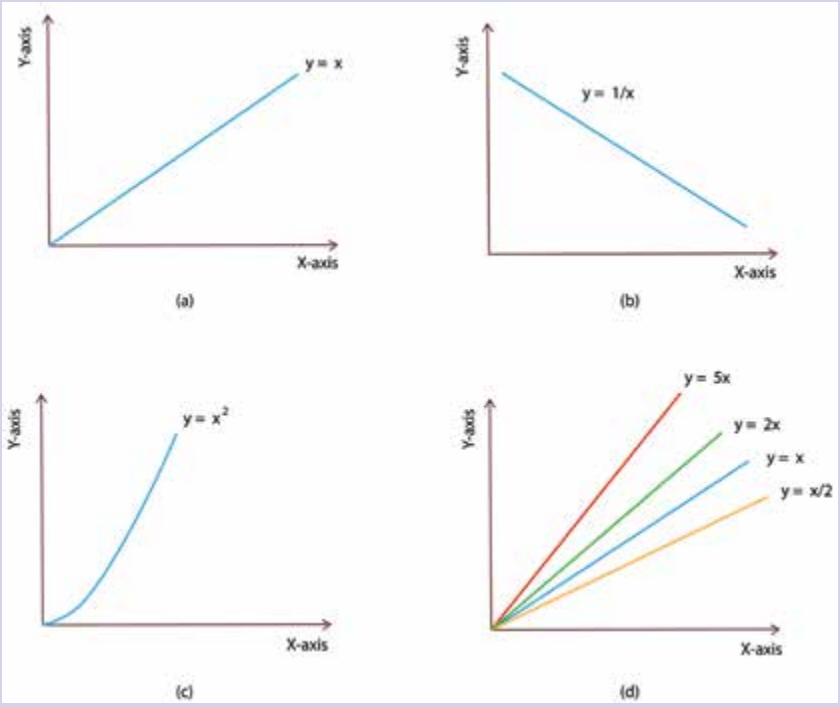

चित्र-5 : रैखिक सम्बन्ध की पहचान करना। **(अ)** यह आलेख लम्बवत और क्षैतिज अक्षों पर राशियों के बीच एक धनात्मक रैखिक सह-सम्बन्ध दिखाता है। **(ब)** यह आलेख लम्बवत और क्षैतिज अक्षों पर राशियों के बीच एक ऋणात्मक रैखिक सह-सम्बन्ध दिखाता है। **(स)** यह आलेख एक अरैखिक सम्बन्ध दिखाता है जहाँ लम्बवत अक्ष वाली राशि, क्षैतिज अक्ष वाली राशि की तुलना में ज़्यादा तेज़ी-से बदलती है। **(द)** धनात्मक रैखिक सह-सम्बन्ध के चार उदाहरण, क्रमशः 5, 2, 1 और 0.5 के झुकाव।

हबल और ह्यूमेसन ने इस रैखिक सम्बन्ध को एक गणितीय व्यंजक के रूप में लिखकर औपचारिक रूप दिया :

$$v = H \times d$$

जहाँ, v हमारे सापेक्ष किसी भी आकाशगंगा का वेग है, और d उस आकाशगंगा से दूरी है। ये दो राशियाँ, एक नियतांक द्वारा एक-दूसरे से जुड़ती हैं। इस नियतांक को H के चिह्न द्वारा निरूपित किया जाता है। खगोलविज्ञानियों ने इस नियतांक को हबल नियतांक कहना शुरू कर दिया। इसके मान को, हबल के आलेखों पर वेग और दूरी के बीच रैखिक झुकाव की ढाल की गणना करके हासिल किया जा सकता है।

जैसा कि हमें पता चलता है, हबल का नियतांक कोई मामूली संख्या नहीं है। 90 सालों से भी अधिक समय से खगोलविज्ञानी इसका ठीक-ठीक मान मापने की कोशिश में लगे हुए हैं क्योंकि इससे हमें ब्रह्माण्ड के बारे में बहुत महत्त्वपूर्ण जानकारी मिल सकती है। इस पर हम, 'ब्रह्माण्ड की उम्र' नामक खण्ड में वापस आएँगे।

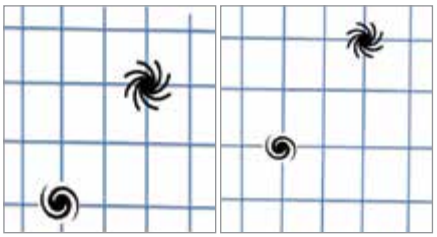

चित्र-6 : अन्तरिक्ष का निरन्तर होता विस्तार

ब्रह्माण्ड के निरन्तर हो रहे विस्तार को समझना

हबल के पथ-प्रदर्शक प्रेक्षण, जैसे दिखते हैं यदि वैसे ही मान लिए जाएँ तो हमारे ब्रह्माण्ड के बारे में व्यापक भ्रान्ति फैल सकती है। आकाशगंगाओं के वर्णक्रम यह दिखाते हैं कि वे सभी हमसे दूर जा रही हैं। क्या इसका मतलब यह हुआ कि हम इस लगातार चल रहे विस्तार के केन्द्र में हैं? सहज समझ से, हम "हाँ" कह सकते हैं, लेकिन ऐसी धारणा मनुष्य की एक पुरानी नादानी की याद दिला देती है।

इतिहास में ऐसा एक काल था, जब सर्वाधिक ज्ञानी लोग यह मानते थे कि पृथ्वी ब्रह्माण्ड का केन्द्र है। अब पीछे देखने पर, यह एक बेतुकी धारणा प्रतीत हो सकती है। पर इस बात का एहसास करना, कि यह एक बेतुकी धारणा थी, आसान नहीं रहा है, क्योंकि पृथ्वी हमें स्थिर प्रतीत होती है, जबकि ऐसा लगता है कि सूर्य, चन्द्रमा और सभी तारे पृथ्वी के चारों ओर घूम रहे हैं। वर्षों के प्रेक्षण और बहुत से सोच-विचार के बाद हम इस तथ्य पर पहुँचे कि अन्य ग्रहों के साथ दरअसल पृथ्वी सूर्य का चक्कर लगा रही है। और यह तथ्य तो बहुत बाद में खोजा गया कि सूर्य भी स्थिर नहीं है। सूर्य हमारी आकाशगंगा के एक कोने में है, और अरबों अन्य तारों के साथ आकाशगंगा के केन्द्र का चक्कर लगाता है।

इतिहास ऐसे उदाहरणों से भरा पड़ा है जब विज्ञान ने हमें एहसास कराया है कि ब्रह्माण्ड में हमारा महत्त्व उतना है नहीं, जितना हम माने

बैठे हैं। लिहाजा, अधिकांश खगोलविज्ञानी हबल के परिणामों की व्याख्या करने में ज़्यादा ही सचेत रहे। यह निष्कर्ष निकालना कि मिल्की-वे आकाशगंगा, ब्रह्माण्ड के निरन्तर हो रहे विस्तार का केन्द्र है, पुरानी गलती को दोहराना होगा। इसकी बजाय, खगोलविज्ञानियों ने एक नया और मौलिक विचार सामने रखा कि हम ब्रह्माण्ड को चाहे जिस आकाशगंगा से देखें, अन्य आकाशगंगाएँ हमसे दूर भागती नज़र आएँगी। तो अगर किसी अन्य आकाशगंगा के किसी अजनबी खगोलविज्ञानी को वही प्रयोग करना होता जो हबल और ह्यूमेसन ने किया था, तो वह भी इसी नतीज़े पर पहुँचता की कि ब्रह्माण्ड का विस्तार जारी है। दूसरे शब्दों में, ब्रह्माण्ड में कोई तरजीह पाए स्थान नहीं हैं। ब्रह्माण्ड, विशाल भौतिक पैमानों पर एक-सा ही दिखाई देगा, भले ही हम उसे कहीं से भी देखें। तब से यह धारणा, जिसे ब्रह्माण्ड की **समरूपता** कहा जाता है, ब्रह्माण्डविज्ञान का एक केन्द्रीय विचार बन गया है।

हम सिर्फ़ यह निष्कर्ष निकालकर ही ब्रह्माण्ड की समरूपता को समझा सकते हैं कि ख़ुद अन्तरिक्ष का ही विस्तार हो रहा है। भले ही यह कितना भी अविश्वसनीय लगे, खगोलविज्ञानी ब्रह्माण्ड के लगातार चल रहे विस्तार को इसी तरह समझते हैं। अन्तरिक्ष का निरन्तर हो रहा विस्तार तो ख़ैर एक ऐसा सनसनीखेज विचार है जो इस लेख के दायरे के बाहर है, लेकिन हम यहाँ दी

बॉक्स-4 : बिग बैंग!

विडम्बनापूर्ण बात है, कि 'बिग बैंग' शब्द खगोलविज्ञानी फ्रेड हॉयल द्वारा गढ़ा गया था। उन्हें यह विचार बहुत ही बेतुका लगता था, कि पूरा ब्रह्माण्ड एक अतिसूक्ष्म बिन्दु में से उभरना शुरू हुआ था। हालाँकि हॉयल अपने जीवन के अन्त तक बिग बैंग सिद्धान्त के कड़े आलोचक रहे, पर जो नाम उन्होंने इस सिद्धान्त को दिया था वह इतना ज़बरदस्त था कि उसे अनदेखा करने का तो सवाल ही नहीं था!

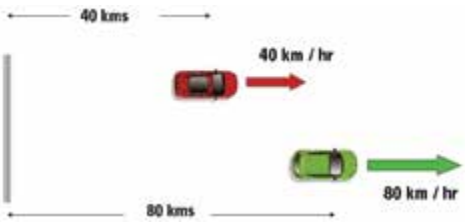

चित्र-7 : दो कारों के बीच की दौड़ कब शुरू हुई ?

जा रही उपमा के द्वारा इसे अवधारणात्मक रूप से समझ सकते हैं। जिस त्रिआयामी ब्रह्माण्ड में हम रहते हैं उसे द्विआयामी जाली की व्यवस्था द्वारा निरूपित किए जाने की कल्पना करें (**चित्र-6** देखें)। शुरुआत में, जहाँ दोनों आकाशगंगाएँ एक-दूसरे के नज़दीक रहेंगी (**चित्र-6 अ** देखें), कुछ समय बाद, हमारा काल्पनिक ब्रह्माण्ड अलग दिखाई देगा (**चित्र-6 ब** देखें)। हर एक आकाशगंगा से देखने पर, ऐसा लगेगा जैसे दूसरी आकाशगंगा उससे दूर चली गई है। ब्रह्माण्ड का विस्तार हो गया है। और फिर भी, अगर हम यह जानना चाहें कि इस विस्तार का केन्द्र कौन-सा है, तो हम किसी भी स्थान विशेष की ओर इशारा नहीं कर पाएँगे। आकाशगंगाओं का एक-दूसरे से दूर जाना उनके बीच की जगह के विस्तार होने

चित्र-8 : जॉर्ज गैमो और राल्फ आल्फर, जिन्होंने रॉबर्ट हरमैन के साथ मिलकर बिग बैंग सिद्धान्त को विकसित किया था। गैमो का जन्म सोवियत संघ में हुआ था। यूरोप में कुछ समय बिताने के बाद वे 1930 के दशक में अमरीका चले गए थे। वे बाद में अमरीका के जॉर्ज वॉशिंगटन विश्वविद्यालय की फैकल्टी के सदस्य हो गए थे। अपने विद्यार्थी राल्फ आल्फर और सहकर्मी, रॉबर्ट हरमैन के साथ गैमो ने बिग बैंग सिद्धान्त पर बहुत काम किया, और उन्होंने खगोलीय पार्श्व सूक्ष्मतरंगी विकिरण के अस्तित्व की भविष्यवाणी भी की थी।

का परिणाम है, न कि खुद आकाशगंगाओं के अन्तरिक्ष में सफ़र करने के कारण।।

उत्पत्ति के प्रमाण के रूप में यह विस्तार

ब्रह्माण्ड का लगातार होता विस्तार, ब्रह्माण्डविज्ञान की एक ऐतिहासिक खोज थी क्योंकि यह इस दिशा में इशारा करती है कि हमारे ब्रह्माण्ड की कभी उत्पत्ति भी हुई थी। हमारे प्रेक्षण हमें बताते हैं, कि वर्तमान में आकाशगंगाएँ एक-दूसरे से दूर जा रही हैं। तब क्या होगा अगर समय को उलटा घुमा दें? ज़ाहिर है, हमें अन्तरिक्ष सिकुड़ता हुआ दिखेगा, आकाशगंगाएँ एक-दूसरे के पास आती हुई दिखाई देंगी, और अन्त में हर चीज़, अनन्त घनत्व वाले किसी एक बिन्दु में सिमट जाएगी और इसमें ब्रह्माण्ड की पूरी द्रव्यमान ऊर्जा समाहित हो जाएगी। यह धारणा कि अतिसूक्ष्म अस्तित्व, जिससे पदार्थ, ऊर्जा, आकाश और काल से बना पूरा ब्रह्माण्ड उभरा, सबसे पहले बेल्जियम के खगोल भौतिकविज्ञानी जॉर्ज लेमेत्रे ने प्रतिपादित की थी। उस आदि अवस्था से ब्रह्माण्ड किसी-न-किसी कारण से फैलना शुरू हुआ होगा। खगोलविज्ञानी ब्रह्माण्ड के फैलने की इस शुरुआत को "बिग बैंग" कहते हैं जो यह दिखाता है कि फैलने की शुरुआत किसी विस्फोट से हुई हो सकती है।

अब ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के बारे में बात करने के लिए बिग बैंग शब्द का उपयोग लगभग सर्वमान्य रूप से होता है। लेकिन सच्चाई तो यही है, कि किसी को सही-सही नहीं मालूम कि ब्रह्माण्ड का फैलना किस घटना से शुरू हुआ, या क्या यह वाक़ई किसी विस्फोट से ही शुरू हुआ था। प्रेक्षण के जो साधन हमारे पास उपलब्ध हैं, और भौतिकी के नियमों की जो हमारी समझ है उनके द्वारा ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के क़रीब के कालखण्डों की पड़ताल करना तो बहुत ही कठिन है। लेकिन, जो बात निश्चित है वह यह, कि वर्तमान में तो ब्रह्माण्ड आकार में

बढ़ रहा है, और इसलिए निश्चित ही अतीत में यह इससे छोटा रहा होगा।

ब्रह्माण्ड की उम्र

अगर ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति हुई थी, तो फिर यही सवाल उठता है कि ब्रह्माण्ड की उम्र कितनी है। एक बार फिर, ब्रह्माण्ड के लगातार चल रहे विस्तार के प्रेक्षणों से हमें उत्तर मिल जाता है। किस तरह, इसे समझने के लिए नीचे दी गई उपमा पर विचार करें :

कल्पना करें कि आप एक कार रेस (दौड़) को देखने के लिए किसी रेसकोर्स की ओर भाग रहे हैं। व्यस्त दिन है और भारी ट्रैफिक में से किसी तरह निकलकर आप आख़िरकार रेसकोर्स पहुँचते हैं, और पता चलता है कि रेस शुरू हो चुकी है। रेस में दो टीमें भाग ले रही हैं, और आप दर्शकदीर्घा में अपना स्थान ग्रहण कर लेते हैं। आप देखते हैं कि एक कार शुरुआत करने की रेखा (स्टार्ट लाइन) से 80 किलोमीटर आगे निकल चुकी है, जबकि दूसरी कार काफ़ी पीछे, 40 किलोमीटर पर है। प्रदर्शन पट्ट (डिस्प्ले बोर्ड) दोनों कारों की चालों को क्रमशः 80 किलोमीटर/घण्टा और 40 किलोमीटर/घण्टा दिखाता है (**चित्र-7** देखें)। आपको यह समझने में बहुत देर नहीं लगेगी कि यह रेस क़रीब एक घण्टा पहले शुरू हुई होगी। लेकिन, इस निष्कर्ष पर पहुँचने के लिए, आपको एक महत्त्वपूर्ण मान्यता करना पड़ेगी कि दोनों कारें स्थिर चाल से चल रही हैं, किसी भी समय त्वरण या अव-त्वरण किए बग़ैर।

आइए इस उपमा को आकाशगंगाओं पर लागू करें। हबल ने पाया कि एक आकाशगंगा जिसका सापेक्ष वेग 1400 किलोमीटर/सैकेण्ड था, वह हमसे 60 लाख प्रकाश वर्षों की दूरी पर थी, जबकि एक अन्य आकाशगंगा जिसका सापेक्ष वेग इससे आधा था, वह इससे आधी दूरी ही हमसे दूर गई थी। इसलिए, हम गणना कर सकते हैं कि बिग बैंग कब हुआ होगा :

इससे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि हबल

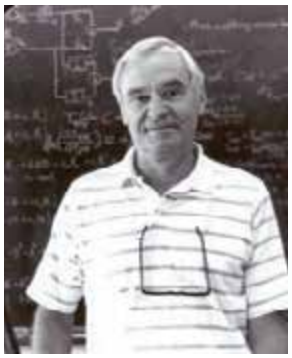

डेविड विलकिंसन
(1935 - 2002

रॉबर्ट डिक
(1916 - 1997)

जिम पीबल्स
(b. 1935)

चित्र-9 : प्रिंसटन विश्वविद्यालय के रॉबर्ट डिक, डेविड विलकिंसन और जिम पीबल्स। इन खगोलज्ञों ने, जॉर्ज गैमो और उनके समूह द्वारा पूर्वानुमानित खगोलीय पार्श्व सूक्ष्मतरंगी विकिरण का पता लगाने के लिए एक प्रायोगिक अभियान शुरू किया।

ब्रह्माण्ड की आयु =

$$\frac{\text{किसी भी आकाशगंगा की हमसे दूरी}}{\text{हमारे सापेक्ष उस आकाशगंगा का वेग}} = \frac{1}{H}$$

के नियतांक के मान की गणना करना इतना ज़रूरी क्यों है। इससे हमें ब्रह्माण्ड की उम्र का आकलन करने का एक माध्यम मिल जाता है। निश्चित ही, ऐसा करके हम यह महत्त्वपूर्ण मान्यता करते हैं कि हमेशा से ही उसी दर से ब्रह्माण्ड का विस्तार होता रहा है जो दर हम आज माप रहे हैं। वर्तमान में आकाशगंगाओं के वेग के सर्वश्रेष्ठ आकलन यह दर्शाते हैं कि ब्रह्माण्ड की उम्र लगभग 1400 करोड़ साल है। यानी बिग बैंग इतने पहले हुआ होगा।

उत्पत्ति हुई या नहीं

बीसवीं सदी के मध्य तक, ब्रह्माण्ड के बारे में दो प्रतिस्पर्धी सिद्धान्त थे। खगोल भौतिकविज्ञानियों हरमन बॉण्डी, थॉमस गोल्ड और फ्रेड हॉयल द्वारा प्रस्तुत स्थाई अवस्था सिद्धान्त में यह कहा गया कि आकाश और काल में ब्रह्माण्ड अनन्त है। इस सिद्धान्त के अनुसार, ब्रह्माण्ड हमेशा से ही था, और इसलिए, किसी उत्पत्ति की बात करना व्यर्थ था। इस सिद्धान्त का विकल्प था बिग बैंग सिद्धान्त जो जॉर्ज गैमो, राल्फ आल्फर और रॉबर्ट हरमैन द्वारा विकसित किया गया था (**चित्र-8** देखें), और जो ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति की धारणा का समर्थन करता था।

इस खोज ने कि ब्रह्माण्ड निरन्तर फैल रहा है, स्थाई अवस्था सिद्धान्त के सामने गम्भीर चुनौती पेश की। अगर ब्रह्माण्ड का विस्तार हो रहा है, और अगर ऐसा बहुत लम्बे काल से हो रहा है, तो आकाशगंगाओं को एक-दूसरे से इतना दूर चले जाना चाहिए था कि उनमें से कोई भी रात के आकाश में हमें दिखाई नहीं देनी चाहिए थी। लेकिन बहुत

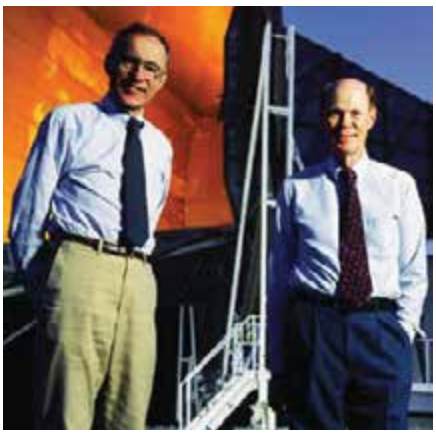

चित्र-10 : आर्नो पेनजियास और रॉबर्ट विल्सन। ये लोग उस 20 फीट लम्बे, सींग के आकार के ऐंटीना और रिसीवर तंत्र के आगे खड़े हैं जिनके माध्यम से इन्होंने खगोलीय पार्श्व सूक्ष्मतरंगी विकिरण (सीएमबीआर) को खोजा था।

स्पष्ट है, कि ऐसा तो नहीं हुआ है। हम अपने दूरदर्शकों का मुँह किसी भी दिशा में रखें हमें कई अन्य आकाशगंगाएँ दिखाई दे ही जाती हैं।

उन लोगों ने, जिन्होंने स्थायी अवस्था सिद्धान्त का समर्थन किया था, यह कहकर इस लज्जाजनक विरोधाभास को सही करने की कोशिश की, कि ब्रह्माण्ड के फैलते जाने के साथ-ही-साथ पदार्थ भी सहज तरीक़े से ख़ाली जगह से बन रहा था। यह कोई समस्या-मुक्त विचार नहीं है। उदाहरण के लिए, इसने पदार्थ संरक्षण के नियम का उल्लंघन किया था, जो यह कहता है कि जब भी पदार्थ किसी ऊर्जा क्षेत्र से सहज रूप से निर्मित होता है, तो उसी मात्रा में प्रति-पदार्थ (ऐंटी-मैटर) भी पैदा होता है। हक़ीक़त में, हम इस ब्रह्माण्ड में पदार्थ की तुलना में बहुत कम प्रति-पदार्थ देखते हैं। इसके अलावा, ब्रह्माण्ड के फैलने से पैदा होने वाली ज़रूरत को पूरा करने के लिए जिस दर पर पदार्थ का सृजन होना पड़ेगा, वह दर इतनी कम है (एक लाख करोड़ सालों में एक हाइड्रोजन परमाणु) कि इस घटना को सीधे होते हुए देखना तो बहुत कठिन होगा।

विज्ञान में, जो धारणाएँ प्रायोगिक या प्रेक्षणात्मक रूप में सिद्ध नहीं की जा पातीं, उनका जीवन बहुत छोटा होता है। ऐसी धारणाओं को वैज्ञानिक सिद्धान्त नहीं कहा जा सकता। इसके बजाय उन्हें **परिकल्पनाएँ** कहा जाता है, जो अगर सीधी भाषा में कहा जाए तो शिक्षित अन्दाज़ा होती हैं। हॉयल की पदार्थ के सहज निर्माण की परिकल्पना को वृहत वैज्ञानिक समुदाय में बहुत मामूली उत्सुकता से लिया गया। और निरन्तर हो रहे प्रेक्षणों के माध्यम से ब्रह्माण्ड के फैलने के तथ्य के पुख़्ता रूप से स्थापित हो जाने से स्थाई अवस्था सिद्धान्त की भविष्य की सम्भावनाएँ निराशाजनक लगने लगीं।

किसी भी वैज्ञानिक प्रतिरूप की ताक़त ऐसा पूर्वानुमान करने में है जिसे प्रेक्षणात्मक रूप से जाँचा-परखा और सत्यापित किया जा सके। विज्ञान के आधुनिक इतिहास की सबसे सनसनीखेज कहानियों में से एक में, बिग बैंग सिद्धान्त ने आगे जाकर यही किया, और दूसरी बार स्थाई अवस्था सिद्धान्त पर विजय हासिल की। यह पूर्वानुमान 1948 में, जॉर्ज गैमो और उनके सहयोगियों ने बिग बैंग सिद्धान्त पर प्रकाशित एक वैज्ञानिक पत्र में किया था। और यह सिद्धान्त लगभग 20 साल बाद, प्रेक्षणात्मक रूप से सही साबित हुआ, और दिलचस्प बात यह है कि ऐसा अकस्मात हुआ।

ब्रह्माण्ड के सबसे पुराने प्रकाश की खोज

बिग बैंग सिद्धान्त के अनुसार, अपने बनने के कुछ पलों बाद की स्थिति में, ब्रह्माण्ड अत्यन्त ऊर्जावान फोटॉनों और मूलभूत कणों का एक बेहद सघन समुद्र जैसा था। इस समुद्र के फोटॉन, उन फोटॉनों से अरबों गुना ज़्यादा ऊर्जावान थे जिन्हें हमारी आँखें प्रकाश के रूप में देखती हैं। प्रारम्भिक ब्रह्माण्ड भी फैल रहा था। भौतिकी हमें बताती है कि विस्तार होना एक प्रकार का कार्य है। कोई भी भौतिक तंत्र जो बाक़ी हर चीज़ से पृथक हो, तभी काम कर सकता है जब वह अपनी ऊर्जा, जिसे **आन्तरिक ऊर्जा** कहा जाता है, को ख़र्च करने के लिए तैयार हो। यह तथ्य, भौतिकी की ही एक शाखा, ऊष्मागतिकी (थर्मोडाइनैमिक्स) का बुनियादी सिद्धान्त है। हमारा ब्रह्माण्ड भी एक विलगित तंत्र (आइसोलेटेड सिस्टम) है। जितना हम जानते हैं, ब्रह्माण्ड के बाहर ऐसा कुछ भी नहीं है जिसके साथ वह परस्पर क्रिया कर सके, या उससे ऊर्जा ले सके। यदि उसे कोई काम करना हो, जैसे फैलना तथा और बड़ा होता जाना, तो उसे अपनी आन्तरिक ऊर्जा का इस्तेमाल ही करना पड़ेगा। इसका मतलब यह हुआ कि फोटॉनों को - जिनसे ब्रह्माण्ड अपने जन्म के एकदम बाद भरा हुआ था - अपनी ऊर्जा खोना पड़ेगी।

विचार की इस शृंखला का अनुसरण करते हुए जॉर्ज गैमो और उनके सहयोगियों ने यह पूर्वानुमान लगाया कि अगर बिग बैंग एक सच्चाई है तो उसके अस्तित्व के बिलकुल प्रारम्भिक क्षणों के विकिरण (यानी फोटॉन) का आज भी पता लगाया जा सकना चाहिए। लेकिन, बिग बैंग के बाद 1400 करोड़ सालों तक ब्रह्माण्ड का जो विस्तार हुआ, उस दौरान इस विकिरण की ऊर्जा काफ़ी हद तक कमज़ोर पड़ गई होगी। गैमो और उनके समूह का विचार था कि यह विकिरण सम्भवतया सूक्ष्मतरंग (माइक्रोवेव) फोटॉनों के रूप में रहा होगा, जो उस प्रकाश से हज़ार गुना कम ऊर्जावान रहते हैं जिसे हमारी आँखें देख पाती हैं। यदि यह विकिरण था तो यह पूरे ब्रह्माण्ड में फैला रहता, और इसलिए आकाश की किसी भी दिशा से इसका पता लगाया जा सकता। गैमो और उनके समूह ने इसे **खगोलीय पार्श्व सूक्ष्मतरंगी विकिरण**, या संक्षेप में **सीएमबीआर** कहा।

सीएमबीआर का पता लगाने की सम्भावना से उत्साहित होकर प्रिंसटन विश्वविद्यालय के शोधकर्ताओं के एक समूह - जिसका नेतृत्व रॉबर्ट डिक कर रहे थे - ने एक ऐसा रेडियो ऐंटीना रिसीवर (संग्राही) तंत्र बनाना शुरू किया जो बहुत निम्न ऊर्जाओं वाले फोटॉनों को भी पकड़ने के लिए पर्याप्त संवेदनशील था। यह ऐंटीना एक बाल्टी की तरह व्यवहार करता और इसे जिस भी दिशा में मोड़ दिया जाता, यह उस दिशा से आने वाले किसी भी विकिरण (फोटॉनों) का संग्रह कर लेता। और रिसीवर, जिसे सामान्य तौर पर विभिन्न ऊर्जाओं के अनुकूल बैठाया जा सकता है, ऐंटीना द्वारा संग्रहित संकेतों को दर्ज करता है। इसी के साथ, डिक और उनके साथियों, डेविड विलकिंसन और जिम पीबल्स (**चित्र-9** देखें) ने विभिन्न ऊर्जाओं पर सीएमबीआर

से प्रत्याशित तीव्रता के स्तर का आकलन करने के लिए आवश्यक लम्बी और कठोर गणनाएँ करना शुरू कर दीं। जब डिक और उनका समूह गैमो के पूर्वानुमानों का परीक्षण करने की तैयारियाँ कर रहे थे, तभी प्रिंसटन के पास के ही एक स्थान के दो युवा रेडियो इंजीनियरों ने सीएमबीआर को अकस्मात ही खोज लिया।

1960 के दशक में, इलैक्ट्रॉनिक्स अनुसंधान और उत्पाद विकास की अमरीकी कम्पनी, बॅल लैब्स ने एक 20 फीट का रेडियो ऐंटीना बना दिया था जिसका काम था रेडियो संकेतों को संग्रहित करना और बढ़ाना, और फिर उन्हें लम्बी दूरियों तक भेज देना। पर कुछ सालों में, नए उपग्रहों के प्रक्षेपण के कारण रेडियो ऐंटीना प्रणाली अप्रचलित हो गई और उसे शोध के लिए दे दिया गया। दो रेडियो खगोलज्ञों, आर्नो पेनजियास और रॉबर्ट विल्सन ने रेडियो फोटॉन ऊर्जाओं पर मिल्की-वे आकाशगंगा और उसके पास की कई अन्य आकाशगंगाओं की चमक को मापने के लिए बॅल लैब्स के ऐंटीना का प्रयोग करना शुरू कर दिया (**चित्र-10** देखें)। पेनजियास और विल्सन, सीएमबीआर के बारे में गैमो के पूर्वानुमान से, और डिक की प्रयोगशाला में सीएमबीआर को पकड़ने के लिए हो रहे प्रयासों से अनजान थे।

जब पेनजियास और विल्सन ने अपने प्रेक्षणों को दर्ज करना शुरू किया, तो उनके सामने एक समस्या खड़ी हुई। उनका ऐंटीना माइक्रोवेव फोटॉनों के रूप में एक स्थिर, पर हल्के शोर के स्रोत को बार-बार पकड़ रहा था, जिससे उनकी मापें बिगड़ रही थीं। यह शोर लगातार हो रहा था, और सभी दिशाओं से आता प्रतीत हो रहा था। और वे ऐंटीना को चाहे जिस दिशा में मोड़ लें यह शोर जाने का नाम ही नहीं ले रहा था। यह मानते हुए कि यह शोर उनके उपकरणों के इलैक्ट्रॉनिक कलपुर्जों में आई कुछ समस्या के कारण हो रहा होगा, पेनजियास और विल्सन ने अपने ऐंटीना तंत्र को सुधारने के हर सम्भव प्रयास किए। उन्हें बहुत खीझ और झुँझलाहट भी होने लगी क्योंकि उनकी तमाम कोशिशों के बाद भी वह "शोर" जारी रहा। लगभग एक साल निकल गया और उन्हें इस शोर को समझा पाने का, या उसे दूर करने का कोई उपाय नहीं मिल पाया।

फिर एक दिन, आर्नो पेनजियास को अपने किसी साथी से गैमो के काम के बारे में पता चला। इसके थोड़े समय बाद ही, उनका और विल्सन का प्रिंसटन में रॉबर्ट डिक के समूह से सम्पर्क हुआ। डिक और उनके साथियों को यह पहचानने में ज़्यादा देर नहीं लगी कि पेनजियास और विल्सन ने अकस्मात ही बिग बैंग प्रतिरूप द्वारा पूर्वानुमानित खगोलीय पार्श्व सूक्ष्मतरंगी विकिरण को खोज लिया था। इन विकिरणों के ठीक वही गुण थे जिनका पूर्वानुमान बिग बैंग प्रतिरूप में लगाया गया था, और इस तरह यह खोज बिग बैंग सिद्धान्त की निर्णायक विजय का कारण रही। आर्नो पेनजियास और रॉबर्ट विल्सन ने सीएमबीआर की खोज के लिए भौतिकी का नोबेल पुरस्कार भी जीता।

सीएमबीआर, ब्रह्माण्ड के सबसे पुराने फोटॉनों - बिग बैंग के जीवाश्म अवशेष - के प्रतीक हैं। अन्तरिक्ष के हर घन सेंटीमीटर में ऐसे सैकड़ों फोटॉन हैं, और उनमें से हर एक फोटॉन लगभग 1300 करोड़ साल पुराना है। हालाँकि हम पर लगातार सीएमबीआर की "बमबारी" चल रही है, फिर भी, उनकी अत्यन्त निम्न ऊर्जाओं के कारण हमें उनकी उपस्थिति का एहसास नहीं होता (जिस तरह हम सौर फोटॉनों से निकलने वाली ऊष्मा को महसूस करते हैं)। लेकिन फिर भी बिग बैंग की इन "फुसफुसाहटों" में प्रारम्भिक ब्रह्माण्ड की बहुत मूल्यवान जानकारियाँ निहित होती हैं, कि वे कौन-से कारण थे जिन्होंने उन आकाशगंगाओं, आकाशगंगा पुंजों, और इसी तरह की अन्य बड़ी संरचनाओं के निर्माण के बीज बोए जिन्हें हम आज के ब्रह्माण्ड में देखते हैं। अपने महत्त्व के कारण, हम अभी भी सीएमबीआर को लेकर प्रेक्षण करते जा रहे हैं, ज़मीन से भी और ऊँचाई पर उड़ते गुब्बारों के प्रयोगों से भी और उपग्रहों से भी।

कहानी अभी पूरी नहीं हुई है

ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति हुई थी, इसके बारे में वैज्ञानिक जागरूकता बस एक सदी पुरानी ही है। ब्रह्माण्ड के लगातार हो रहे विस्तार की खोज से लेकर खगोलीय पार्श्व सूक्ष्मतरंगी विकिरण की खोज तक, बिग बैंग सिद्धान्त कई प्रेक्षणों पर ख़रा उतरा है। फिर भी, भौतिक ब्रह्माण्ड की हमारी समझ में कई बड़ी दरारें हैं। हम वाक़ई में नहीं जानते हैं कि बिग बैंग किस वजह से घटित हुआ होगा या कि एकदम शुरुआत में ब्रह्माण्ड की भौतिक अवस्था क्या थी। बिग बैंग प्रतिरूप का एक संस्करण कहता है कि एक सैकेण्ड के बहुत छोटे-से अंश में ब्रह्माण्ड का बहुत तेज़ विस्तार हुआ, जिसे इनफ्लेशन (स्फीति या फुलाव) कहा जाता है। वैज्ञानिकों ने खगोलीय पार्श्व सूक्ष्मतरंगी विकिरण द्वारा खड़ी की जाने वाली कुछ समस्याओं को समझाने के लिए स्फीति वाले इस प्रतिरूप का सहारा लिया। पर क्या इतनी तेज़ वृद्धि का दौर वाक़ई घटित हुआ था, और अगर हुआ था तो किस वजह से हुआ था, यह स्पष्ट नहीं है।

इसके अलावा कुछ और बड़े सवाल भी हैं। पिछले तीन दशकों के ब्रह्माण्डविज्ञान ने पहले अज्ञात रहे दो घटकों को जगत के सामने रखा है - स्याह पदार्थ (डार्क मैटर) और स्याह ऊर्जा (डार्क ऐनर्जी)। ये दो संघटक मिलकर वर्तमान ब्रह्माण्ड के ऊर्जा घनत्व का लगभग 96% हिस्सा बनाते हैं। इसकी तुलना में, साधारण पदार्थ, जिससे आप, मैं और हमारे आस-पास की सभी चीज़ें - ग्रह, हमारी आकाशगंगा के अरबों तारे, हमारे ब्रह्माण्ड की अरबों-खरबों आकाशगंगाएँ, खगोलीय पार्श्व सूक्ष्मतरंगी फोटॉन - बने हैं, ज्ञात ब्रह्माण्ड का सिर्फ़ 4% हिस्सा बनाता है। विज्ञान को इस बात का कोई आभास

नहीं है कि ये स्याह पदार्थ और स्याह ऊर्जा क्या हैं, और न इस बात का आभास है कि इनकी उत्पत्ति दरअसल हुई कैसे थी। पर इनकी खोज के साथ ब्रह्माण्ड के बारे में हमारी धारणा इस ढंग से बदली है जिसके बारे में पहले सोचा भी नहीं जा सकता था। इससे हमें यह एहसास हुआ है कि इतने वर्षों से हम ब्रह्माण्ड की जो पड़ताल कर रहे थे, उसमें हम मानो बस उसकी सतह को ही खरोंच रहे थे। जितना हमें दिखाई देता है, ब्रह्माण्ड में उससे जानने-समझने के लिए बहुत अधिक है। वैज्ञानिक आशा करते हैं कि 21वीं सदी का खगोलविज्ञान इन बड़े अज्ञात रहस्यों को खोलेगा और अनुत्तरित सवालों के जवाब प्रदान करेगा। लेकिन वे जवाब, बिग बैंग सिद्धान्त के लिए कौन-सी नई चुनौतियाँ खड़ी करें, यह देखा जाना अभी बाक़ी है।

Note: Credits for the image used in the background of the article title: Big Bang. Geralt, Pixabay. URL: https://pixabay.com/en/big-bang-explosion-pop-fireball-422305/. License: Public Domain.

आनन्द नारायणन, भारतीय अन्तरिक्ष विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संस्थान में खगोलभौतिकी पढ़ाते हैं। उनका शोध इस विषय पर है कि आकाशगंगाओं के बाहर, विशाल पैमाने पर, बैरियॉनिक पदार्थ का वितरण किस तरह होता है। वे नियमित रूप से खगोलशास्त्र से जुड़ी शैक्षणिक और सार्वजनिक पहुँच की गतिविधियों में योगदान करते हैं। उन्हें भ्रमण पर जाना और दक्षिण भारत के सांस्कृतिक इतिहास की पड़ताल करना अच्छा लगता है। **अनुवाद :** भरत त्रिपाठी

तत्वों की उत्पत्ति

श्रीनिवासन कृष्णन

यह लेख तारों के भीतर घटित होने वाली प्रक्रिया के रूप में रासायनिक तत्वों की उत्पत्ति की तथा लोगों के लिए इनके क्या मायने हैं, इस बात की, खोजबीन करता है।

यह एक ज़ाहिर तथ्य है, कि जिस दुनिया को हम जानते हैं वह विभिन्न पदार्थों से मिलकर बनी है। इस दुनिया को हम अपनी इन्द्रियों के माध्यम से देखते हैं तथा नए पदार्थों की खोज करने में, और ज्ञात पदार्थों को निरन्तर नए उपयुक्त तरीक़ों से वर्गीकृत करने के लिए निगमन (डिडक्शन) और अनुमान लगाने (जो मुख्यतः वर्तमान प्रौद्योगिकी तथा बौद्धिक संरचनाओं की मज़बूती पर निर्भर करते हैं) की अपनी क्षमताओं का प्रयोग करते हैं। मनुष्य इंजीनियरिंग की अपनी मज़बूत क्षमताओं का जिस तरह प्रदर्शन करते हैं, उसे देखते हुए और प्राचीन काल से भी यह स्पष्ट हो चुका है कि हम वर्तमान पदार्थों के उपयुक्त मिश्रण और आसवन द्वारा नए प्रकार के पदार्थ भी बना सकते हैं। इसके उदाहरण हैं, कोई व्यंजन बनाना, दवाइयों और पेय पदार्थों के मिश्रण बनाना, इमारतों और उपकरणों का निर्माण इत्यादि। निरन्तर, वांछित गुणों वाले जटिल पदार्थ और तंत्र बनाते जाने की अपनी क्षमता पर निश्चित ही यह सवाल युगों से पूछा जाता रहा होगा, "वे बुनियादी पदार्थ कौन-से हैं जिनसे बाक़ी सारे पदार्थ बन जाते हैं?"

विभिन्न सभ्यताओं ने इस सवाल का जवाब देने की कोशिश की है, और यह लगता है कि उन सभी ने 'तत्वों' के अस्तित्व को स्वीकार किया था। तत्वों के बारे में यह माना गया कि जब ब्रह्माण्ड की रचना हुई, तभी तत्वों की भी रचना हुई। तत्वों को ऐसे अनोखे और बुनियादी भवन खण्ड माना जाता रहा है जिनसे बाक़ी सारे ढाँचे बनते हैं। भारतीय और यूनानी लोग यह मानते थे कि संसार पाँच तत्वों से मिलकर बना है आकाश, वायु, जल, अग्नि और पृथ्वी। चीनी लोग मानते थे कि लकड़ी, धातु, पृथ्वी, जल और अग्नि मिलकर दुनिया के सारे पदार्थों को बनाते हैं आदि-आदि।

दूसरी तरफ़, परमाणुओं को तत्वों का अविभाज्य कण माना जाता था। उदाहरण के लिए, छठी सदी ईसा पूर्व में वैशेषिक

दर्शन के प्रवर्तक, कणाद ने माना कि संसार परमाणुओं से बना है, और इनके चार बुनियादी प्रकार थे जो चार तत्वों - पृथ्वी, जल, अग्नि और वायु - के सदृश थे। इन विभिन्न प्रकार के परमाणुओं में से प्रत्येक के अन्य गुण भी निर्धारित किए गए थे, और इस बात के बड़े जटिल नियम थे कि पृथ्वी पर दिखने वाले तमाम पदार्थों को बनाने के लिए इन परमाणुओं को किस तरह आपस में मिलाया जाए। इसी प्रकार, बौद्ध, जैन, इस्लामिक और यूनानी विचारधाराओं में भी परमाणुओं की अवधारणा तत्वों के प्रतिनिधि, और समस्त पदार्थ के मूल के रूप में बनाई गई, लेकिन उनके वर्णनों और बताए गए गुणों में फ़र्क़ था (समग्र व्याख्या के लिए बर्नार्ड पुलमैन[3] की 'द ऐटम इन द हिस्ट्री ऑफ ह्यूमन थॉट' देखें)। लेकिन सभी विचारधाराएँ इस बात पर तो सहमत थीं कि परमाणु शाश्वत, अनश्वर और अविभाज्य थे। इसके अलावा एक और महत्त्वपूर्ण बात उनकी समझ में आई थी कि किसी भी एक प्रकार के सभी परमाणु एक जैसे होते थे।

इससे यह बात सिद्ध हो जाती है कि तत्व और परमाणु प्राचीन दुनिया में एक-दूसरे से बहुत जटिल ढंग से जुड़े हुए थे - और आधुनिक संसार में भी ऐसा ही है। आज, हम स्वाभाविक रूप से पाए जाने वाले 92 तत्वों के बारे में तो जानते ही हैं, इसके अलावा कृत्रिम रूप से कई और तत्व बना सकते हैं जिनके परमाणु क्रमांक 92 से अधिक होंगे। ऐसा इसीलिए सम्भव है क्योंकि परमाणुओं और तत्वों के बीच का सम्बन्ध इतना मज़बूत है कि ऐसी रचना करने का मौक़ा मिलता है। तो, आधुनिक वैज्ञानिक बुद्धिमत्ता के अनुसार स्वाभाविक रूप से पाए जाने वाले इन तत्वों का निर्माण कैसे हुआ? ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति का सर्वाधिक स्वीकृत सिद्धान्त जो कि प्राचीन दुनिया में प्रतिपादित किए गए कुछ सिद्धान्तों से थोड़ा मिलता-जुलता है, उसे बिग बैंग (महा विस्फोट) सिद्धान्त कहा जाता है। ऐसा माना जाता है कि, इस घटना ने, जो कि लगभग 1400 करोड़ साल पहले घटित हुई थी, आदि तत्व हाइड्रोजन (जो एक प्रोटॉन और उसके संगत इलेक्ट्रॉन द्वारा बनता है) की विशाल मात्रा का, और हीलियम की बहुत थोड़ी मात्राओं का, तथा अन्य तत्वों व समस्थानिकों (आइसोटोप) की सांकेतिक मात्रा का सृजन किया था। यह काफ़ी रोचक बात है, इस बात को ध्यान में रखते हुए कि बिग बैंग सिद्धान्त लगभग पूरी तरह से ब्रह्माण्ड के प्रेक्षणों और प्रयोगशाला में किए गए प्रयोगों से निकला था।

चूँकि तत्वों और परमाणुओं के बीच के सम्बन्धों के बारे में बने पुराने सिद्धान्त आधुनिक विज्ञान की कठोरता की छानबीन को झेलने में असमर्थ रहे हैं, इसलिए हम इन सवालों को फिर से नए सिरे

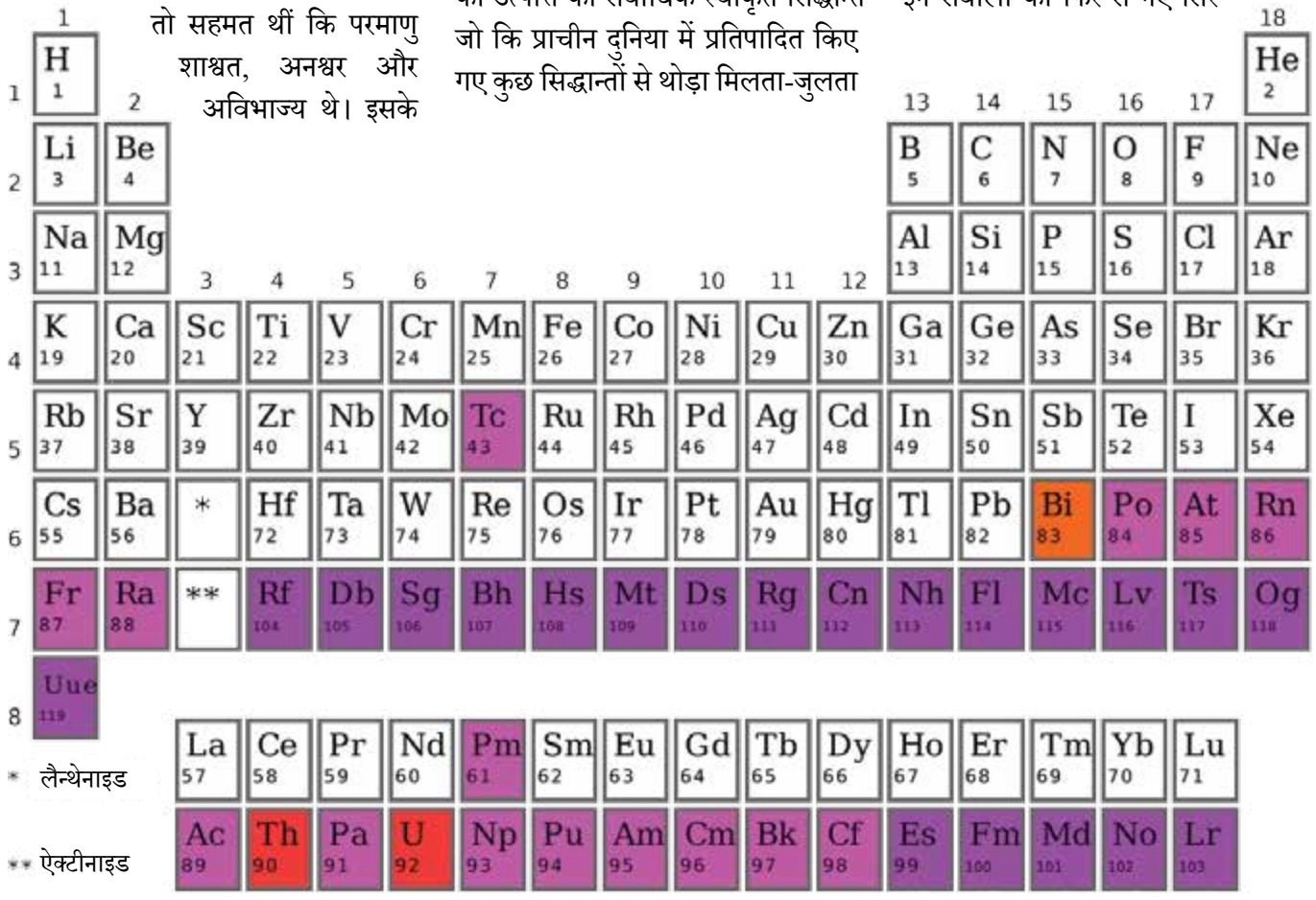

चित्र-1 : सभी ज्ञात तत्वों की आवर्त सारणी।

Credits: Incnis Mrsi, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Periodic_table,_good_SVG.svg. License: CC-BY-SA.

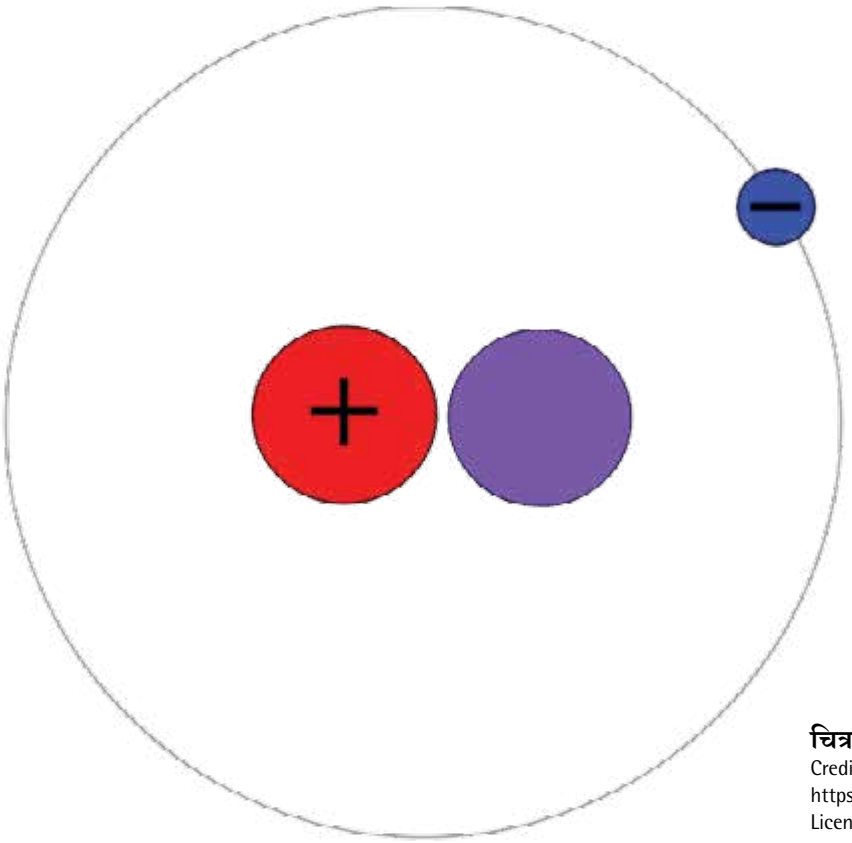

चित्र-2 : ड्यूटेरियम (भारी हाइड्रोजन) परमाणु
Credits: ZYjacklin, Wikimedia Commons. URL: https://en.wikipedia.org/wiki/File:H-2_atom.png. License: Public Domain.

से देखेंगे, 'किसी तत्व को किस तरह परिभाषित किया जाता है?' और, 'परमाणु क्या होते हैं और तत्वों के साथ इनका क्या सम्बन्ध है?' हम तत्वों की उत्पत्ति के बारे में अपनी यात्रा की शुरुआत इनमें से पहले सवाल के साथ करेंगे।

तत्व को परिभाषित करना

ऐतिहासिक रूप से, तत्वों को विभिन्न तरीक़ों से परिभाषित किया जाता रहा है। उदाहरण के लिए, अब 'अप्रचलित' एक परिभाषा कहती है कि, *"तत्व ऐसा पदार्थ होता है जिसे और सरल पदार्थों में अपघटित नहीं किया जा सकता।"* यह सम्भवतया तत्व की पहली उपयोगी परिभाषा थी, क्योंकि इसने प्रायोगिक रूप से एक तत्व और दूसरे तत्व के बीच भेद करने का मौक़ा दिया। यदि किसी पदार्थ को दो-या-दो से अधिक नए तत्वों में विभाजित किया जा सकता, और फिर वे तत्व वापस जुड़कर मूल पदार्थ बना

बॉक्स-1 : प्रायोगिक निगमन: किसी तत्व को तत्व के रूप में जानना। वह कोई यौगिक या मिश्रण क्यों नहीं हो सकता?

अगर आप ग्रेफ़ाइट की दो छड़ों (आप पेंसिल की मोटी छड़ों का भी प्रयोग कर सकते हैं) को एक गिलास नल के पानी में रख दें और फिर इन छड़ों को एक 18 वोल्ट की बैटरी से जोड़ दें, तो आपको दोनों इलेक्ट्रोडों पर बुलबुले निकलते हुए दिखाई देंगे। इन दो इलेक्ट्रोडों पर निकली गैसों को आसानी से परखनलियों में इकट्ठा किया जा सकता है। पाठ्यपुस्तकों और अन्य स्रोतों से अब हम यह जानते हैं कि ये दोनों गैसें तत्व, यानी, हाइड्रोजन और ऑक्सीजन हैं - लेकिन इस बात को हम प्रायोगिक रूप से कैसे सिद्ध करें?

उदाहरण के लिए ऑक्सीजन को लें। चलिए पहले हम यह कल्पना करें कि यह दो-या-दो से अधिक गैसों के मिश्रण से बनी है। यह मानते हुए कि हम गैसों को अलग करने की सभी ज्ञात तकनीकों का प्रयोग कर सकते हैं, हमें इनमें से **कम-से-कम एक** पद्धति द्वारा तो इन गैसों को अलग-अलग प्राप्त करना ही चाहिए। इससे यह प्रमाणित हो जाएगा कि ऑक्सीजन दरअसल गैसों का मिश्रण होती है। लेकिन, वास्तविक दुनिया में, हम सिर्फ़ ऑक्सीजन के विभिन्न समस्थानिकों को ही अलग कर पाए हैं, और वे सभी अपने भौतिक और रासायनिक गुणों में एक-दूसरे से बहुत मिलते-जुलते हैं।

लेकिन, हम यह दलील दे सकते हैं कि ऑक्सीजन को एक-दूसरे से काफ़ी अलग, दो गैसों में पृथक करने में हमारी असमर्थता इसलिए है क्योंकि अभी हमारे पास ऐसा करने की प्रौद्योगिकी उपलब्ध नहीं है। इसलिए हम इस बात की परिकल्पना कर सकते हैं कि ऑक्सीजन के **रासायनिक गुण** ऐसे कई भिन्न-भिन्न गैसीय अवयवों की उपस्थिति को प्रगट कर पाएँगे, जो सभी सम्भवतया भार में एक-दूसरे के बराबर होंगे, और इसी कारण, पृथक करने की हमारी तकनीकों द्वारा उन्हें पहले

अलग नहीं किया जा सका था। इस परिकल्पना को जाँचने के एक तरीक़े में ऑक्सीजन और शुद्ध क्षारीय धातुओं (जैसे सोडियम और पोटेशियम) की ख़ास मात्राओं के बीच रासायनिक अभिक्रियाएँ कराना होगा। हम संक्रमण तत्वों के उपयोग से बचते हैं क्योंकि उनकी ऑक्सीकरण संख्याएँ अलग-अलग हो सकती हैं, और इस वज़ह से एक ही पदार्थ के साथ अभिक्रिया प्राप्त हाइड्रोजन से अभिक्रिया करती है, तो परिणामस्वरूप हमें पानी मिलना चाहिए। और यदि हमें पानी मिलता है, (**और वाकई में हमें पानी मिलता है**), तो यह दिखाता है कि सबसे सरल स्पष्टीकरण यही है कि ऑक्सीजन **गैसों का मिश्रण नहीं होती**। आह! यह तो वाकई में बहुत मेहनत है सिर्फ़ यह दिखाने के लिए कि, कोई अमुक पदार्थ मिश्रण नहीं है!

कर लें, और ऑक्सीजन को उसके अवयवों में विभाजित करने के लिए इन उपकरणों का प्रयोग करने लगें, तो इन अवयवों को तत्व माना जाने लगेगा जब तक कि उन्हें किसी भी ज्ञात रासायनिक माध्यम द्वारा और विभाजित न किया जा सके। अभी तक तो ऐसा कभी नहीं हुआ है, और इसलिए हम यह "जानते हैं" कि ऑक्सीजन एक तत्व है, न कि यौगिक। नीचे दिए गए फ्लो चार्ट इस बात पर ध्यान देना दिलचस्प (और मनोरंजक) है कि लैवोजिये ने तत्वों की अपनी सूची में उन **सारे पदार्थों** को शामिल किया जिन्हें वे रासायनिक माध्यमों से विभाजित नहीं कर पाए थे। इसमें **प्रकाश, ऊष्मा** और धात्विक ऑक्साइड शामिल थे। उन्नीसवीं सदी में जब विद्युत धारा (इलेक्ट्रिक करंट) का व्यापक उपयोग किया जाने लगा तब जाकर धात्विक ऑक्साइडों को

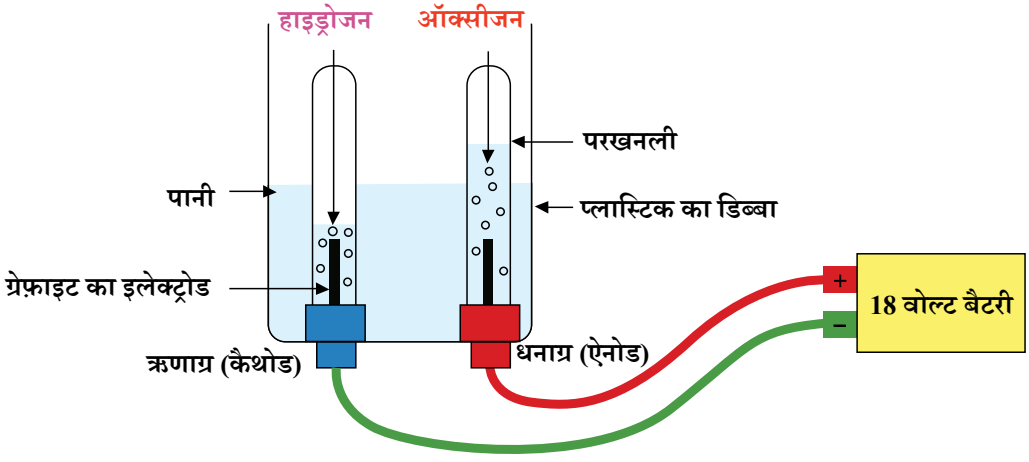

चित्र-3 : पानी का विद्युत अपघटन : ऑक्सीजन और हाइड्रोजन गैसें परखनलियों में एकत्रित होती हैं।

करने पर भी वे भिन्न-भिन्न प्रकार के यौगिक बना देते हैं। अगर हमें **किसी एक** अभिक्रिया में दो या उससे अधिक ऐसे यौगिक मिलते हैं जिनके बीच हम देखकर, सूँघकर, छूकर या फिर अन्य रासायनिक गुणों के द्वारा स्पष्ट रूप से भेद कर सकते हैं, तो इससे हमारी परिकल्पना सही सिद्ध हो जाएगी। एक और तरीक़ा जिसके द्वारा हम अपनी परिकल्पना की जाँच कर सकते हैं, वह है ऑक्सीजन को अन्य स्रोतों से प्राप्त करना, जैसे मर्करी (पारा) ऑक्साइड या कुछ नाइट्रेटों को गर्म करके। अगर यह ऑक्सीजन, पानी को विभाजित करने के दौरान उत्पन्न हुई ऑक्सीजन को अलग करने के बाद लेकिन, ऑक्सीजन की तात्विक प्रकृति के बारे में हमारा प्रमाण अभी भी निर्णायक नहीं है। तब क्या, अगर हम इस सम्भावना पर विचार करें कि ऑक्सीजन मिश्रण की बजाय दरअसल एक यौगिक है? तब स्थिति कहीं ज़्यादा पेचीदा हो जाती है। सबसे पहले तो, चूँकि यह सम्भव है कि अभी तक हमने इस यौगिक को रासायनिक रूप से विभाजित करने वाले उपकरणों की खोज न की हो, और तब तक, जब तक कोई ऐसी खोज कर ले, ऑक्सीजन को एक तत्व ही माना जाता रहेगा। जब हम ऐसी खोज को देखें जिसमें किसी नए पता चले पदार्थ की पड़ताल करने की सम्भावित योजना को दर्शाया गया है।

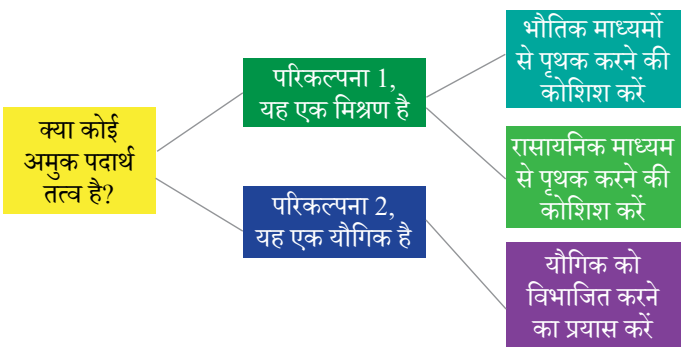

चित्र-4 : फ्लो चार्ट जो यह दिखा रहा है कि कोई पदार्थ, तत्व है या नहीं, इसकी पड़ताल करने की योजना कैसी होगी।

विभाजित किया जा सका। प्रकाश और ऊष्मा तो ज़ाहिर है, पदार्थ नहीं हैं, और इसलिए अब इन्हें तत्वों के रूप में वर्गीकृत नहीं किया जाता।

बॉक्स-2 : क्या परमाणु वास्तव में होते हैं?

हमने देखा है कि तत्वों की उत्पत्ति पर होने वाली कोई भी चर्चा परमाणुओं की धारणा से ही शुरू होनी चाहिए - चूँकि तत्व परमाणुओं से मिलकर ही बनते हैं। पर क्या परमाणु वास्तव में होते हैं? यह एक बड़ी पहेली थी, कि उनकी संकल्पना के बहुत बाद (और आधुनिक रसायनविज्ञान के जन्म के बाद) भी, कोई भी वास्तव में परमाणुओं को किसी भी प्रकार से देख नहीं पाया था। दरअसल, पिछली सदी के अन्त में जाकर हम ऐसी स्थिति में पहुँचे हैं कि हम वास्तव में परमाणुओं को देखने के काफ़ी क़रीब आ चुके हैं (परमाणुओं के इतिहास के बारे में ज्ञानवर्धक जानकारी के लिए, और उन्हें किस प्रकार देखा जा सकता है या उनमें हेरफेर किया जा सकता है, इसके लिए यह वीडियो देखें (https://www.youtube.com/watch?v=ipzFnGRfsfE)।

इसके बावजूद, परमाणुओं की कल्पना अत्यधिक महत्त्व की रही है। जैसा कि प्रसिद्ध भौतिकविज्ञानी प्रोफ़ेसर फ़ाइनमैन ने लिखा था, *"अगर प्रलय जैसी किसी स्थिति में हमारा सारा वैज्ञानिक ज्ञान नष्ट हो जाए, और प्राणियों की अगली पीढ़ी को हमारा सिर्फ़ एक वाक्य विरासत में मिलना हो, तो वह कौन-सा वाक्य होगा जिसमें सबसे कम शब्दों में सर्वाधिक जानकारी निहित होगी? मुझे लगता है कि वह **परमाणु परिकल्पना** (या परमाणविक **तथ्य**, या जो भी आप इसे कहना चाहें) होगी, कि **सभी वस्तुएँ परमाणुओं से बनती हैं जो ऐसे छोटे-से कण हैं, जो सतत रूप से गतिमान रहते हैं, और थोड़ी-सी दूरी होने पर एक-दूसरे को आकर्षित करते हैं, लेकिन एक-दूसरे में ठूँसे जाने पर दूर हटते हैं।** आप देखेंगे इस एक वाक्य में, दुनिया के बारे में **प्रचुर** जानकारी निहित है, अगर थोड़ी-सी कल्पनाशक्ति और समझ का इस्तेमाल किया जाए।"*

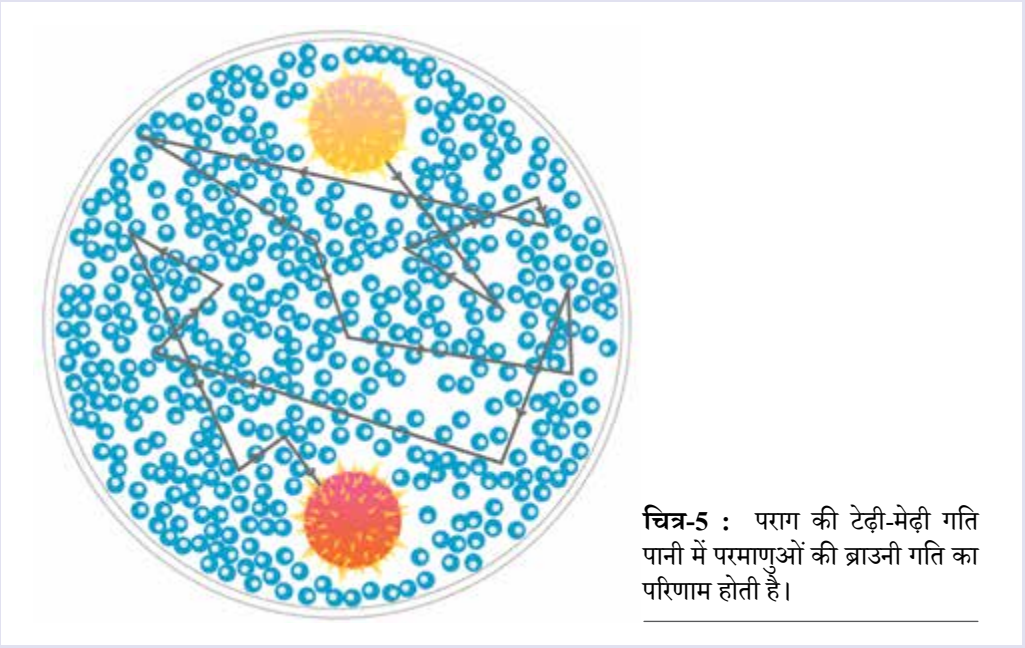

चित्र-5 : पराग की टेढ़ी-मेढ़ी गति पानी में परमाणुओं की ब्राउनी गति का परिणाम होती है।

प्रयोग : ब्राउनी गति के माध्यम से परमाणुओं को अप्रत्यक्ष रूप से 'देखना'।

किसी घास के फूल से थोड़ा-सा पराग लेकर उसे पानी की एक बूँद में डालें और सूक्ष्मदर्शी से इसका प्रेक्षण करें। अगर पराग का आकार एकदम सही हो (न ज़्यादा भारी, और न ज़्यादा हल्का), तो आप उसे सीधी-सहज अनवरत गति करने की बजाय कुछ **अनियमित ढंग** से गति करते या हिचकोले खाते हुए देखेंगे। इसी टेढ़ी-मेढ़ी गति को 'ब्राउनी गति' कहा जाता है, और इसका यह नाम रॉबर्ट ब्राउन के नाम पर पड़ा जिन्होंने 1827 में इसकी खोज की थी (हालाँकि इसे समझा नहीं पाए थे)।

1905 में प्रकाशित हुए, एक पथ-प्रदर्शक पत्र में, आइंस्टीन ने दिखाया कि इस टेढ़ी-मेढ़ी गति ने निर्विवाद रूप से परमाणुओं के अस्तित्व को साबित कर दिया था। आइंस्टीन को इसी खोज के लिए 1921 में भौतिकी का नोबेल पुरस्कार मिलना यह दिखाता है कि इस खोज को कितना महत्त्वपूर्ण माना गया था।

इस प्रयोग में, पराग की टेढ़ी-मेढ़ी गति दरअसल यह **साबित** करती है कि पानी की बूँद परमाणुओं से मिलकर बनती है। यह कैसे साबित होता है? अगर पानी की बूँद में निरन्तरता होती तो जैसे-जैसे पानी हिचकोले खाते हुए आगे बढ़ता, उसमें निलम्बित पराग के कण सिर्फ़ डूबते-उतरते रहते और विभिन्न दिशाओं में सीधी-सरल गति करते रहते। लेकिन उनकी यह टेढ़ी-मेढ़ी गति बताती है कि असल में हर परागकण पर भी अनियमित और आकस्मिक ढंग से प्रहार हो रहे हैं। ये आकस्मिक प्रहार तभी सम्भव हैं जब पानी परमाणुओं से मिलकर बना हो और वे ही इधर-उधर घूमते हुए ये प्रहार कर रहे हों।

एक, थोड़ा मुश्किल प्रयोग है, काँच के डिब्बे में डाले गए धुएँ के कुछ कणों से चमकदार रोशनी गुज़ारें, और अब सूक्ष्मदर्शी से इसका प्रेक्षण करें। धुएँ के चक्कर लगाते ढेर के बीच, कभी-कभी हमें धुएँ के कण भी नज़र आ सकते हैं, जो प्रकाश के चमकदार बिन्दुओं जैसे दिखाई देते हैं और हमें ब्राउनी गति दिखाते हैं।

ब्राउनी गति के एकदम सटीक चलचित्र के लिए यह देखें, https://en.wikipedia.org/wiki/Brownian_motion.

देते तो, वह मूल पदार्थ निश्चित रूप से तत्व नहीं था। ज़ाहिर है, कि कोई पदार्थ दरअसल एक तत्व है, इसे निर्णायक रूप से प्रमाणित करने के लिए इस परिभाषा का उपयोग करना असम्भव है क्योंकि कोई पदार्थ जिसे एक सदी में प्रचलित प्रौद्योगिकी का प्रयोग करके अपघटित नहीं किया जा सका हो, अगली सदी में ज़्यादा उन्नत प्रौद्योगिकियों के उपलब्ध होने पर हो सकता है कि उसी

बॉक्स-3 : प्रयोग : किसी गैस को दबाना

इस प्रयोग के लिए आपको 20 मिलीलीटर की एक सिरिंज की ज़रूरत होगी। जहाँ सुई बैठती है, उस मुँह को बन्द करने के लिए थोड़ा-सा ऐरलडाइट लगा दें। इस मुँह को बन्द करने से पहले पिस्टन को पूरा पीछे खींच लें और इस तरह सुनिश्चित कर लें कि सिरिंज के भीतर पर्याप्त मात्रा में हवा है। ऐरलडाइट के सूखने के बाद, सिरिंज के पिस्टन को अधिकतम सीमा तक दबाने की कोशिश करें, और अपने प्रेक्षणों को दर्ज कर लें। स्पष्ट है, कि पिस्टन को दबाते समय हवा आपको पीछे धकेलती महसूस होती है। वह ऐसा कैसे कर पाती है?

यहाँ यह हो रहा है कि हवा के अणु सिरिंज के कंटेनर की दीवारों से जाकर टकराते हैं, और सिरिंज का आयतन घटते जाने के साथ उनके टकराने की आवृत्ति बढ़ जाती है। पिस्टन के भीतर, हर स्थिति में हवा द्वारा लगाया जाने वाला दबाव आपके द्वारा पिस्टन पर लगाए जा रहे दबाव के बराबर रहता है, और यदि आप अपने दबाव में थोड़ी-सी भी कमी लाते हैं, तो पिस्टन वापस अपनी मूल स्थिति में आ जाता है।

जब इस प्रयोग को एक बड़े पिस्टन-सिलिण्डर तंत्र, जैसे कि साइकिल का पम्प, का इस्तेमाल करके किया जाता है तो पम्प के भीतर की हवा निश्चित रूप से ज़्यादा गर्म हो जाती है, यानी उसका तापमान बढ़ जाता है।

पदार्थ को अपघटित किया जा सके।

एक और परिभाषा देखें, और यह भी अब प्रचलित नहीं है, लेकिन ज़्यादा उपयोगी है : "*तत्व एक जैसे परमाणुओं से बना पदार्थ होता है।*" यह परिभाषा (जॉन डाल्टन के) परमाणु सिद्धान्त की आधारशिलाओं में से एक थी, लेकिन **समस्थानिकों** की खोज ने इस परिभाषा को प्रचलन से बाहर कर दिया। इस खोज ने

बॉक्स-4 : तर्क का विस्तार : एक बादल के भीतर का गतिविज्ञान

गैस के संघनित होते बादल के भीतर क्या-क्या चीज़ें हो सकती हैं? मैंने अपने कुछ सवालों की सूची नीचे बनाई है। आप भी अपने सवाल इस सूची में जोड़ सकते हैं।

- जब गैस का कोई बादल संघनित होता है, तो फिर वह गर्म क्यों हो जाता है? हमें ध्यान में रखना चाहिए कि मानक गैस समीकरण ($PV = nRT$ इत्यादि) जो आदर्श गैसों पर लागू होते हैं, इस संकुचन पर भी अधिकांश रूप से लागू होंगे।
- गर्म होने पर संकुचन का क्या होता है?
- आन्तरिक गुरुत्वाकर्षण के कारण संघनन के लिए गैस की कितनी मात्रा की ज़रूरत होती है?
- क्या गैस के संघनित होने के साथ उसके केन्द्र के भीतर का तापमान बढ़ता है?

जहाँ तक पहले और दूसरे सवाल की बात है, तो गैस गर्म होती जाती है, जिसका सीधा-सा कारण है कि उसके अणु एक छोटी जगह में सीमित हो जाते हैं, जो काफ़ी कुछ साइकिल पम्प के भीतर की गैस जैसी स्थिति होती है जो संपीड़ित होती है और उसके बाहर निकलने की कोई जगह नहीं होती। पृथ्वी पर, जब किसी गैस का तापमान एक निश्चित स्तर तक पहुँच जाता है, तो उसका संकुचन बन्द हो जाता है, जिसका कारण आमतौर पर उसे चारों ओर से घेरी हुई दीवारें होती हैं। इसके विपरीत, किसी गैस के किसी विशाल बादल में संकुचन से गरमाहट पैदा होती है, जो उसका आगे और संकुचन रोक देती है। लेकिन, यह गरमाहट सुनिश्चित करती है कि गैस के बादल की ऊष्मा का उसकी सतह से विकिरण हो जाए। इससे गैस ठण्डी हो जाती है, और जब वह पर्याप्त रूप से ठण्डी हो जाती है, तो संकुचन और पिण्ड बनना नए जोश से शुरू हो जाता है, और बादल छोटा हो जाता है। **यह निश्चित ही एक तेज़ी-से घटने वाला प्रभाव है - यह घटनाक्रम निरन्तर चलता रहता है, और यह तभी रुकता है जब बादल में पदार्थ की मात्रा कम रह जाती है।**

तीसरे सवाल के कई जवाब हो सकते हैं। इनमें से एक से हमें यह समझ मिलती है कि तारे कैसे बनते हैं। आमतौर पर परमाणु एक-दूसरे के इतने क़रीब नहीं जा सकते। इसलिए, किसी ठोस, द्रव या गैस को एक निश्चित स्थिति के बाद दबाना उत्तरोत्तर मुश्किल होता जाता है। किसी गैस को **अपने ही गुरुत्वाकर्षण** के कारण संकुचित होने के लिए, उसका गुरुत्वाकर्षण बहुत अधिक होने की ज़रूरत है, क्योंकि हम यह जानते हैं कि गुरुत्वाकर्षण ब्रह्माण्ड का सबसे कमज़ोर बल है। इसके अलावा, **पाउली के अपवर्जन नियम** के अनुसार, जो यह कहता है कि दो इलेक्ट्रॉनों या प्रोटॉनों या न्यूट्रॉनों को एक-दूसरे के ऊपर नहीं रख सकते, कोई बादल गुरुत्वाकर्षी रूप से तभी संपीड़ित होगा जब उसका द्रव्यमान लभगभ 4×10^{32} ग्राम की सीमा से अधिक हो। इसलिए किसी गैस के बादल का द्रव्यमान जितना अधिक होगा, उससे बनने वाले तारे भी उतने ही गर्म होंगे। यहाँ हम यह बता दें कि हमारे सूर्य का द्रव्यमान लगभग 2×10^{33} ग्राम है, जो, ज़ाहिर है कि, संघनन के लिए ज़रूरी न्यूनतम द्रव्यमान से अधिक है।

अन्तिम सवाल के लिए, यह पता चलता है कि गैस के बादल के केन्द्र का ताप निश्चित बढ़ता है, और उसका मान बादल के द्रव्यमान पर निर्भर करता है। यह बात तार्किक है क्योंकि ज़्यादा द्रव्यमान वाले किसी गैस के बादल के लिए संकुचन ज़्यादा तेज़ी-से होगा, इसलिए गैस का और गर्म होना लाज़िमी है। इस स्पष्टीकरण को पहले और दूसरे सवालों के जवाबों से जोड़कर, हम यह अनुमान लगा सकते हैं कि गैस के बादल के केन्द्र को उत्तरोत्तर गर्म होते जाना चाहिए। यह कितना गर्म हो सकता है? दरअसल, जब वह कुछ करोड़ डिग्री सेंटीग्रेड पर पहुँचता है, तो **नाभिकीय अभिक्रियाएँ शुरू हो जाती हैं**, यानी प्रोटॉनों की ऊर्जा धीरे-धीरे, धनात्मक रूप से आवेशित प्रोटॉनों के बीच लगने वाले विद्युत चुम्बकीय प्रतिकर्षण बल से निजात पाने लगती है। जैसा कि हम बाद में देखेंगे, इसका अर्थ यह होता है कि किसी गैस के बादल का आन्तरिक तापमान और अधिक बढ़ सकता है।

बॉक्स-5 : रहस्यमयी क्वाण्टम यांत्रिकी और क्वाण्टम टनलिंग

क्वाण्टम यांत्रिकी क्या है? अगर सरल ढंग से समझाएँ तो, आपको एक ऐसे तंत्र की कल्पना करना है जिसके अस्तित्व की कुछ सीमित अवस्थाएँ हों। इसे समझने के लिए, कल्पना करें कि एक ऐसे "बॉक्स" के भीतर एक कण को रखा जाता है जो किंचित भेद्य हो (अगर इस कण में पर्याप्त गतिज ऊर्जा हो)। यह स्पष्ट है कि, इस कण की 'अवस्थाएँ' बॉक्स के भीतर कहीं पर भी होने की, और उसके बाहर कहीं पर होने की हैं। किसी अवस्था का एक उदाहरण हो सकता है - थोड़ी तेज़ चाल के साथ एक निश्चित दिशा में किसी निश्चित समय पर बॉक्स के मध्य में किसी बिन्दु पर कण की स्थिति। यह अवस्था उस अवस्था से भिन्न है जब यह कण उसी चाल से किसी दूसरी दिशा में किसी निश्चित समय पर बॉक्स के 10 सेंटीमीटर बाहर हो। स्पष्ट है, कि कण अपनी स्थिति और वेग के बदलते रहने के साथ अपनी अवस्थाएँ भी बदलता रहता है।

अब कल्पना करें, कि इनमें से हर एक अवस्था कुछ **सम्भावना** के साथ घटित हो सकती है। अगर हम किसी तरह **अवस्थाओं के अध्यारोपण** की कल्पना कर सकें, जिसमें इलेक्ट्रॉन या कण किसी एक अवस्था में होने की बजाय, सम्भवतया **अपनी सभी सम्भव अवस्थाओं का मिश्रण** हो (इसका मिश्रण कैसे होगा यह गणितीय नियमों के आधार पर तय होता है और इसे साधारण भाषा में आसानी से नहीं बताया जा सकता), तो आपके पास क्वाण्टम यांत्रिकी सिद्धान्त का एक नमूना मौजूद होगा। हमें इसमें यह अन्तिम स्थिति जोड़नी पड़ेगी, कि **जब हम कोई मापन करते हैं**, तब इस कण या इलेक्ट्रॉन को किसी निश्चित अवस्था में ही **होना** होगा। बॉक्स के भीतर रखा कण दो ही अवस्थाओं में हो सकता है, या तो बॉक्स के भीतर किसी जगह या फिर बॉक्स के बाहर किसी जगह।

अब आता है सबसे अद्भुत भाग। अगर शुरुआत में, कण की ऊर्जा बॉक्स को भेदने के लिए ज़रूरी ऊर्जा से कम रही हो, तो भी इस बात की थोड़ी सम्भावना है कि वह कूदकर, या दूसरे शब्दों में कहें, तो **सुरंग द्वारा बाहर निकल** सकता है। अवस्थाओं के अध्यारोपण पर लागू होने वाले नियम किसी ढंग से इस स्थिति को सम्भव बनाते हैं, और कभी-कभी कण ऐसा कर भी देता है। इसे विभिन्न परिस्थितियों में प्रायोगिक रूप से देखा गया है, और यह एक अनोखी क्वाण्टम घटना है। इस प्रभाव के सदृश कोई शास्त्रीय उदाहरण मौजूद नहीं है।

1929 में, जॉर्ज गैमो (1904 - 1968), रॉनल्ड गर्नी (1898 -1953), और ऐडवर्ड कॉन्डन (1902 - 1974) ने क्वाण्टम टनलिंग के तथ्य की खोज की थी। शिक्षा की विभिन्न शाखाओं के लिए, और ख़ासतौर पर खगोलभौतिकी के लिए, टनलिंग

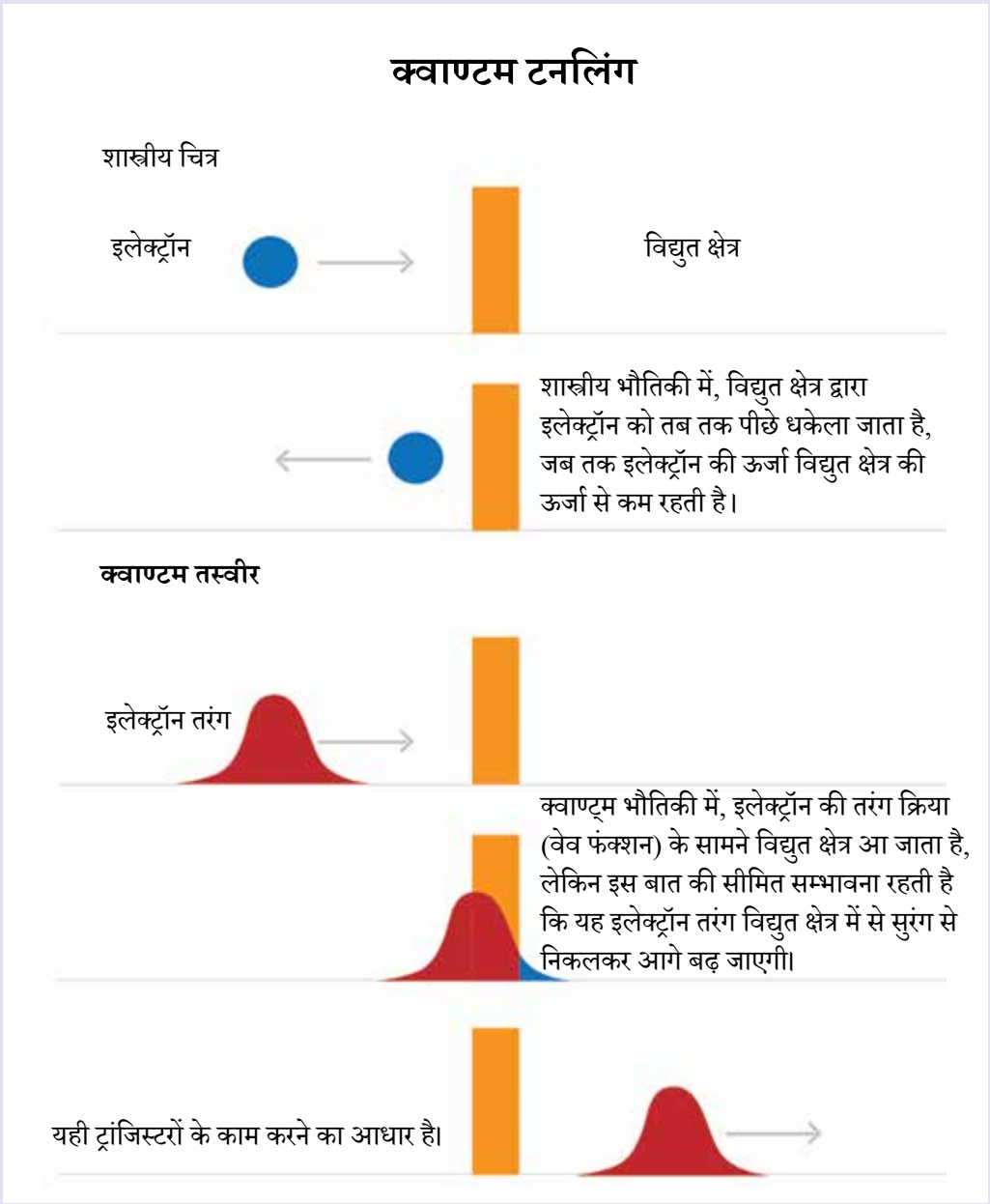

चित्र-6 : क्वाण्टम टनलिंग
Credits: Dr. James Shombert, University of Oregon.

के इस तथ्य के महत्त्व के बारे में जितना कहा जाए कम ही होगा। बुनियादी रूप से, इस एक खोज ने ऐसा धक्का दिया जिससे नाभिकीय खगोलभौतिकी के पूरे विषय की उत्पत्ति हुई। टनलिंग की घटना इस ब्रह्माण्ड में जीवन के अस्तित्व के लिए ज़रूरी सबसे महत्त्वपूर्ण कारकों में से एक है। इससे तारे में ऊर्जा बनती है और उसके निकलने के लिए पर्याप्त लम्बा समय मिल जाता है। दिलचस्प बात यह है कि इस खोज के पहले कई सालों तक, कॉन्डन, जिन्होंने अन्ततः इस बात को समझाया था कि तारों के भीतर नाभिकीय अभिक्रियाएँ किस प्रकार हो सकती हैं, यह मानते थे कि द्रव्यमान का नाश ही तारे की ऊर्जा का स्रोत था, और यही उनके लम्बे जीवन का कारण था। लेकिन, इस बात को समझाने का कोई कारण नहीं पाया गया कि द्रव्यमान के विनाश से सूर्य के भीतर जिस दर से ऊर्जा पैदा होती है, वह क्यों होती है। टनलिंग से, पैदा होने वाली ऊर्जा की मात्रा, और कितनी जल्दी यह पैदा होती है, इन दोनों बातों का बहुत बेहतर स्पष्टीकरण मिल जाता है। इसके अलावा टनलिंग प्रभाव ही सर्वदा उपयोग में आने वाले ठोस अवस्था वाले डायोड और ट्रांजिस्टर, जैसे यंत्रों की क्रियाविधि का आधार हैं जो पूरी तरह से, इलेक्ट्रॉनिक्स के उद्योग की रीढ़ की हड्डी हैं।

ग़ैर-अपघटनीय पदार्थों के रूप में तत्वों की पिछली परिभाषा को भी असमर्थनीय बना दिया क्योंकि किसी तत्व को उसके समस्थानिकों में अपघटित किया जा सकता है जिनके गुण मूल तत्व से थोड़े-से भिन्न होते हैं। इसका मतलब यह हुआ कि किसी तत्व के परमाणु विभिन्न रूपों में हो सकते हैं, और इससे डाल्टन की परिभाषा खण्डित हो जाती है। इसके अलावा, उसके समस्थानिकों को पुनः मिलाने से हमें मूल पदार्थ फिर से प्राप्त हो जाता है, और इस तरह, पिछली परिभाषा के अनुसार कोई भी ऐसा तत्व जिसके एक से ज़्यादा समस्थानिक हों वह सच्चा तत्व नहीं हो सकता। इसका एक आकर्षक उदाहरण भारी जल के अस्तित्व में देखा जाता है। सादे पानी में हाइड्रोजन का सामान्य रूप होता है, और उसके नाभिक में एक प्रोटॉन होता है। जबकि भारी जल में ड्यूटेरियम होता है जो हाइड्रोजन का एक समस्थानिक है जिसके भीतर एक अतिरिक्त न्यूट्रॉन होता है। इस वज़ह से भारी जल के अणु अपेक्षाकृत काफ़ी अधिक भारी हो जाते हैं (भारी जल का एक मोल या ग्राम अणु, सादे पानी के एक मोल से लगभग 2 ग्राम ज़्यादा भारी

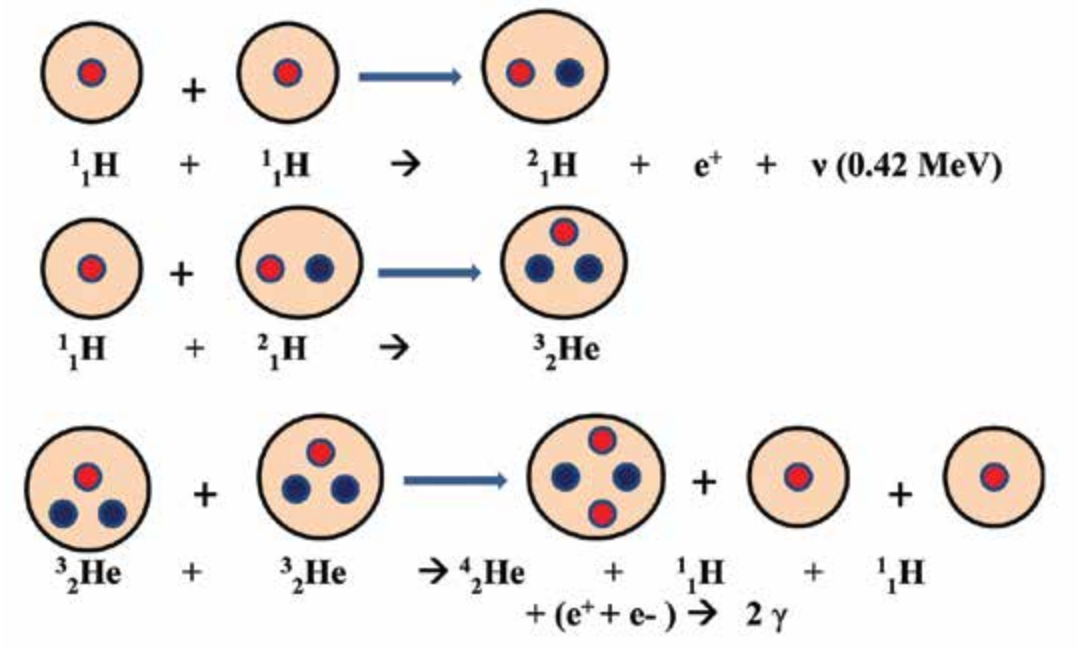

चित्र 7: प्रोटॉन-प्रोटॉन शृंखला (या पीपी शृंखला) अभिक्रिया।
Credits: Nagendra Nath Mondal, Wikimedia Commons. URL: https://en.wikipedia.org/wiki/File:H-2_atom.png. License: CC-BY.

हो सकता है) - इसका जमाव बिन्दु लगभग 4 डिग्री सेंटीग्रेड है, और यह लगभग 11 प्रतिशत ज़्यादा सघन होता है। भारी जल के नाभिकीय और जैविक गुण भी अलग होते हैं, और इसे परमाणु संयत्र (न्यूक्लियर रिएक्टर) में न्यूट्रॉन मन्दक (मॉडरेटर) के रूप में (यानी न्यूट्रॉनों को अवशोषित करने के लिए) काफ़ी व्यापक रूप से प्रयोग किया जाता है। क्या यह अद्भुत बात नहीं है कि किसी एक समस्थानिक की उपस्थिति मात्र से गुणों में इतना ज़्यादा अन्तर आ सकता है?

रसायनविज्ञान का आधुनिक युग सम्भवतया 1789 के आस-पास शुरू हुआ, जब 'रसायनविज्ञान के जनक' ऐण्टवॉन लॉरेण्ट डि लैवोजिये (1743 - 1794) ने तत्वों को वर्गीकृत करने का प्रयास किया। लैवोजिये ने रासायनिक तत्व को ऐसे पदार्थ के रूप में परिभाषित किया जो **रासायनिक विश्लेषण** की किसी भी ज्ञात पद्धति द्वारा और विभाजित नहीं किया जा सकता। यह बहुत ही सटीक परिभाषा थी - अनूठी भी, क्योंकि पीछे देखने पर ऐसा लगता है कि इस परिभाषा को ऐसी वस्तुओं तक सीमित करके, जो 'रासायनिक विश्लेषण द्वारा अविभाज्य' थीं, लैवोजिये यह सुझा रहे थे कि अन्य पद्धतियाँ, जिनका पता लगभग 150 साल बाद चला, तत्व को विभाजित करने में या नया तत्व बनाने में सफल हो सकती थीं (**बॉक्स-1** देखें)।

आइए अब हम दूसरे सवाल को देखें 'परमाणु क्या होते हैं और वे तत्वों से किस प्रकार सम्बन्धित हैं?' उन्नीसवीं और बीसवीं सदियों की कई अद्भुत वैज्ञानिक खोजों ने, जिनमें नाभिकीय भौतिकी और खगोलभौतिकी आदि में हुई तरक्क़ियाँ भी शामिल हैं, स्पष्ट रूप से यह दिखाया है कि विभिन्न प्रकार के तत्व परमाणुओं से मिलकर बनते हैं। हम सब यह जानते हैं कि परमाणु बुनियादी रूप से तीन स्थाई कणों से मिलकर बनते हैं - धनात्मक रूप से आवेशित प्रोटॉन, शून्य शुद्ध आवेश वाले न्यूट्रॉन, ऋणात्मक रूप से आवेशित इलेक्ट्रॉन। किसी भी तत्व के परमाणु में निश्चित संख्या में प्रोटॉन और न्यूट्रॉन होते हैं जो मिलकर एक छोटा-सा नाभिक बनाते हैं, और इलेक्ट्रॉन इस ठोस केन्द्र के चारों ओर चक्कर लगाते हैं। इन तीनों कणों को ध्यान में रखते हुए, हम 'तत्व' की, उसके परमाणुओं के सन्दर्भ में, एक शुद्ध और सुस्पष्ट परिभाषा दे सकते हैं :

'तत्व एक प्रकार के परमाणुओं से मिलकर बनता है, और इन सभी परमाणुओं में प्रोटॉनों की संख्या समान होती है (जिसे उस तत्व का परमाणु क्रमांक कहते हैं)।'

यह परिभाषा इस बात को स्पष्ट करती है कि एक अकेले मुक्त न्यूट्रॉन, या न्यूट्रिनो, पाइऑन, केऑन, फोटॉन आदि, जैसे अपरमाणविक कणों को तत्व नहीं माना जा सकता।

परमाणुओं के प्रेक्षण

आइए अब हम परमाणु सिद्धान्त गढ़ने के अर्थ पर विचार करें। क्या हमें इसकी ज़रूरत भी है? ऐसा करने से क्या लाभ हैं? लेकिन, पहले, हम कुछ आसान प्रश्नों पर विचार कर लें। क्या परमाणु वास्तव में होते हैं? यदि हाँ, तो क्या उन्हें देखा जा सकता है (**बॉक्स-2** देखें)?

अब जबकि स्थिति स्पष्ट है, और हम परमाणुओं के अस्तित्व की हक़ीक़त के बारे में निश्चिन्त हैं, भले ही उन्हें सीधे-सीधे न देखा जा सकता हो, हम अपने अगले विचार की तरफ़ बढ़ते हैं कि, बिग बैंग के दौरान बने आदि तत्व हाइड्रोजन से सभी तत्वों के सृजन के बारे में लोग क्या कल्पना करते हैं।

गैसीय हाइड्रोजन के बादल के भीतर का गतिविज्ञान

अपनी सृष्टि के बाद जब ब्रह्माण्ड ठण्डा हुआ, तो हाइड्रोजन के परमाणु संघनित होकर विराट बादलों में तब्दील हो गए, जो मुख्यतः गुरुत्वाकर्षण के कारण एक-दूसरे से जुड़े रहे (ये बादल संघनित कैसे हुए, इसके बारे में विस्तार से जानने के लिए इसी अंक का लेख 'ग्रहों के संसारों की उत्पत्ति' देखें)। ध्यान में रखें, कि यद्यपि किसी गैस के बादल में ऐसी कोई दीवारें नहीं होतीं कि

बॉक्स-6 : ड्यूटेरियम (^{2}He) के बनने का एक संक्षिप्त घटनाक्रम

1930 के दशक के इर्द-गिर्द, नाभिकीय भौतिकी का विषय, महत्त्वपूर्ण परिणामों के साथ सामने आ रहा था, और बहुत-से महत्त्वपूर्ण समस्थानिकों और तत्वों की खोज हो रही थी। दो वैज्ञानिकों - रॉबर्ट डैस्कोर्ट ऐटकिंसन और चार्ल्स क्रिचफील्ड - ने प्रोटॉन-प्रोटॉन शृंखला अभिक्रिया की हमारी समझ को विकसित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिकाएँ निभाईं।

1919 : खगोल भौतिकविज्ञानी ऐडिंग्टन ने सुझाया कि हाइड्रोजन से हीलियम में **संश्लेषण**, सूर्य के भीतर ऊर्जा का स्रोत हो सकता है, पर उन्हें इस बारे में कोई अनुमान नहीं था कि यह प्रक्रिया किस प्रकार होती होगी। लोगों का सोचना था कि हीलियम के नाभिक में 4 प्रोटॉन और 2 इलेक्ट्रॉन थे, और इस तरह उसमें दो का शुद्ध धनात्मक आवेश था (याद करें कि न्यूट्रॉन की खोज तो 1932 में जाकर हुई थी)। इसके अलावा, 2 या 3 परमाणु द्रव्यमान वाले कोई भी नाभिकों के अस्तित्व के बारे में कोई जानकारी नहीं थी। इसलिए, ऐडिंग्टन की परिकल्पना का संश्लेषण तभी हो सकता था जब 4 प्रोटॉन और 2 इलेक्ट्रॉन, एक साथ मिलकर ऊर्जा निकालें, और फिर हीलियम के नाभिक के रूप में इकट्ठे बने रहें। इसे एक बेहद पेचीदा और अत्यन्त दुर्लभ प्रक्रिया माना जाता था।

1931 : ऐटकिंसन का कहना था कि "स्थिति यह थी कि प्रेक्षणों के द्वारा बहुत आँकड़े इकट्ठा हो गए थे, और **प्रतिवाद को सामने रखे बगैर मनमानी परिकल्पना गढ़ना** अब सम्भव नहीं रह गया था।" इस समय कई नाभिकीय प्रयोग किए जा रहे थे, और इस बात का भी

पता लगाया गया कि हाइड्रोजन **पहला और सम्भवतया अकेला** रासायनिक तत्व था जो ब्रह्माण्ड के प्रारम्भ में भी मौजूद था। मुश्किल तो इस बात का पता लगाने में थी कि सिर्फ़ और सिर्फ़ शुद्ध हाइड्रोजन के साथ संलयन कैसे शुरू हो सकता था। शोधकर्ताओं ने जितने भी परिदृश्य सामने रखे, उन सब में यह माना गया कि, **हाइड्रोजन से भारी तत्वों का पहले अस्तित्व था।** लेकिन उनमें से किसी में स्पष्टीकरण नहीं दिया गया था कि ये भारी तत्व किस तरह निर्मित हुए होंगे।

1936 : ऐटकिंसन ने कुछ ही पहले हुई न्यूट्रॉन, ड्यूटेरियम (^2H), और पॉजिट्रॉन की खोजों के मद्देनज़र 1931 में अपने द्वारा सामने रखे गए परिदृश्यों की पुनः पड़ताल की। यह माना गया था कि न्यूट्रॉनों के साथ होने वाली नाभिकीय अभिक्रियाओं को प्रोटॉनों के साथ प्रतिकर्षण की समस्या का सामना नहीं करना पड़ता है (न्यूट्रॉनों में शुद्ध आवेश शून्य होता है) और इसलिए वे किसी भी तापमान पर हो सकती हैं। सवाल यह था कि क्या तारों में पर्याप्त मात्राओं में न्यूट्रॉन पैदा किए जा सकते थे। प्रयोगशाला की दशाओं में देखी गई न्यूट्रॉन का उत्पादन करने वाली सभी सम्भव अभिक्रियाओं की पड़ताल करने से यह पता चला कि ऐसी अभिक्रियाएँ बहुत धीमी थीं और उनसे बहुत मामूली मात्राओं में न्यूट्रॉनों का उत्पादन हो रहा था। उदाहरण के लिए, $^1H + e \rightarrow n$ की अभिक्रिया, यानी, प्रोटॉन द्वारा इलेक्ट्रॉन का अवशोषण जिससे न्यूट्रॉन पैदा होता है, एक भी बार देखी ही नहीं गई। जो एकमात्र विकल्प बचा था, और जिसे ऐटकिंसन ने सुझाया था, वह था $^1H + {}^1H \rightarrow {}^2H + e^+$ की अभिक्रिया के माध्यम से पहले बहुत सारे ड्यूटेरियम (^2H) का उत्पादन करके उससे न्यूट्रॉन पैदा करना, और फिर ड्यूटेरियम का विभाजन कर देना। इस ढंग से, ऐटकिंसन ने पीपी शृंखला की पहली अभिक्रिया की खोज की। लेकिन, ऐटकिंसन की अपेक्षा थी कि यह अभिक्रिया ड्यूटेरियम पैदा करेगी, और फिर उससे न्यूट्रॉन पैदा होंगे। उन्होंने यह अपेक्षा भी की थी कि प्रयोगशाला में इस अभिक्रिया को देखना और इसकी दर को मापना आसान रहेगा। यहाँ, वे ग़लत थे क्योंकि **यह तारों में होने वाली सबसे प्रसिद्ध नाभिकीय अभिक्रिया है** - ऐसी अभिक्रिया जिसे प्रयोगशाला में नहीं मापा जा सकता क्योंकि उससे होने वाला उत्पादन अत्यन्त कम है, यानी लगभग न के बराबर। इसके अलावा, ड्यूटेरियम के बनने की कठिन प्रक्रिया के होने के बाद ही, दूसरी अधिक तेज़ नाभिकीय संलयन अभिक्रियाओं की राह खुलती है।

चित्र-8 : रॉबर्ट डैस्कोर्ट ऐटकिंसन और चार्ल्स क्रिचफील्ड ने प्रोटॉन-प्रोटॉन शृंखला अभिक्रिया की हमारी समझ को विकसित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिकाएँ निभाईं।

1938 : चार्ल्स क्रिचफील्ड (1911 - 1994) जॉर्ज वॉशिंगटन विश्वविद्यालय में पीएचडी के छात्र थे, और वैज्ञानिकों, टैलर व गैमो के मार्गदर्शन में काम कर रहे थे। गैमो द्वारा सुझाया गया, उनकी थीसिस का विषय था, इस बात की गणना करना कि तारों में सबसे पहली पीपी अभिक्रिया कितनी जल्दी होती है। जब क्रिचफील्ड ने अपनी यह गणना पूरी कर ली, तो गैमो ने सुझाया कि उन्हें अपनी यह गणना नाभिकीय भौतिकी के श्रेष्ठ विशेषज्ञ, वैज्ञानिक हैंस बैथ को दिखाना चाहिए, और उनका अनुमोदन हासिल करना चाहिए। बैथ ने इस गणना को सही पाया, और इसलिए 1938 में बैथ और क्रिचफील्ड ने इस गणना को प्रकाशित किया। इन लेखकों ने ऐटकिंसन को कोई श्रेय नहीं दिया, जबकि वे ऐटकिंसन ही थे जिन्होंने सबसे पहले पीपी अभिक्रिया का विचार सामने रखा था।

तो इस तरह पीपी शृंखला की पहली अभिक्रिया को खोजा गया। इसकी अधिकांश पड़ताल तो प्रयोगशालाओं में ही की गई थी, और इसकी शुद्धता को सुनिश्चित करने के लिए सूर्य के द्वारा पैदा की जाने वाली ऊर्जा के प्रेक्षणों से इसकी जाँच की गई थी।

गैस के अणु उनसे जाकर टकराते रहें, लेकिन ऐसे बादल में दाब, आयतन और तापमान अवश्य होते हैं - और बादल के संपीड़न के दौरान इन सभी में बदलाव होता है (**बॉक्स-3** देखें)। इसलिए भले ही किसी बादल के भीतर ये मात्राएँ हर जगह एक समान रही हों या न रही हों, एक अधिक संघनित बादल में निश्चित रूप से ज़्यादा आन्तरिक दाब और तापमान था।

जब हाइड्रोजन के किसी बादल में इतना आन्तरिक गुरुत्वाकर्षण होता है कि वह सिकुड़ना शुरू कर दे तो फिर कई अद्भुत घटनाएँ घटती हैं (**बॉक्स-4** देखें)। ध्यान रखें कि हम गैस के ऐसे बादल के बारे में बात कर रहे हैं जिसका द्रव्यमान अत्यधिक है। यह बादल इतना विशाल है कि यह संघनित होकर नाभिकीय अभिक्रियाएँ शुरू कर सकता है और किसी तारे को जन्म

दे सकता है। इनमें से कुछ बादल काफ़ी छोटे होते हैं, और वे एक स्थिति में जाकर संघनित होना बन्द कर देते हैं क्योंकि उनके पास पर्याप्त गुरुत्वाकर्षी स्थितिज ऊर्जा नहीं होती हैं, पर हम इन बादलों की चर्चा यहाँ नहीं करेंगे।

जब एक सिकुड़ते हुए गैस के बादल के केन्द्र का तापमान कुछ करोड़ डिग्री सेंटीग्रेड पर पहुँच जाता है, तो उसमें मौजूद परमाणुओं का अस्तित्व समाप्त हो जाता है, और वे अलग-अलग गति कर रहे इलेक्ट्रॉनों और प्रोटॉनों का बस एक सघन सूप बन जाते हैं। जब इस अवस्था में दो प्रोटॉन एक-दूसरे से भिड़ते हैं तो वे अपने प्रबल स्थिरवैद्युत प्रतिकर्षण (दोनों ही धनात्मक रूप से आवेशित हैं) से पार पा लेते हैं और एक-दूसरे के इतने क़रीब आ जाते हैं कि आकर्षण के नाभिकीय बल लगाने लगते हैं। ऐसा क्वाण्टम टनलिंग नामक तथ्य के कारण होता है। क्वाण्टम टनलिंग में दो प्रोटॉन इतना पास आ जाते हैं कि वे अपेक्षाकृत कम तापमानों पर भी एक-दूसरे से बँध जाते हैं। 1920 के दशक में ही इस बात का पता चल गया था कि किसी तारे के केन्द्र का तापमान, जो कि कुछ करोड़ डिग्री सेंटीग्रेड होता है, उस तापमान से लगभग **1000 गुना कम** होता है, जो दो प्रोटॉनों को इतना क़रीब ले आए कि वे आपस में बँध जाएँ। दिलचस्प बात यह है कि इस तथ्य का पता हमें न्यूट्रॉन की खोज (जो 1932 में हुई थी) के भी पहले चल गया था। उस समय, यह सम्भावना कि अधिक परमाणु भार वाले तत्व संलयन (फ्यूजन) के द्वारा बनते थे, विशुद्ध अटकल थी, और इस बात का कोई भी विश्वसनीय प्रमाण नहीं था कि ऐसा कैसे होता है।

जब प्रोटॉन एक-दूसरे के इतने क़रीब आ जाते हैं कि वे एक-दूसरे के भीतर **क्वाण्टम यांत्रिकीय सुरंग** द्वारा घुस जाएँ, तो नाभिकीय बल, यानी सशक्त और कमज़ोर बल भी हरकत में आ जाते हैं और पूरी तस्वीर एकदम से बदल जाती है। प्रोटॉन अब न्यूट्रॉनों में बदल सकते हैं, अन्य प्रोटॉन साथ में जुड़कर ज़्यादा बड़े नाभिक बना सकते हैं आदि-आदि। इन नाभिकीय अभिक्रियाओं से निकलने वाली ऊर्जा, अभी तक निकल रही ऊष्मा विकिरण ऊर्जा से इतनी अधिक होती है कि उसे मापा नहीं जा सकता। जैसा कि हम जानते हैं, इस समय एक तारा जन्म लेता है, और नाभिकीय संलयन द्वारा ऊर्जा पैदा करता है। इससे उसका सिकुड़ना धीमा पड़ जाता है, और वह तारा ऊष्मा पैदा करने लगता है जिसका उसकी सतह से विकिरण होता है। ऊर्जा और विकिरण के उत्पादन की ये दो प्रक्रियाएँ इस बात को सुनिश्चित करती हैं कि वह तारा लम्बे समय तक एक निश्चित आकार का बना रहता है।

तारों के भीतर का तापमान इतना कम होता है कि नाभिकीय अभिक्रियाएँ इतनी धीमी गति से चलती रहती हैं जिससे लम्बे समय तक ऊर्जा निकलती रहती है, जो ग्रहों के, और ख़ुद जीवन के, विकास के लिए ज़रूरी है। अगर तारों के केन्द्र में तापमान अधिक रहा होता, तो ये अभिक्रियाएँ ज़्यादा तेज़ी-से हुई होतीं, इससे निकलने वाली ऊर्जा भी अधिक होती, और इन तारों के जीवनकाल अपेक्षाकृत छोटे होते।

भारी तत्वों का सृजन

इससे पहले कि हम ज़्यादा भारी तत्वों के सृजन की बारीकियों में जाएँ, आइए हम तत्वों के नाभिकों के संकेतन को थोड़ा-सा देख लें क्योंकि इसके बाद उनका उपयोग किया जाएगा।

हम संकेत चिन्ह, ${}^{Z}_{A}S$ का प्रयोग परमाणु S को, एक परमाणु क्रमांक (या नाभिक के भीतर प्रोटॉनों की संख्या) A, और द्रव्यमान संख्या (प्रोटॉनों की संख्या और न्यूट्रॉनों की संख्या का योग) Z के साथ दर्शाने के लिए करते हैं। हम सामान्यतया परमाणु क्रमांक को हटा देंगे क्योंकि यह काफ़ी भारी-भरकम हो सकता है, और जब सहूलियत होगी तो सिर्फ़ ${}^{Z}S$ ही लिखेंगे। यदि आपके पास आवर्त सारणी हो, और आपको किसी परमाणु का संकेत पता हो, तो आप उसके परमाणु क्रमांक का हमेशा पता लगा सकते हैं। उदाहरण के लिए, ${}^{8}Be$ बेरिलियम परमाणु का नाभिक होगा जिसका परमाणु **द्रव्यमान** 8 (इसका परमाणु क्रमांक 4 है) है।

अब हम वापस तारों के भीतर होने वाली घटनाओं पर चलते हैं। ऐसी दो बुनियादी नाभिकीय अभिक्रियाएँ होती हैं जो हाइड्रोजन से हीलियम पैदा करती हैं। पहली, जिसे प्रोटॉन-प्रोटॉन (पीपी) शृंखला अभिक्रिया कहते हैं, किसी सामान्य तारे में पैदा होने वाली ऊर्जा का 94% पैदा करती है। (**चित्र-7** देखें।)

इन अभिक्रियाओं में, **${}^{1}H$** हाइड्रोजन नाभिक का प्रतीक होता है जो एक अकेला प्रोटॉन है, **${}^{2}H$** ड्यूटेरियम नाभिक का प्रतीक होता है, जो एक प्रोटॉन और एक न्यूट्रॉन से बनता है जो एक-दूसरे से बँधे रहते हैं, e^{+} पॉजिट्रॉन (जिसे 1932 में प्रायोगिक रूप से खोजा गया था) या किसी इलेक्ट्रॉन का प्रति-कण है, ν_e इलेक्ट्रॉन न्यूट्रिनो है (जिसके अस्तित्व का पूर्वानुमान 1930 में लगा लिया गया, लेकिन प्रायोगिक रूप से 1956 में जाकर खोजा गया)। **${}^{3}He$** हीलियम नाभिक का एक समस्थानिक है जिसमें दो प्रोटॉन और एक न्यूट्रॉन होता है, **${}^{4}He$** मानक हीलियम नाभिक है जिसमें दो प्रोटॉन और दो न्यूट्रॉन होते हैं, और γ इन अभिक्रियाओं से निकलने वाली चमकदार ऊर्जा होती है।

पहले तो, ध्यान दें कि पीपी शृंखला दरअसल एक **चक्र** होती है - ऐसा चक्र दो प्रोटॉनों के आपस में अभिक्रिया करने से शुरू होता है, और एक हीलियम नाभिक तथा दो और प्रोटॉनों के साथ समाप्त होता है। इस शृंखला की सबसे पहली अभिक्रिया, जो दो प्रोटॉनों को अभिक्रिया करता हुआ दिखाती है जिससे ड्यूटेरियम का नाभिक बनता है (जिसमें एक पॉजिट्रॉन और न्यूट्रिनो होते हैं), इस पूरी शृंखला की **निर्णायक कारक** होती

है। इसके घटने में लगने वाला समय लगभग सौ करोड़ साल का होता है। इसका मतलब यह हुआ कि सूर्य के केन्द्र में पाई जाने वाली दाब और तापमान की दशाओं तले भी प्रोटॉनों के किसी अमुक जोड़े के लिए आपस में जुड़कर एक ड्यूटेरियम बनाने में **सौ करोड़ साल से भी ज़्यादा** लग सकते हैं। प्रोटॉनों के बीच होने वाली अधिकांश टक्करों में, वे इकट्ठे हो जाते हैं और बाद में फिर विभाजित हो जाते हैं। संलयन के घटने के आसार बहुत कम होते हैं, क्योंकि इस अभिक्रिया में **कमज़ोर नाभिकीय बल** निर्णायक होते हैं। इस शृंखला में होने वाली अन्य अभिक्रियाएँ अपेक्षाकृत तेज़ी-से होती है क्योंकि वे **सशक्त नाभिकीय बल** द्वारा नियंत्रित होती हैं, जो कि कमज़ोर बल से कहीं ज़्यादा शक्तिशाली होता है।

सूर्य में हीलियम, और लिहाज़ा ऊर्जा, पैदा करने के लिए जो दूसरी महत्त्वपूर्ण अभिक्रिया होती है वह CNO चक्र की अभिक्रिया होती है। जैसा कि नाम से पता चलता है, इस अभिक्रिया में कार्बन, नाइट्रोजन और ऑक्सीजन के तत्व शामिल रहते हैं, पर यहाँ पर हम इसका वर्णन नहीं करेंगे।

आइए अब हम उन अभिक्रियाओं की बात करें जिनमें हीलियम जलकर अन्य भारी तत्व बनाती है। ये अभिक्रियाएँ सूर्य में या उसी आकार के दूसरे तारों में काफ़ी हद तक नहीं होतीं, जिनमें अभी भी मुख्य रूप से हाइड्रोजन जलती रहती है।

किसी गैस के बादल के गतिविज्ञान को पुनः याद करें। हम जानते हैं कि एक बार हाइड्रोजन, हीलियम में बदल जाए, और पैदा हुई अतिरिक्त ऊष्मा का विकिरण हो जाए, तो तारा कुछ ठण्डा हो जाता है, और धीरे-धीरे फिर से सिकुड़ने लगता है। यह संकुचन तारे के केन्द्र के तापमान को लगभग 10 करोड़ डिग्री सेंटीग्रेड तक बढ़ा देता है। इतने तापमानों पर हीलियम के नाभिक संलयन करके भारी तत्व बना देते हैं।

हीलियम के इस जलने की पहली अभिक्रिया है :

$^{4}He + {}^{4}He \rightarrow {}^{8}Be$

यह अभिक्रिया **ऊष्माशोषी** अभिक्रिया है, यानी, इसे होने के लिए ऊर्जा की ज़रूरत होती है। लेकिन, हीलियम के जलने में जो अगला महत्त्वपूर्ण चरण है, जिसमें ^{8}Be का ^{12}C में रूपान्तरण शामिल होता है, वह **ऊष्माक्षेपी** अभिक्रिया है

$^{8}Be + {}^{4}He \rightarrow {}^{12}C + \gamma$

इन दो अभिक्रियाओं के संयोजन के परिणामस्वरूप हीलियम के तीन नाभिकों से एक कार्बन नाभिक बनता है। शुद्ध अभिक्रिया ऊर्जा छोड़ती है, क्योंकि पहली अभिक्रिया में जितनी ऊर्जा लगी थी, उससे ज़्यादा ऊर्जा दूसरी अभिक्रिया छोड़ती है। लेकिन, यह अभिक्रिया अत्यन्त तापमान संवेदी होती है, जिसका मतलब यह हुआ कि किसी नाभिकीय अभिक्रिया में एक ईंधन के रूप में, हाइड्रोजन की तुलना में **हीलियम कहीं अधिक विस्फोटक होती है**। एक बार ^{12}C बन जाए, तो आगे ऑक्सीजन और निऑन के नाभिक बनाने वाली अभिक्रियाएँ होना शुरू हो जाती हैं :

$^{12}C + {}^{4}He \rightarrow {}^{16}O + \gamma$

$^{12}{}^{16}O + {}^{4}He \rightarrow {}^{20}Ne + \gamma$

ये प्रक्रियाएँ - जो हीलियम के दहन से मिलती-जुलती हैं - आगे जाकर कार्बन, निऑन, ऑक्सीजन, सिलिकॉन, जैसे ज़्यादा भारी तत्वों के दहन की राह खोलती हैं। ऐसी अभिक्रियाओं के होने की सम्भावना **सौ करोड़ डिग्री** या इससे ज़्यादा तापमान होने पर ही बढ़ती है। इनमें से अधिकांश अभिक्रियाएँ काफ़ी पेचीदा होती हैं और ये कई **मार्गों (चैनलों)** से होकर आगे बढ़ सकती हैं, यानी, संयोग के आधार पर एक से अधिक प्रकार के उत्पाद दे सकती हैं (**बॉक्स 5** की याद करें)। उदाहरण के तौर पर, दो कार्बन परमाणुओं की इस अभिक्रिया पर गौर करें जो या तो मैग्नीशियम पैदा कर सकती है या फिर सोडियम, या निऑन और या ऑक्सीजन :

$$^{12}C + {}^{12}C \rightarrow {}^{24}Mg + \gamma$$
$$\rightarrow {}^{23}Mg + n$$
$$\rightarrow {}^{23}Na + p$$
$$\rightarrow {}^{20}Ne + {}^{4}He$$
$$\rightarrow {}^{16}O + 2\,{}^{4}He$$

इनमें से हर एक चैनल के लिए सापेक्ष सम्भावनाएँ बहुत भिन्न-भिन्न होती हैं, और ये तारे के केन्द्र के तापमान पर निर्भर करती हैं। इसी प्रकार ऑक्सीजन के नाभिकों के साथ विभिन्न अभिक्रियाएँ हो सकती हैं और वे ^{28}Si, ^{31}S, और ^{31}P के साथ समाप्त होती हैं।

इन अत्यधिक तापमानों पर होने वाला कुछ विकिरण दरअसल नए बने नाभिकों को छोटे नाभिकों में तोड़ देता है, और इस प्रक्रिया को उपयुक्त नाम दिया गया है - **प्रकाश विघटन (फोटो डिसइंटेग्रेशन)**। ऐसी अभिक्रियाओं के होने से इतने ऊँचे तापमानों पर स्थितियाँ जटिल हो जाती हैं। उदाहरण के लिए, यह अभिक्रिया :

$^{20}Ne + \gamma \rightarrow {}^{16}O + {}^{4}He$, निऑन के फोटो डिसइंटेग्रेशन द्वारा हीलियम पैदा कर सकती है। हीलियम का ऐसा नाभिक, फिर से अभिक्रियाओं के एक पूरे क्रम में शामिल होकर ^{16}O, ^{24}Mg, और ^{28}Si की राशि देता है।

जब किसी तारे के केन्द्र का तापमान तीन सौ करोड़ डिग्री से अधिक हो, तो नाभिकीय अभिक्रियाओं और फोटो डिसइंटेग्रेशन के कई जटिल सिलसिले घटित हो सकते हैं। ये प्रक्रियाएँ धीरे-धीरे अधिक भारी नाभिक बनाती जाती हैं जैसे, ^{27}Al और ^{24}Mg, तथा आगे जाकर ^{56}Fe तक। ^{56}Fe से कम द्रव्यमान वाले नाभिकों के निर्माण में ऊर्जा निकलती है, लेकिन ^{56}Fe से ज़्यादा

द्रव्यमान वाले नाभिकों के निर्माण में ऊर्जा की ज़रूरत पड़ती है।

पर ये भारी तत्व संश्लेषित कैसे होते हैं? ऐसी अभिक्रियाओं का एक समूह नाभिकों द्वारा न्यूट्रॉनों को हथियाने पर निर्भर करता है। यह ऐसी प्रक्रिया है जो धनात्मक रूप से आवेशित नाभिकों में होने वाले शक्तिशाली प्रतिकर्षण से प्रभावित नहीं होती। इसलिए Z परमाणु द्रव्यमान और A परमाणु क्रमांक वाला एक नाभिक, $Z + 1$ का नाभिक बन जाएगा जब वह एक न्यूट्रॉन को अवशोषित कर लेगा, और यह तब तक चल सकता है जब तक कि एक इलेक्ट्रॉन को उत्सर्जित करके परिणामी नाभिक नष्ट हो जाता है और परमाणु क्रमांक $A + 1$ वाला एक नया तत्व अस्तित्व लेता है। इसी प्रकार, लोहे से ऊपर के तत्व भी संश्लेषित होते हैं। ध्यान रखें कि प्रकृति में नहीं पाए जाने वाले तत्वों को भी प्रयोगशाला में इसी ढंग से बनाया जाता है, यानी, न्यूट्रॉनों के अवशोषण द्वारा।

निष्कर्ष

यहाँ पर हमने संक्षेप में इस बात को समझा कि तारों के भीतर तत्वों का जन्म कैसे होता है। जब तारों की उम्र बढ़ जाती है, और वे सुपरनोवा बन जाते हैं, और उनमें विस्फोट होता है, तो वे ब्रह्माण्ड में उन तत्वों को बो जाते हैं जिन्हें उन्होंने बनाया था। फिर ये तत्व अक्सर गैस के बादलों में पहुँच जाते हैं, जो संघनित होकर नए तारे और नए ग्रहों का निर्माण करते हैं जिन पर जीवन आकार लेता है।

इस कहानी का बहुत सारा हिस्सा नहीं खोजा जा सकता था अगर नाभिकीय भौतिकी का इतना विकास न हुआ होता कि कणों को एक-दूसरे की तरफ़ फेंककर अभिक्रियाओं को शुरू करना और देखना कि कौन-से नए नाभिक बनते हैं, वे अपने टकरावों के कारण किस तरह नष्ट होते हैं, और यह भी ध्यान देना कि इन अभिक्रियाओं के होने की सम्भावनाएँ क्या हैं। नए माध्यम, रेडियोधर्मिता को देखने के नए तरीक़े और नाभिकों की स्थिरता की समझ, इस बात को समझने में महत्त्वपूर्ण रहे हैं कि तारे किस तरह तत्वों को जन्म देते हैं। हालाँकि अभी भी ऐसे अनेक सवाल हैं जिनके जवाब मिलना बाक़ी हैं, और इसीलिए अभी भी यह अध्ययन का ऐसा फलता-फूलता क्षेत्र है जिसमें बहुत से आश्चर्य छिपे हैं।

Note: Credits for the image used in the background of the article title: A star-forming region in the Large Magellanic Cloud. ESA/Hubble, Wikimedia Commons. URL: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/6/62/Starsinthesky.jpg. License: CC-BY.

References

1. The Synthesis of the Elements: The Astrophysical Quest for Nucleosynthesis and What It Can Tell Us About the Universe. Giora Shaviv. Springer-Verlag Berlin Heidelberg, 2012, ISBN 978-3-642-28384-0.
2. Theoretical Astrophysics Volume I: Astrophysical Processes. T. Padmanabhan. Cambridge University Press, 2000.
3. The Atom in the History of Human Thought. Bernard Pulman. Oxford University Press, 1998.

श्रीनिवासन कृष्णन, वर्तमान में सेंटर फॉर लर्निंग, बेंगलूरु में विज्ञान और भौतिकी पढ़ाते हैं। उन्होंने आईयूसीएए से अर्ध शास्त्रीय क्वाण्टम गुरुत्वाकर्षण के क्षेत्र में पीएचडी की है। उनकी अन्य रुचियों में अभिकल्पना और प्रौद्योगिकी, इलेक्ट्रॉनिक्स और पढ़ना शामिल है। उनसे ksrini9@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** भरत त्रिपाठी

उत्पत्ति ग्रहों के संसारों की

आनन्द नारायणन

सौर मण्डल, पूरे ब्रह्माड में अकेला ऐसा स्थान है जिसका सीधा सर्वेक्षण हमने अन्तरिक्ष यानों की मदद से किया है। अलग-अलग अध्ययन-शाखाओं के सालों तक चले बड़े लम्बे, दिलचस्प और सहयोग भरे प्रयासों ने हमें सौर मण्डल की उत्पत्ति और आगे जाकर हुए उसके विकास को समझने में मदद की है। यह लेख इस वैज्ञानिक गाथा का वर्णन करता है, और चर्चा करता है कि सौर मण्डल के भीतर से और बाहर से मिली नई जानकारियों ने ग्रह मण्डलों की हमारी समझ को किस तरह से बदल दिया है।

अपनी अरबों आकाशगंगाओं और उनसे भी कई गुना ज़्यादा असंख्य तारों से भरे इस विराट ब्रह्माण्ड में एक ही ऐसी जगह है जिसे हम अपना घर कह सकते हैं। अन्तरिक्ष में मौजूद राशियों के विस्मयकारी पैमाने की तुलना में हमारा ग्रह पृथ्वी एक छोटी-सी दुनिया ही है। लेकिन फिर भी, यह पथरीली दुनिया बड़ी ख़ास जगह है। यह हमें ज्ञात ऐसा अकेला ग्रह है जहाँ जीवन है।

क्या आपको कभी यह ख़्याल आया है कि पृथ्वी किस तरह अस्तित्व में आई होगी? यह कब और किस तरह बनी होगी? सौर मण्डल की उत्पत्ति के पहले यहाँ क्या रहा होगा? इन सब सवालों के पीछे एक बुनियादी और शाश्वत प्रेरणा है - यह जानने की प्रेरणा कि क्या हम इस ब्रह्माण्ड में अकेले हैं? हमने हमेशा ही पृथ्वी के बाहर भी जीवन होने की सम्भावना के बारे में अटकलें लगाई हैं। आख़िरकार, पृथ्वी, सूर्य का चक्कर लगाते कई ग्रहों में से ही तो एक है, और सूर्य भी अनगिनत तारों वाले ब्रह्माण्ड का एक सामान्य तारा ही तो है। तो किसी अन्य तारे का चक्कर लगाते पृथ्वी जैसे ग्रह को तलाशने की क्या सम्भावनाएँ हैं? क्या जीवन सिर्फ़ एक बार घटित होने वाला संयोग है, अत्यन्त दुर्लभ घटना है या फिर कोई सर्वव्यापी हक़ीक़त है?

सौर मण्डल की उत्पत्ति

सौर मण्डल की उत्पत्ति अतीत की घटना है, और हम अतीत में जाकर यह नहीं देख सकते कि यह सब कैसे घटित हुआ था। सौर मण्डल की उत्पत्ति को समझने के लिए हमारे पास बेहतरीन विकल्प यही है कि हम ऐसे सम्भावित मार्गों पर सतर्कता के साथ अपनी परिकल्पना बनाएँ जिनके माध्यम से शायद ग्रहों की उत्पत्ति हुई होगी। इसके बाद हम कुछ ठोस वैज्ञानिक साक्ष्यों की मदद से अपनी परिकल्पना की पुष्टि कर सकते हैं। सौभाग्य से, हमें इस प्रक्रिया को बिलकुल अँधेरे में शुरू करने की ज़रूरत नहीं है। सौर मण्डल की संरचना अपने आप में इसकी उत्पत्ति के कई संकेत देती है।

साझा उत्पत्ति के स्वरूप

ऐसे साक्ष्यों की कई परतें हमारे पास हैं जिनसे

यह संकेत मिलते हैं कि सौर मण्डल के सभी घटकों की एक साझा उत्पत्ति रही है। उदाहरण के लिए :

1. सभी ग्रह समान दिशा में सूर्य का चक्कर लगाते हैं। पृथ्वी के उत्तरी ध्रुव के ऊपर से किसी भी बिन्दु से देखने पर दिखाई देता है कि ये सभी ग्रह घड़ी के घूमने की उलटी दिशा में सूर्य का चक्कर लगाते हैं।
2. सूर्य भी अपने अक्ष पर उसी दिशा में घूमता है जिस दिशा में ग्रह उसके चक्कर लगाते हैं। इसे **प्रोग्रेड रोटेशन कहते** हैं।
3. सभी ग्रहों और अधिकांश लघु पिण्डों की कक्षाएँ क़रीब-क़रीब वृत्ताकार हैं।
4. सभी ग्रहों की कक्षाएँ लगभग समान तल पर स्थित हैं।

चित्र-1 : पृथ्वी पर गिरने के दो दिन बाद, 24 अप्रैल 2012 को एकत्रित किए गए उल्का पिण्ड के टुकड़े। उल्का पिण्ड चट्टानों के छोटे और बड़े टुकड़े होते हैं जो अन्तरिक्ष से आकर पृथ्वी पर गिरते हैं। सौर मण्डल के प्रारम्भिक दिनों की बची हुई चट्टानों के रूप में वे बहुत दिलचस्पी का विषय हैं।
Credits: © NASA / Eric James.

अगर सौर मण्डल के ये विभिन्न घटक अलग-अलग रूप से अस्तित्व में आए होते तो ऊपर बताई गई स्थितियाँ नहीं होतीं। इससे यह ठोस संकेत मिलते हैं कि पूरा सौर मण्डल एक ही घटना के चलते अस्तित्व में आया होगा।

सौर मण्डल की आयु

यदि ब्रह्माण्ड के इतिहास में सौर मण्डल की उत्पत्ति अकेली घटना थी, तो यह कितने पहले घटित हुई होगी?

वैज्ञानिकों ने इस प्रश्न का उत्तर तलाशने के लिए पृथ्वी की और ब्राह्य अन्तरिक्ष की भी बहुत पुरानी चट्टानों की उम्र का अनुमान लगाने का प्रयास किया है। रेडियोमीट्रिक डेटिंग नामक तकनीक का प्रयोग करके पृथ्वी की सबसे पुरानी चट्टानों की उम्र के अनुमान लगाए गए हैं, जिससे उनकी उम्र क़रीब 450 करोड़ साल पता लगती है (**चित्र-1** देखें)। पृथ्वी की अलग-अलग जगहों से मिले

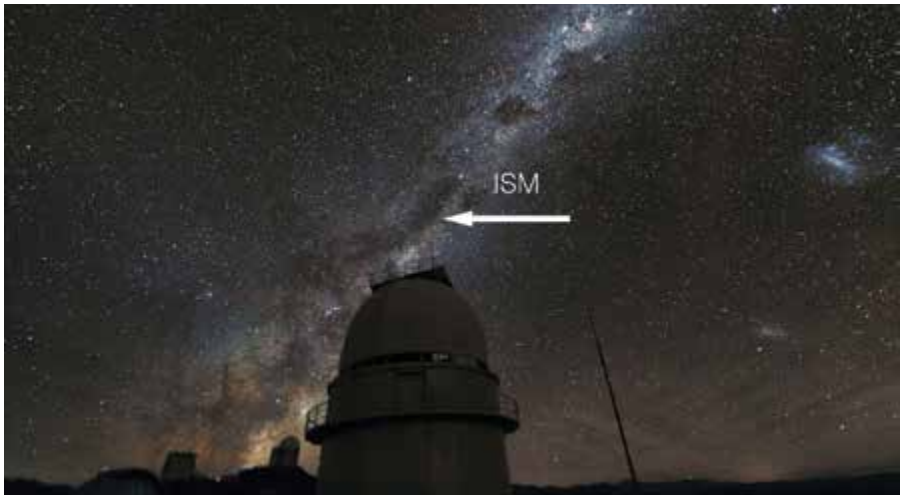

चित्र-2 : पृथ्वी के दक्षिणी गोलार्ध के किसी स्थान से लिया गया रात के आकाश का एक लॉन्ग एक्सपोजर चित्र। चित्र की पृष्ठभूमि में हम प्रकाश के छोटे-छोटे बिन्दुओं के रूप में तारों को देख सकते हैं। इस चित्र को बारीक़ी से देखने पर हमें अँधेरे धब्बे या अँधेरी गलियाँ भी दिखाई दे सकती हैं जो तारों से आते प्रकाश को ढाँकती प्रतीत होती हैं। यही अन्तरतारकीय माध्यम (आईएसएम) है जो गैस और धूल के बारीक़ कणों से मिलकर बनता है और तारों के बीच, हमारी आकाशगंगा के विस्तृत क्षेत्रों में फैला हुआ है। चित्र के अग्रभाग में एक खगोलीय वेधशाला है। पृथ्वी पर, इसी तरह के बेहद अँधेरे स्थानों से आईएसएम की इतनी साफ़ तस्वीर ली जा सकती है।
Credits: © European Southern Observatory/Z.Bardon. URL: http://phys.org/news/2016-11-magellanic-clouds.html.

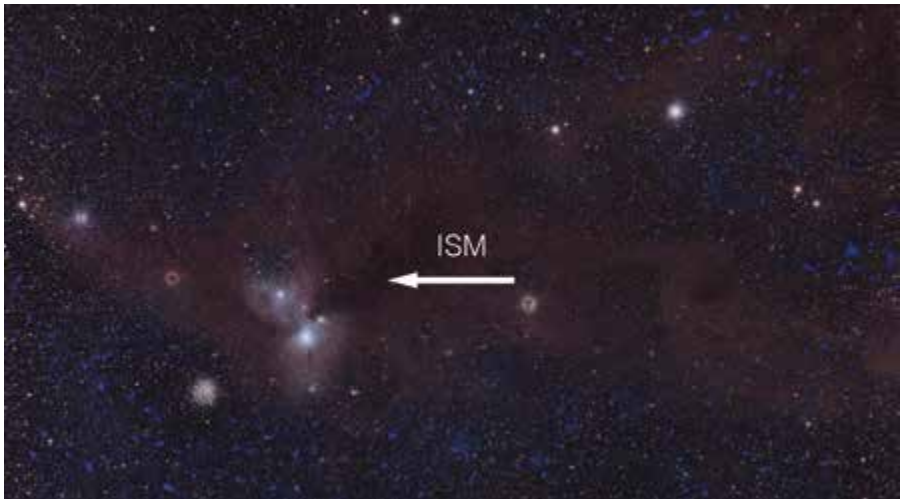

चित्र-3 : हमारी आकाशगंगा के एक हिस्से का ज़ूम इन किया गया चित्र। चित्र में दिखने वाला बिखरा और फैला हुआ काला बादल अन्तरतारकीय माध्यम है जो गैस और धूल के कणों का मिश्रण होता है। ऐसे आईएसएम अक्सर उनके पीछे मौजूद तारों से आते प्रकाश को मन्द कर देते हैं।
Credits: © Loke Kun Tan / StarryScapes. URL: http://www.deepskywatch.com/Photography/starry-scapes.html.

(अ) (ब)

चित्र-4 : प्रसिद्ध हबल अन्तरिक्ष दूरदर्शक द्वारा लिए गए तारे बनाने वाले क्षेत्रों के चित्र। (अ) प्रसिद्ध व्याघ्र (ओरायन) निहारिका, हमारी मिल्की-वे आकाशगंगा में तारे बनने के अनेक मौजूदा स्थानों में से एक है। हमसे अपेक्षाकृत नज़दीक (लगभग 1350 प्रकाश वर्ष दूर) होने के कारण इस निहारिका का खगोलज्ञों ने ख़ूब अच्छी तरह अध्ययन किया है। यदि आप रात के आकाश में ओरायन तारामण्डल की दिशा में देखें तो यह निहारिका एक धीमी चमक के रूप में दिखाई दे सकती है। ओरायन निहारिका में इतनी गैस है कि उससे हज़ारों तारे जन्म ले सकते हैं। इस तस्वीर में आप जो क्षेत्र देख रहे हैं वह कुछ प्रकाश वर्ष दूर है। **(ब)** हमारी मिल्की-वे आकाशगंगा के भीतर ही एनजीसी 346 नामक निहारिका में तारे बनाने वाला क्षेत्र। गैस के नीले और काले रंग के स्तम्भ आईएसएम के सघन गैस के बादल हैं। इस चित्र के केन्द्र में देखे जा सकने वाले अधिकांश तारे अपेक्षाकृत युवा तारे हैं, जिनकी उत्पत्ति गैस के बादल के अंशों से हुई है।
Credits: © NASA/ESA/HST.

उल्का पिण्डों के कई नमूनों की रेडियोमीट्रिक डेटिंग की गई है, और उनकी उम्र भी लगभग 450 करोड़ साल होने के संकेत मिले हैं। इसलिए हम कह सकते हैं कि सौर मण्डल की उत्पत्ति लगभग 450 करोड़ साल पहले हुई होगी। इसे इस तरह समझें कि पृथ्वी के निर्माण के लगभग 100 करोड़ साल बाद जीवन के पहले स्वरूप पृथ्वी पर उभरे, और कुछ अनुमानों के अनुसार प्रारम्भिक मनुष्य तो सिर्फ़ 600,000 साल पहले ही अस्तित्व में आए!

450 करोड़ साल पहले

सौर मण्डल के पहले इस स्थान पर क्या था? खगोलज्ञों ने ज्ञात तथ्यों और परिकल्पनाओं के अनुरूप एक कमोबेश सुसंगत नमूना प्रस्तुत किया है। इस नमूने को समझने के लिए, हमें अपना ध्यान तारों से हटाकर उनके बीच की जगह पर लगाना होगा।

जब हम नंगी आँखों से रात के आकाश को ताकते हैं तो हमें टिमटिमाते तारे दिखाई

प्रत्यक्ष • डब्ल्यूएफपीसी2 अवरक्त (इंफ्रारेड) • निकमॉस

(अ) (ब)

चित्र-5 : ओरायन निहारिका के भीतर ही ट्रेपेजियम क्लस्टर (पुंज) कहलाने वाले क्षेत्र की दो तस्वीरें जिनमें अन्तरतारकीय गैस के विशाल स्तम्भ दिखाई दे रहे हैं। हमसे क़रीब 1300 प्रकाश वर्ष दूर इस क्लस्टर की ये दो तस्वीरें हबल अन्तरिक्ष दूरदर्शक से जुड़े दो अलग-अलग कैमरों द्वारा ली गई थीं। **(अ)** प्रत्यक्ष प्रकाश (ठीक वह प्रकाश जो हमारी आँखें देख सकती हैं) पर ली गई इस तस्वीर में हम क्लस्टर के भीतर ही गैस के स्तम्भ देख सकते हैं। पर चूँकि, प्रत्यक्ष प्रकाश के फोटॉन धूल के कणों द्वारा आसानी से बिखेर दिए जाते हैं, इसलिए इस तस्वीर में हमें निहारिका के अन्दरूनी क्षेत्र दिखाई नहीं दे रहे। **(ब)** यह भी उसी क्षेत्र की तस्वीर है जो हबल से ही एक अन्य कैमरे द्वारा ली गई है, और जो इंफ्रारेड फोटॉनों का संग्रह करता है। चूँकि धूल द्वारा इंफ्रारेड कण इतने नहीं बिखरे जाते, इसलिए हम फैले हुए गैस के बादलों के आरपार देख सकते हैं, और निहारिका के भीतर क्या है इसे भी देख सकते हैं।
Credits: © NASA/ESA/HST.

बॉक्स-1 : सुपरकम्प्यूटर द्वारा बनाई गई नक़ल के क्रमवार आशुचित्र

सुपरकम्प्यूटर ग्रह मण्डलों की उत्पत्ति जैसी बहुत धीमी पर जटिल प्रक्रियाओं की नक़ल रचते हैं और हमें घटनाओं के क्रम को बहुत तेज़ गति से दिखाते हैं। यह बहुत कुछ फास्ट-फॉरवर्ड में कोई फ़िल्म देखने जैसा होता है।

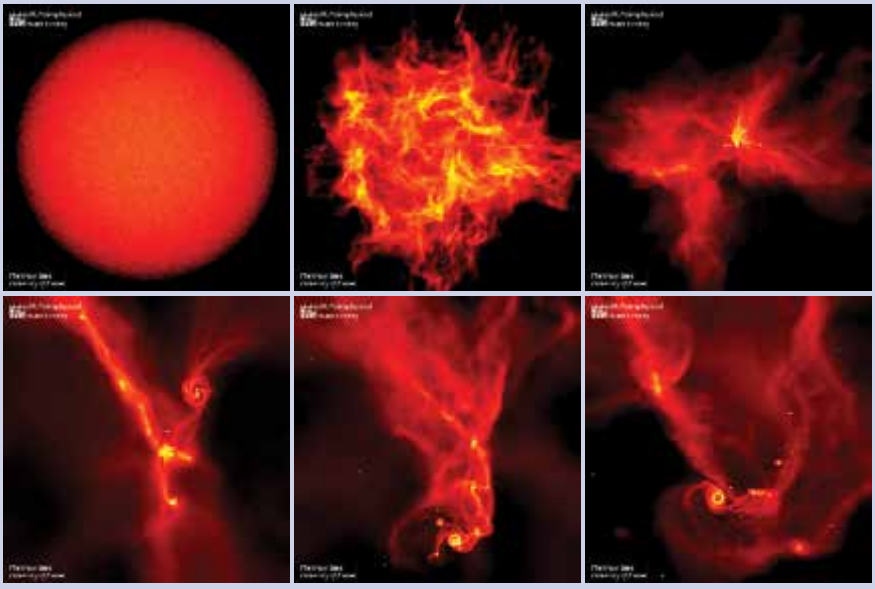

चित्र-6 : तारों का निर्माण करने वाली निहारिका की सुपरकम्प्यूटर द्वारा की गई नक़ल। यह नक़ल शुरू होती है एक बहुत बड़ी वृत्ताकार निहारिका के दृश्य से। फिर गैस के इस बादल में कुछ असमान विक्षोभ होने लगता है, जिससे इसके कुछ भाग धीरे-धीरे विखण्डित होकर ढहने लगते हैं। विखण्डन की प्रक्रिया निहारिका के आकार को बदल देती है और उसकी संरचना तन्तुनुमा हो जाती है। अलग-अलग खण्ड ढहते जाते हैं और अन्ततः इनसे तारों का निर्माण होता है। आप इस प्रक्रिया का पूरा ऐनिमेशन (जीवन्त रूप) यहाँ देख सकते हैं : https://www.youtube.com/watch?v=Yb-dwTwB8jtc.

Credits: © Mathew Batte, University of Exeter.

देते हैं और उन्हें एक-दूसरे से अलग करती ख़ाली जगह का अन्धकार दिखाई देता है। लेकिन तारों के बीच की यह जगह ख़ाली कतई नहीं होती! हमारी आँखें गैस और धूल के उन विशाल स्तम्भों को नहीं देख पातीं जो तारों के बीच की अधिकांश जगह में फैले रहते हैं। इसे **अन्तरतारकीय माध्यम (interstellar medium)** या संक्षिप्त में आईएसएम कहते हैं। **चित्र-2** जैसी लॉन्ग ऐक्सपोजर तस्वीरों में आईएसएम एक अँधेरी मोटी गली की तरह दिखाई देता है।

चित्र-7 : ओरायन निहारिका के भीतर मौजूद खण्ड अपने ही भार के कारण ढहते हुए। हबल अन्तरिक्ष दूरदर्शक से ली गई इस तस्वीर में ओरायन निहारिका के भीतर एक बादल में निहित कई छोटे खण्ड दिखाई देते हैं। हर खण्ड ने अपने ही भार के कारण ढहना शुरू कर दिया है, और वह एक या एक से ज़्यादा तारे बनने की ओर अग्रसर है। यह बहुत सम्भव है कि हमारा अपना सौर मण्डल इसी तरह के किसी खण्ड में से निकलकर बना हो।

Credits: © STScI/NASA and ESA.

आईएसएम के प्रमुख घटक हाइड्रोजन और हीलियम के परमाणु होते हैं, और कुछ मात्रा भारी तत्वों, जैसे कार्बन, नाइट्रोजन, ऑक्सीजन आदि की भी होती है। इसके अलावा वहाँ धूल के भी बहुत बारीक कण होते हैं। और आप विश्वास करें या न करें धूल के इन कणों की संरचना और स्वरूप यहाँ पृथ्वी पर पाने जाने वाले धूल के कणों से बहुत मिलते हैं।

चित्र-8 : एक कलाकार द्वारा की गई कल्पना कि बनने के बिलकुल बाद सूर्य कैसा दिखा होगा। शुरुआती चरण में, सूर्य की चमक गुरुत्वीय ऊर्जा के ताप ऊर्जा में बदलने से निकली होगी। नाभिकीय संलयन की अभिक्रियाएँ तो 10 लाख सालों बाद ही शुरू हुई होंगी, जब सूर्य के केन्द्र का घनत्व और तापमान बहुत अधिक हो गया होगा।

Credits: © NASA Goddard Media Studios.

आईएसएम का अधिकांश हिस्सा पतला होता है, और इसके घनत्व 1 परमाणु प्रति घन सेंटीमीटर या उससे भी कम होते हैं। आईएसएम बहुत फैला हुआ होता है लेकिन फिर भी यह आकाशगंगा के कुल देखे जा सकने वाले द्रव्यमान का लगभग 15% होता है। ऐसा इसलिए क्योंकि तारों के बीच बहुत अधिक स्थान होता है, और लगभग यह सारी जगह आईएसएम ले लेता है। आईएसएम के कुछ क्षेत्र तो औसत से 100-1000 गुना अधिक सघन हैं। गैस के इन अधिक सघन बादलों को **निहारिकाएँ** भी कह दिया जाता है। **आणविक बादल** कहलाने वाली बेहद ठण्डी और सघन निहारिकाएँ नए तारों की उत्पत्ति का स्थान होती हैं। (**चित्र-4** देखें)

सघन अन्तरतारकीय क्षेत्र जैसे कि ओरायन निहारिका गैस के विराट बादल हैं जिनमें

चित्र-9 : किसी कलाकार द्वारा की गई, उदीयमान तारे के इर्द-गिर्द मौजूद आदिग्रह चक्र की कल्पना।

Credits: NASA/JPL-Caltech. URL: https://www.flickr.com/photos/nasablueshift/7610034044. License: CC-BY.

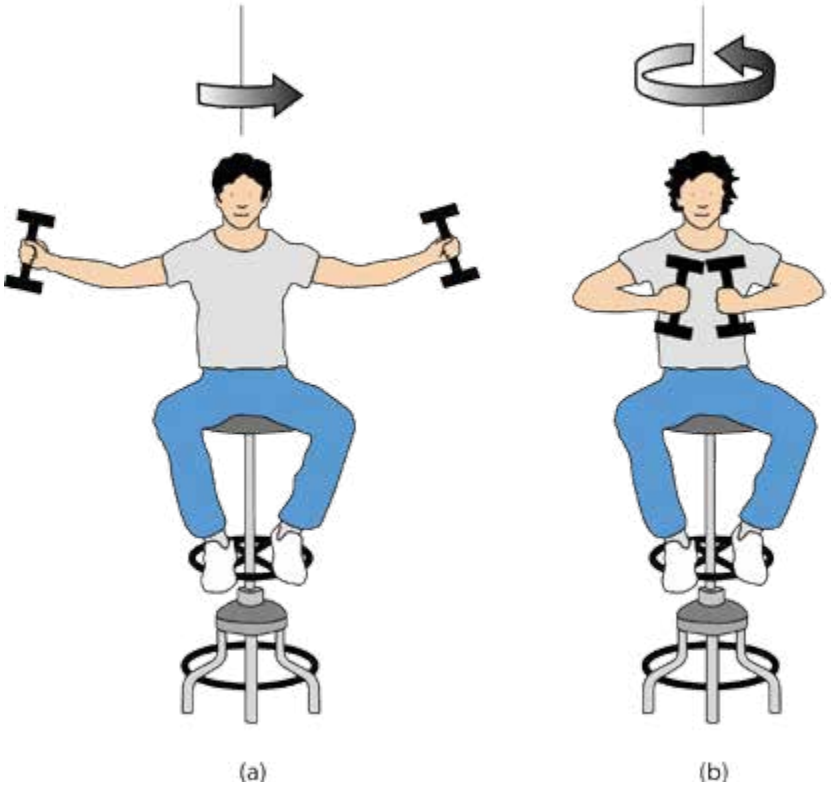

चित्र-10 : घूमने वाली कुर्सी पर बैठकर घूमना - कोणीय संवेग संरक्षण के सिद्धान्त का एक उदाहरण। आप देखेंगे कि जब आपका वज़न फैला हुआ रहता है, तो आप धीमे घूम पाते हैं। लेकिन जब आप अपने हाथों और पैरों को भीतर की ओर सिकोड़ लेते हैं तो आपके घूमने की चाल अपने आप बढ़ जाती है। कोणीय संवेग संरक्षण का सिद्धान्त हमें बताता है कि किसी तंत्र का कोणीय संवेग, जो किसी तंत्र में द्रव्यमान का वितरण किस तरह हुआ है, इसका और उसके घूमने के वेग (जिसे कोणीय वेग भी कहा जाता है) का उत्पाद होता है, हमेशा एक-सा रहेगा। इसलिए, अगर किसी तंत्र का द्रव्यमान ज़्यादा केन्द्रित हो तो वह तंत्र ज़्यादा तेज़ी-से घूमेगा। और अगर द्रव्यमान फैला हुआ हो तो घूमने की चाल कम हो जाएगी। इस सिद्धान्त को समझाने वाला एक बढ़िया वीडियो इस लिंक पर देखा जा सकता है : https://www.youtube.com/watch?v=_eMH07Tghs0.

इतना द्रव्यमान होता है कि उनसे सैकड़ों या हज़ारों तारे बन सकते हैं। किसी तारे का जन्म विखण्डन की प्रक्रिया के कारण होता है। खगोलशास्त्र में बेहद दिलचस्पी के साथ अध्ययन की जाने वाली विखण्डन की प्रक्रिया में किसी अपेक्षाकृत बड़ी खगोलीय वस्तु में से छोटे खण्ड अलग हो जाते हैं और स्वतंत्र रूप से विकसित होने लगते हैं। किसी अन्तरतारकीय निहारिका में विखण्डन की प्रक्रिया कई अलग-अलग तरीक़ों से प्रारम्भ हो सकती है - जैसे किसी विस्फोटक तारे से लगने वाला बाहरी आघात, किसी आकाशगंगा से निकलने वाली कोई दाब तरंग या आन्तरिक विक्षोभ। ये प्रक्रियाएँ अत्यन्त जटिल होती हैं, और इन्हें केवल सुपरकम्प्यूटरों की मदद से समझा जा सकता है।

यह बहुत सम्भव है कि ओरायन निहारिका में नए बने तारों (**चित्र-7** देखें) की तरह हमारा सूर्य भी क़रीब 500 करोड़ साल पहले किसी बड़ी निहारिका के भीतर मौजूद किसी छोटे-से खण्ड से बना हो। आइए हम इस विखण्डित अंश को **पूर्व-सौर निहारिका** कहें। एक बार विखण्डित होने के बाद, पूर्व-सौर निहारिका अपने ही भार से ढहने लगी और हर क़दम पर उसका आकार सिकुड़ता चला गया।

ढहते जाने के साथ पूर्व-सौर निहारिका का तापमान बढ़ना शुरू हो गया। ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि ढहते हुए तारे की गुरुत्वीय ऊर्जा पहले तो गतिज ऊर्जा में बदलती है, और फिर ताप ऊर्जा में (यानी ऊष्मा)। ढहती हुई निहारिका अपने केन्द्र में सर्वाधिक गर्म थी जहाँ उसका अधिकांश द्रव्यमान गैस की एक बहुत बड़ी गेंद की शक्ल में केन्द्रित था (**चित्र-8** देखें)।

गैस की इस गेंद का सूर्य बनना नियति थी, लेकिन एकदम से ऐसा हुआ हो, ऐसा नहीं हैं क्योंकि इसके केन्द्र में नाभिकीय संलयन की अभिक्रियाएँ शुरू होने के लिए दशाएँ

बॉक्स-2 : गतिविधि क्षेत्र : अव्यवस्था से व्यवस्था। किसी परितारकीय चक्र वाले आदिसूर्य का निर्माण एक धीमी प्रक्रिया है जो कई करोड़ साल तक चलती है। लेकिन दिलचस्प, और शायद सहज समझ के विपरीत बात यह है कि किसी निहारिका में गैस के खण्ड का आकार और स्वरूप जो भी हो, अपने ढहने के कुछ करोड़ साल बाद वह आकार बदल लेगा। अपने नए आकार में उसके केन्द्र में घूमता हुआ गैस का एक बड़ा गोला रहेगा, और उसी दिशा में उसके इर्द-गिर्द पदार्थ का एक चक्र होगा। यह अव्यवस्था में से व्यवस्था के निकलने का एक उदाहरण है।

इसी प्रकार के किसी क्रियाकलाप को देखने के लिए एक सरल प्रयोग करें। पानी से भरे कटोरे में चुटकी भर रंगीन पाउडर या हल्दी पाउडर को जल्दी से और बेतरतीब ढंग से घोल लें। कुछ पल इसे ऐसा ही छोड़ दें और देखें कि क्या होता है। आप पानी को कितने ही बेतरतीब ढंग से चलाएँ, पाउडर लगभग हमेशा ही किसी एक दिशा में धीमी चाल से घूमता रहेगा।

चित्र-11 : हमारे घरों में बनने वाली धूल की गेंदें (जिन्हें डस्ट बनी भी कहा जाता है) अभिवृद्धि (accretion) का एक जीता-जागता उदाहरण हैं।
Credits: Jellaluna. URL: https://www.flickr.com/photos/90859240@N00/3920518005. License: CC-BY.

अनुकूल नहीं थीं। खगोलज्ञ ऐसे खिलते हुए तारों को **आदिस्टार (protostars)** कहते हैं। हालाँकि इस समय तक नाभिकीय संलयन शुरू नहीं हुआ था लेकिन गुरुत्वीय ऊर्जा का रूपान्तरण ही आदिसूर्य (proto-Sun) का जलना शुरू करने के लिए पर्याप्त रहा होगा।

आदिग्रह चक्र - ग्रहों के निर्माण में एक महत्त्वपूर्ण मील का पत्थर

ग्रहों के बनने के मौजूदा प्रचलित प्रतिरूप के अनुसार, आदिसूर्य की उत्पत्ति के बाद उसके इर्द-गिर्द बहुत दिलचस्प आकार निर्मित होने लगा। ढहती हुई निहारिका का एक भाग चपटा हो गया और उसने आदिसूर्य के चारों तरफ़ पदार्थ का एक मोटा चक्र बना दिया। पदार्थ से बने इस चक्र को **परितारकीय चक्र** (यानी, तारे का चक्कर लगाने वाली तश्तरी), या **आदिग्रह चक्र** (यानी, ग्रहों के निर्माण से पहले निर्मित होने वाला चक्र) कहा जाता है।

यह चक्र तंत्र के कोणीय संवेग को संरक्षित रखने की ज़रूरत के कारण बनता है। कोणीय संवेग के संरक्षण का सिद्धान्त काफ़ी सरल है। हम अपने जीवन में नियमित रूप से इसका अनुभव करते हैं। क्या आप कभी घूमने वाली कुर्सी पर बैठे हैं? अगली बार जब आप बैठें तो अपने दोस्तों से कहें कि वे आपकी कुर्सी को घुमाएँ। अपने हाथ बाहर की ओर फैला लें। (**चित्र-10** देखें)। अगर आप चाहें तो अपने पैरों को भी फैला सकते हैं। कुछ बार घूमने के बाद हाथों और पैरों दोनों को अन्दर की ओर मोड़ लें। फिर इसे दोहराएँ और देखें कि आपके घूमने की चाल पर इसका क्या असर पड़ता है।

जब पूर्व-सौर निहारिका आकार में सिकुड़ी, तो उसने तेज़ी-से घूमना शुरू कर दिया। घूमने के वेग में हुई इस बढ़ोतरी से यह सुनिश्चित हो गया कि पूरा-का-पूरा बादल केन्द्रीय आदिसूर्य में ही नहीं ढह गया। बल्कि इसके कुछ हिस्से ने परितारकीय चक्र का निर्माण कर लिया। आकलन बताते हैं कि ढहती निहारिका के द्रव्यमान का लगभग 99% हिस्सा सूर्य में गया होगा, जबकि सिर्फ़ 1% अंश इस चक्र में गया होगा। और इसी 1% द्रव्यमान से ग्रहों, उनके चन्द्रमाओं, क्षुद्रग्रहों और सौर मण्डल में दिखाई देने वाली बाक़ी हर चीज़ का निर्माण हुआ है।

बॉक्स-3 : वह कौन-सा बल होगा जिसने धूल के कणों से ग्रहों के विकास की प्रक्रिया को शुरू किया होगा? सबसे आम अनुमान होगा गुरुत्वाकर्षण। हालाँकि गुरुत्वाकर्षण ने सौर मण्डल के निर्माण में निश्चित ही महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई लेकिन ग्रहों के विकास के बीज बोने वाला यह प्रथम और सबसे निर्णायक बल नहीं था। आदिग्रह चक्र में मौजूद धूल के लघु कण इतने छोटे और इतने हल्के थे कि गुरुत्वाकर्षण की उनके बीच कोई महत्त्वपूर्ण भूमिका नहीं हो सकती थी। क्या आपने कभी यह देखा है कि किसी गुब्बारे को किसी ऊनी या सूती कपड़े पर रगड़ने के बाद वह दीवार पर चिपकने लगता है? या किसी सतह पर घिसने के बाद जब आप प्लास्टिक के स्केल को अपने सिर के बालों के क़रीब लाते हैं तो आपके बाल खड़े होने लगते हैं? इन मामलों में काम करने वाला मुख्य आकर्षण बल है स्थिरवैद्युतिकीय बल, यानी आवेशित कणों के बीच काम करने वाला बल। इसी स्थिरवैद्युतिकीय बल की वजह से आदिग्रह चक्र में मौजूद छोटे कण और ढेले एक-दूसरे से जुड़कर आकार में बड़े होते चले गए।

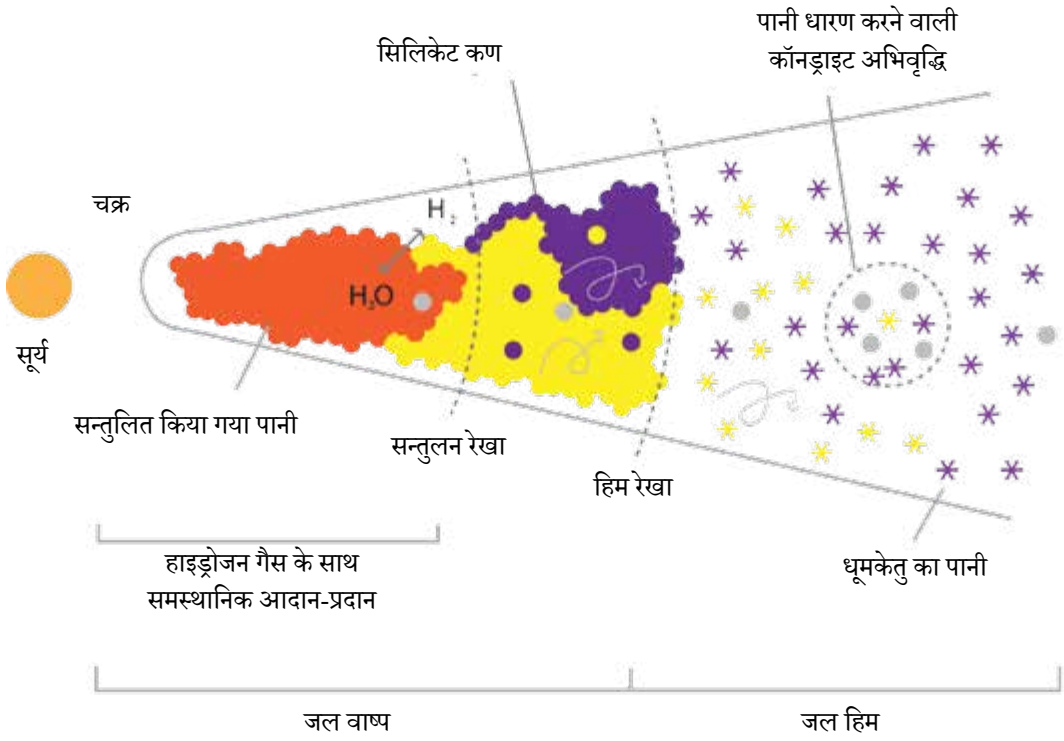

चित्र-12 : आदिग्रह चक्र के तापमान यह तय करते हैं कि किसी स्थान पर कौन-से रासायनिक तत्व संघनित होते हैं। नए बने सूर्य के नजदीक, भारी धातुओं से बने कण, जिनके गलनांक भी बहुत ऊँचे थे, ठोस पदार्थ बने रहे। इतने ऊँचे तापमानों के कारण बर्फ़ीले पदार्थ आसानी से वाष्प बन गए। ये सूर्य से दूरी हो जाने पर ठोस पदार्थों के रूप में संघनित हुए। सूर्य के विकिरण के दबाव ने गैसों को भी सौर मण्डल के बाहरी क्षेत्रों, अधिकांशतः मंगल की कक्षा के परे, तक खदेड़ दिया। आदिग्रह चक्र में पदार्थों के इस पृथक्करण के कारण ही आज हमें भीतरी स्थलीय ग्रहों और बाहरी गैस दानवों के बीच की विविधता दिखाई देती है।

चक्रों से ग्रहों तक - सबसे प्रमुख कुछ करोड़ वर्ष

पृथ्वी या बृहस्पति जैसे किसी बड़े ग्रह को रेत के आकार के कणों को जोड़-जोड़कर बनाने की ज़रा कल्पना करें। लेकिन यह कितना भी अजीब और अवास्तविक लगे, ऐसा लगता है कि हमारे सौर मण्डल के मामले में ठीक यही हुआ होगा। युवा सूर्य के इर्द-गिर्द घूमती गैस और धूल से ग्रहों का बनना एक आहिस्ता चली प्रक्रिया थी जो कई करोड़ सालों में पूरी हुई। ये वर्ष काफ़ी नाटकीय रहे होंगे क्योंकि स्थितियाँ कई तरीक़ों से भिन्न हो सकती थीं, और ग्रहों का निर्माण अवरुद्ध हो सकता था और सौर मण्डल में उनके दीर्घकालिक स्थायित्व पर भी विपरीत असर पड़ सकता था।

आगे हुई घटनाओं के क्रम में, सबसे पहले घूमते हुए आदिग्रह चक्र में धीमी गति से

	उदाहरण	सामान्य संघनन तापमान	सापेक्षिक प्रचुरता (द्रव्यमान के अनुसार)
धातु	लोहा निकिल ऐल्यूमीनियम	1000-1600 केल्विन	0.2%
चट्टान	विभिन्न खनिज	500-1300 केल्विन	0.4%
हाइड्रोजन के यौगिक	पानी (H_2O) मीथेन (CH_4) अमोनिया (NH_3)	<150 केल्विन	1.4%
हाइड्रोजन और हीलियम गैस	हाइड्रोजन हीलियम	निहारिका में संघनित नहीं होते	98%

चित्र-13 : सौर निहारिका के पदार्थ। सौर निहारिका में पाए जाने वाले चार प्रकार के पदार्थों का सार और प्रत्येक प्रकार के उदाहरण और उनके संघनन के सामान्य तापमान। वर्ग हर प्रकार के सापेक्षिक अनुपातों (द्रव्यमान के अनुसार) को निरूपित करते हैं।

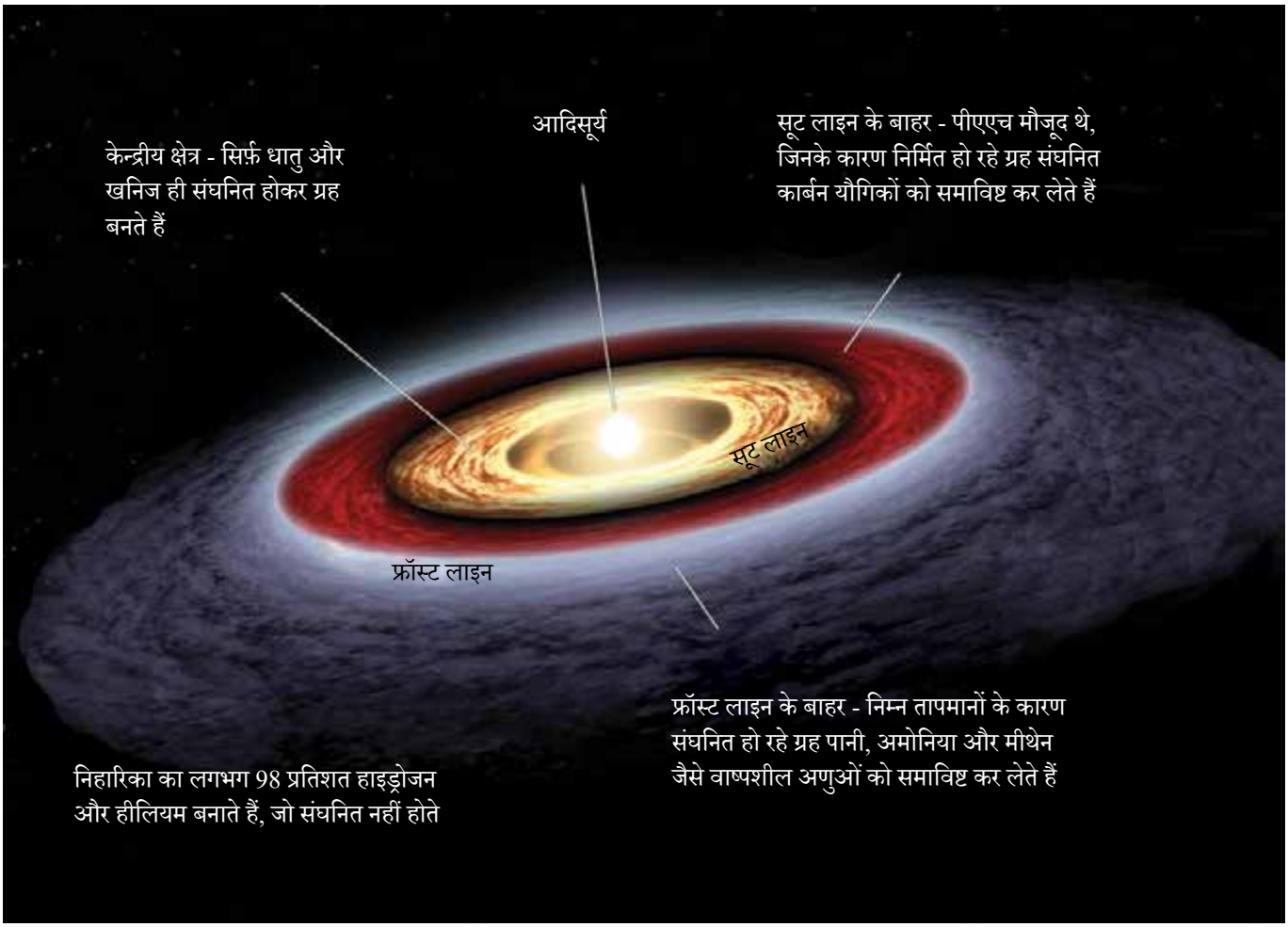

चित्र-14 : एक कलाकार द्वारा आदिसूर्य और उसके इर्द-गिर्द बने चक्र की कल्पना। सौर मण्डल के भीतरी क्षेत्र में ऊँचे गलनांक वाली धातुएँ और खनिज संघनित हुए और उन्होंने स्थलीय ग्रहों का निर्माण किया। इसके विपरीत, सिर्फ़ फ्रॉस्ट लाइन के परे ही आसानी से वाष्पशील यौगिक ठोस पदार्थ बन सके। स्थलीय ग्रहों और गैस दानवों की अलग-अलग रासायनिक संरचनाओं के पीछे मौजूद प्रमुख कारण है पूरे आदिग्रह चक्र की ताप प्रवणता।
Credits: © NASA/JPL-Caltech.

हुआ पदार्थ का संघनन था जिससे कुछ सेंटीमीटर के आकार के छोटे-छोटे ढेले बन गए। जब इन गोलों का एक-दूसरे से टकराव हुआ तो ये स्थिरवैद्युतिकीय (electrostatic) बल के कारण आपस में जुड़ गए। जब ये ढेले कुछ सेंटीमीटर आकार के पत्थर में तब्दील हो गए तो गुरुत्वाकर्षण बलों का खेल शुरू हो गया। गुरुत्वाकर्षण बल के कारण छोटे पत्थरों ने भी और पदार्थ को अपनी ओर आकर्षित किया और वे भी धीरे-धीरे बड़े बन गए। छोटी वस्तुओं के किसी बल के अधीन काम करते हुए एक साथ जुड़ने और बड़े होते जाने की प्रक्रिया **अभिवृद्धि** कहलाती है। आप अपने घर में भी अभिवृद्धि का उदाहरण देख सकते हैं। आपने देखा होगा कि जब फर्नीचर और दीवारों के कोनों और किनारों को नियमित रूप से साफ़ नहीं किया जाता तो इन स्थानों की धूल इकट्ठी होकर गेंदों की शक्ल ले लेती है (**चित्र-11** देखें)। यह **अभिवृद्धि** - किसी बल के प्रभाव में काम करते हुए छोटी वस्तुओं का साथ मिलना और बड़ा हो जाना - का उदाहरण है।

अभिवृद्धि की प्रक्रिया के तहत बने शैल और चट्टानें **शिशुग्रह (planetesimals)** (यानी बहुत छोटे-छोटे ग्रह) कहलाते हैं। शिशुग्रह, ग्रह नहीं होते। हम उन्हें ऐसे संघनित पदार्थ के टुकड़ों के रूप में देख सकते हैं जो धीरे-धीरे अपने में और द्रव्यमान मिला सकते हैं, और बहुत दूर के भविष्य में ग्रह बन सकते हैं। किस प्रकार के रासायनिक यौगिक संघनित होकर ठोस शिशुग्रह बने, यह मोटेतौर पर आदिग्रह चक्र के तापमान पर निर्भर था। आदिग्रह चक्र के किसी भी क्षेत्र का तापमान केन्द्रीय आदिसूर्य से दूरी द्वारा तय होता था। सूर्य की प्रचण्ड गर्मी के कारण आदिग्रह चक्र का सबसे अधिक तापमान उसके केन्द्र के क़रीब था, लेकिन यह तापमान आदिग्रह चक्र के केन्द्र से उसके बाहरी क्षेत्रों की ओर धीरे-धीरे से कम होता गया (**चित्र-12** देखें)।

आदिग्रह चक्रों के निर्माण और उनके विकास का अध्ययन करने वाले खगोलज्ञ अक्सर **फ्रॉस्ट लाइन (पाला रेखा)** की बात करते हैं, एक ऐसी सीमा जिसके परे

शीघ्र वाष्पशील यौगिक जैसे पानी, ठोस पदार्थ के रूप में रह सकते हैं। फ्रॉस्ट लाइन से कम दूरियों पर ये वाष्पशील यौगिक सिर्फ़ अपने वाष्प स्वरूप में ही रहेंगे। पानी तथा हाइड्रोजन आधारित कई अन्य यौगिकों जैसे मीथेन और अमोनिया के लिए लगभग 200 केल्विन तापमान ठोस रूप से वाष्प रूप में रूपान्तरण के लिए एक अच्छा अनुमान है। यह ध्यान में रखते हुए कि अलग-अलग वाष्पशील यौगिकों के अलग-अलग गलनांक होते हैं, इसलिए ज़्यादा सम्भव है कि फ्रॉस्ट लाइन एक सटीक रेखा होने के बजाय एक क्षेत्र हो। आज के सौर मण्डल में फ्रॉस्ट लाइन मंगल और बृहस्पति की कक्षाओं के बीच है। सुदूर अतीत में, जब सूर्य बहुत प्रकाशमान नहीं रहा होगा, तब फ्रॉस्ट लाइन ज़्यादा क़रीब रही होगी।

फ्रॉस्ट लाइन के भीतर आने वाले, ऊँचे तापमान वाले क्षेत्रों (500 केल्विन-1500 केल्विन) में सिलिकेट जैसे अवाष्पशील पदार्थ और लोहा, निकिल, ऐल्यूमीनियम से बने धातु यौगिक संघनित होकर कठोर कण बन गए। ये कठोर कण पहले पथरीले शिशुग्रह बने और फिर भीतरी सौर मण्डल के स्थलीय ग्रह (यानी बुध शुक्र, पृथ्वी और मंगल) बने। फ्रॉस्ट लाइन के परे हाइड्रोजन के यौगिक संघनित होकर बर्फ़ीले कण बन गए। बाहरी सौर मण्डल में अभी भी सिलिकेट और धातुएँ मौजूद थीं, पर हाइड्रोजन यौगिकों की संख्या उनकी तुलना में कहीं ज़्यादा थी। इसलिए, सौर मण्डल के बाहरी क्षेत्रों में विकसित हुए शिशुग्रह मुख्यतः हाइड्रोजन यौगिकों से बनी बर्फ़ीली चट्टानें थीं जिनके भीतर सिलिकेट के कण और धातुओं के अंश भी शामिल थे।

चित्र-15 : ओरायन निहारिका में युवा तारों के चारों ओर मौजूद आदिग्रह चक्रों के चार उदाहरण। हर तस्वीर के केन्द्र में दिखने वाली चमकदार वस्तु एक नया जन्मा तारा है (एक आदिसूर्य) जिसके चारों तरफ़ ऐसे पदार्थों का एक विस्तृत चक्र मौजूद है जो हो सकता है बाद में जाकर ग्रहों, क्षुद्रग्रहों और धूमकेतुओं को जन्म दे।
Credits: © STScI / NASA and ESA.

सबसे हल्के तत्व, हाइड्रोजन और हीलियम, प्रारम्भ में गैस रूप में ही रहे और ठोस पदार्थों में संघनित हुए बिना ढह गई सौर निहारिका में हर कहीं फैल गए। फिर नए उत्पन्न हुए सूर्य द्वारा विकिरत प्रकाश के दबाव ने इन गैसों को आदिग्रह चक्र के भीतरी क्षेत्रों से बाहरी क्षेत्रों की ओर धकेल दिया, उसी तरह जिस तरह हवा नाव के पाल को चलाती है। प्रकाश के इस दबाव को वैज्ञानिक **विकिरण दाब** कहते हैं। इस तरह हाइड्रोजन और हीलियम गैसों का अधिकांश हिस्सा सौर मण्डल के बाहरी क्षेत्रों में जमा हो गया। वहाँ बर्फ़ीले शिशुग्रहों ने इन गैसों को बड़ी मात्राओं में अपने में मिला लिया, और धीरे-धीरे आकार में बढ़ते हुए वे बृहस्पति और शनि जैसे गैस दानव बन गए। इस परिदृश्य के मुताबिक, हम अपेक्षा करते हैं कि इन गैस दानव रूपी ग्रहों का केन्द्रीय भाग

चित्र-16 : ओरायन निहारिका में नए जन्मे तारों का वर्गीकरण। ओरायन निहारिका में वर्तमान में हो रहे तारों और ग्रहों के निर्माण के हज़ारों उदाहरण मौजूद हैं। ध्यान से देखें तो आप इनमें से कुछ युवा तारों के इर्द-गिर्द आदिग्रह चक्रों की उपस्थिति को देख पाएँगे।
Credits: © NASA/ESA and L.Ricci (ESO).

बर्फ़ीला होगा, लेकिन अभी तक ये दावे सिर्फ़ अनुमान ही हैं। ग्रह वैज्ञानिकों के लिए, अन्तरिक्ष यानों के प्रेक्षणों से यह पता लगाना, कि बृहस्पति और शनि जैसे बड़े ग्रहों के भीतरी क्षेत्र किस चीज़ के बने होंगे, बड़ा पेचीदा रहा है। थोड़ी हाइड्रोजन और हीलियम गैस को स्थलीय ग्रहों ने भी खींचा और अपना शुरुआती वातावरण बनाया।

जैसे-जैसे यह प्रक्रिया अपने अन्त की ओर पहुँची, कई शिशुग्रह नए बने ग्रहों के बीच में बिखरे रहे। ये अवशेष ही बाद में धूमकेतु और क्षुद्रग्रह बन गए। उनका पदार्थ संघटन ग्रहों के जैसा ही था, यानी भीतरी सौर मण्डल में क्षुद्रग्रह ठोस पत्थर और धातु के बने थे, बाहरी सौर मण्डल में नाज़ुक बर्फ़ीले धूमकेतु। और इन अवशेषों में भी उसी तल पर लगभग वृत्ताकार कक्षाएँ रही होंगी, जिस तल पर ग्रहों की कक्षाएँ थीं। पर समय गुज़रने के साथ, जैसे-जैसे ये शिशुग्रह बड़े ग्रहों के नज़दीक होते गए, वैसे-वैसे गुरुत्वाकर्षण शक्तियों ने उनकी कक्षाओं को मनमाने ढंग से किन्हीं भी दिशाओं में गिरा दिया होगा, ठीक उसी तरह जिस तरह गुलेल से निकली गोली। इस प्रक्रिया के द्वारा अच्छी-ख़ासी संख्या में ये शिशुग्रह सौर मण्डल की सीमाओं से बाहर निकल गए होंगे। कई अन्य शिशुग्रह ऐसी लम्बी कक्षाओं में पहुँच गए होंगे जो उन्हें सौर मण्डल के भीतर और बाहर ले जाती रही होंगी। दूसरी तरफ़, अपने काफ़ी अधिक द्रव्यमान के कारण ग्रह, इस तरह की भिड़न्तों से अविचलित रहे, और अन्ततः गतिशील स्थाई कक्षाओं में स्थापित हो गए।

बहुत दूर से मिले साक्ष्य

सौर मण्डल (और सामान्य रूप से सभी ग्रह मण्डलों) के निर्माण के बारे में यह वृत्तान्त **निहारिका परिकल्पना** कहलाती है। परिकल्पना तर्क पर आधारित किसी बात के लिए की गई व्याख्या होती है। यह कोई सिद्धान्त नहीं होती, क्योंकि इसके हर पक्ष पूरी तरह प्रमाणित नहीं होते। पर यह कोई अनायास लगा दिया गया अनुमान भी नहीं होती। सबसे पहले अठारहवीं सदी के अन्तिम वर्षों में, बहुत ही अपरिष्कृत रूप में सामने रखी गई निहारिका परिकल्पना को ग्रहों के निर्माण की प्रक्रिया में नई अन्तर्दृष्टियों के आधार पर समय-समय पर परिष्कृत और परिवर्तित किया जाता रहा है।

हम यह सोच सकते हैं कि निहारिका परिकल्पना का कितना प्रतिशत ऐसा है जिसे प्रमाणों का आधार मिला हुआ है। जैसा कि पहले ही कहा गया है, सौर मण्डल की उत्पत्ति अतीत की एक ऐसी घटना है जहाँ तक हमारी कोई सीधी पहुँच नहीं है। पर यह मानना तार्किक ही है कि हमारे सौर मण्डल के निर्माण में प्रमुख भूमिका निभाने वाली वही ताक़तें बाक़ी ब्रह्माण्ड में भी काम कर रही होंगी। बल्कि, इस क्षण भी, अन्य नए जन्मे तारों के इर्द-गिर्द कुछ ग्रह मण्डल आकार ले रहे होंगे। हमारी मिल्की-वे आकाशगंगा के भीतर ही तारों के बनने वाले क्षेत्रों की बहुत हाई रैजोल्यूशन द्वारा खींची जाने वाली तस्वीरों के माध्यम से खगोलज्ञों ने ग्रह मण्डलों की उत्पत्ति की कई घटनाओं का पता लगाया है। ओरायन निहारिका, जिसकी पहले चर्चा की गई है (**चित्र-4अ** देखें), में इसके कई उदाहरण मौजूद हैं। गैस से भरे इसके विशाल स्तम्भों में कई हज़ार नए जन्मे तारों का बसेरा है। ऐसे प्रेक्षण इस धारणा की मज़बूती से पुष्टि करते हैं कि, अन्तरतारकीय विस्तार में पाए जाने वाले गैस के बादलों के भीतर सघन खण्डों के गुरुत्वाकर्षण बल के कारण ढह जाने के कारण तारों का निर्माण होता है। आज हम मिल्की-वे के भीतर ही तारों के निर्माण होने के ऐसे सैकड़ों स्थानों, या तारकीय नर्सरियों, के बारे में जानते हैं।

अपने हाई रैजोल्यूशन कैमरों के द्वारा हबल अन्तरिक्ष दूरदर्शक ने यह भी पता लगाया है कि ओरायन निहारिका के काफ़ी सारे शिशु तारों के चारों ओर विस्तृत चक्र हैं (**चित्र-15** और **16** देखें)। ये आदिग्रह चक्र 100 खगोलीय इकाइयों (एक खगोलीय इकाई, या एयू, सूर्य और पृथ्वी के बीच की दूरी को कहते हैं, यानी, लगभग 15 करोड़ किलोमीटर) से भी अधिक की त्रिज्याओं तक फैले रहते हैं। अगर हम समय को 400-500 करोड़ साल पहले के काल में ले जा सकते तो हमारा सौर मण्डल भी कुछ सौ प्रकाश वर्षों की दूरी से इन्हीं में से किसी तारे जैसा दिखाई देता।

निहारिका परिकल्पना की पुष्टि करने में एक महत्त्वपूर्ण पहलू है अन्य तारों के इर्द-गिर्द पूर्ण रूप से निर्मित ग्रहों की खोज करना। 1990 के दशक से खगोलज्ञ नियमित रूप से अन्य तारों के इर्द-गिर्द ग्रह मण्डलों की खोज करते रहे हैं। इन **ग़ैर-सौरीय ग्रहों** की खोज कई अलग-अलग तकनीकों के इस्तेमाल द्वारा की गई हैं। वर्तमान में, इन तकनीकों में से जो सबसे सफल तकनीक है वह पक्षपातपूर्ण ढंग से अपने मेज़बान तारों के इर्द-गिर्द चक्कर लगाते बृहस्पति और शनि के आकार के बड़े ग्रहों की तलाश करती है। अब जाकर, बिलकुल हाल ही में, ये तकनीकें परिष्करण के उस स्तर तक पहुँची हैं जो छोटे ग्रहों की खोज के लिए ज़रूरी है, हालाँकि इन ग्रहों का द्रव्यमान भी पृथ्वी के द्रव्यमान से कुछ गुना अधिक ही होता है। खगोलज्ञ ऐसे ग्रहों को **महापृथ्वी (सुपर अर्थ)** कहते हैं। पर निश्चित ही, सबसे बड़ी तलाश तो ऐसे ग्रह की ही है जिसका आकार और द्रव्यमान पृथ्वी के बराबर हो। जो सूर्य के जैसे तारे का चक्कर लगाता हो और इस तारे से उसकी दूरी इतनी हो कि सूर्य की गर्मी तरल पानी की उपलब्धता के लिए बिलकुल सही हो, जो जैसा कि हम जानते हैं, जीवन की उपस्थिति के लिए एक ज़रूरी पूर्व दशा है। यदि ऐसे किसी ग्रह का अस्तित्व है, तो इस बात को देखते हुए कि ग़ैर-सौरीय ग्रहों के शोध के क्षेत्र में बहुत

तेज़ी-से प्रगति हो रही है, बहुत सम्भव है कि हमें उसकी खोज के लिए बहुत लम्बा इन्तज़ार न करना पड़े।

इसलिए, हमारे सौर मण्डल की उत्पत्ति के बारे में हमारे सवालों के जवाब तलाशने का सबसे अच्छा तरीक़ा न सिर्फ़ सूर्य के गुरुत्वाकर्षण की सीमाओं के भीतर मौजूद वस्तुओं की पड़ताल करना है, बल्कि उन संसारों की पड़ताल करना भी है जो हमसे बहुत-बहुत दूर हैं। अन्तरिक्ष के दूर-दराज़ के क्षेत्रों की पड़ताल करने से एक प्रकार हम अपनी उत्पत्ति से जुड़े सवालों की ही खोज कर रहे हैं।

Note: Credits for the image used in the background of the article title: The new Solar System? The International Astronomical Union/Martin Kornmessernzel, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:The_new_Solar_System%3F.jpg. License: CC-BY-SA.

Resources

1. A Lunar and Planetary Institute designed activity for the classroom to help students understand the sequence of events in the formation of the solar system- http://www.lpi.usra.edu/education/timeline/activity/.
2. A short video that takes one through the formation of the solar system - https://www.stem.org.uk/elibrary/resource/26893.
3. This page from the Big History Project has a wonderful timeline on the formation of the solar system - https://www.bighistoryproject.com/home. Look under the link "Earth &The Solar System".
4. This page from the University of Colorado has several activities, appropriate for students from classes 4 – 8, to help understand the solar system - http://lasp.colorado.edu/education/outerplanets/solsys_planets.php.

आनन्द नारायणन भारतीय अन्तरिक्षविज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संस्थान में खगोलभौतिकी पढ़ाते हैं। उनका शोध इस विषय पर है कि आकाशगंगाओं के बाहर, विशाल पैमाने पर, बैरियॉनिक पदार्थ का वितरण किस तरह होता है। वे नियमित रूप से खगोलशास्त्र से जुड़ी शैक्षणिक और सार्वजनिक पहुँच की गतिविधियों में योगदान करते हैं। उन्हें भ्रमण पर जाना और दक्षिण भारत के सांस्कृतिक इतिहास की पड़ताल करना अच्छा लगता है। **अनुवाद :** भरत त्रिपाठी

जीवन की उत्पत्ति
रसायनविज्ञान से जीवविज्ञान

नीरजा व्ही. बापट, चैतन्य व्ही. मुंगी एवं सुधा राजमणी

पृथ्वी पर जीवन की शुरुआत कैसे हुई होगी, यह लम्बे समय से एक रहस्य ही रहा है। यह लेख उन घटनाओं का शृंखलाबद्ध अन्वेषण करता है जिनके कारण साधारण रसायनों का मिश्रण प्रथम जीवित कोशिकाओं में रूपान्तरित हुआ होगा। इसके साथ ही लेख यह भी दर्शाता है कि पिछले कुछ वर्षों में इस रहस्य को सुलझाने में राइबोन्यूक्लीइक अम्ल (आरएनए) एक महत्त्वपूर्ण सूत्र के रूप में सामने आया है।

जीवन की उत्पत्ति को लेकर मनुष्य हमेशा से ही आश्चर्यचकित रहा है। एक प्रसिद्ध मान्यता के अनुसार जीवधारी स्वतःजनन द्वारा अजीवित पदार्थों से सहज रूप से उत्पन्न हो सकते हैं। अधिकांश लोग अपनी-अपनी धार्मिक मान्यताओं के चलते या उसके बग़ैर भी उक्त सिद्धान्त को सत्य ही मानते रहे क्योंकि वे प्रत्यक्ष रूप से देख सकते थे कि कुछ प्रकार के जीवधारी जैसे कि पिस्सू एवं इल्ली (मैगट) धूल-मिट्टी जैसे अजैविक पदार्थों एवं मृत जन्तुओं के शरीर से उत्पन्न होते हैं। अनेक दार्शनिकों ने स्वतःजनन की इस प्रक्रिया को 'पंचतत्व' या 'जैविक ऊष्मा' (वाइटल हीट) जैसी परिकल्पनाओं द्वारा स्पष्ट करने के प्रयास भी किए। किन्तु उन्नीसवीं सदी के मध्य

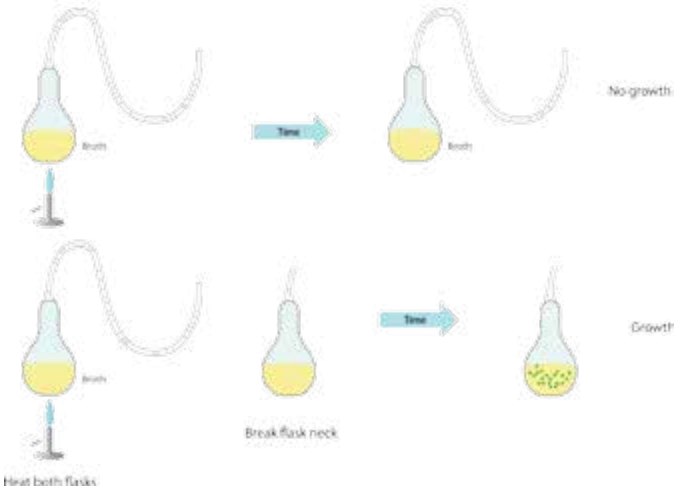

चित्र-1 : पाश्चर का हंस की गर्दन के आकार वाले फ्लास्क वाला प्रयोग। जब फ्लास्क की मुड़ी हुई नली यथावत थी तब जीवाणुरहित मांस के शोरबे में किसी प्रकार की वृद्धि नहीं हुई। इसके विपरीत, जब फ्लास्क की गर्दन तोड़ दी गई, जिसके कारण शोरबा, धूल-मिट्टी तथा हवा के सम्पर्क में आया तब सूक्ष्मजीवों की वृद्धि देखी गई।

लुई पाश्चर द्वारा किए गए प्रयोगों ने उक्त अवैज्ञानिक विचारों को असत्य प्रमाणित कर दिया।

पाश्चर ने मांस के शोरबे एवं हंस की गर्दन के आकार वाले एक विशेष प्रकार के फ्लास्क का उपयोग कर दर्शाया कि जीवन की उत्पत्ति बगैर किसी संदूषण के अजैविक पदार्थों से नहीं हो सकती (देखिए **चित्र-1**)। हंस की गर्दन के आकार वाले फ्लास्क में एक लम्बी नीचे लटकती मुड़ी हुई नली होती है जो किसी भी प्रकार के धूलकणों या बीजाणुओं (spores) को फ्लास्क में रखे मांस के शोरबे में पहुँचने से रोकती है। पाश्चर ने दो फ्लास्कों में मांस के शोरबे को उबाला - इनमें से एक फ्लास्क की गर्दन को यथावत रखा तथा दूसरे की गर्दन को तोड़ दिया। सूक्ष्मजीवों की वृद्धि बग़ैर गर्दन वाले फ्लास्क में देखी गई जबकि सामान्य फ्लास्क जीवाणुरहित रहा अर्थात उसमें किसी भी प्रकार के सूक्ष्मजीवों की उत्पत्ति नहीं हुई। प्रयोगों के इस परिणाम ने यह दर्शा दिया कि जटिल जीवन की उत्पत्ति केवल अन्य जीवित जीवधारियों से ही हो सकती है। इस घटना को Omne Uivam ex vivo कहते हैं अर्थात ''समस्त जीवन (है) जीवन के द्वारा''।

वर्तमान में हम जानते हैं कि उपरोक्त तथ्य सभी प्रकार के जीवधारियों के लिए भी लागू होता है अर्थात प्रत्येक जीवधारी की उत्पत्ति अन्य जीवधारी से जनन द्वारा होती है। उदाहरणार्थ, मांस में उपस्थित मक्खियों के अण्डों से मैगट निकलते हैं; जीवाणुओं एवं कवक के बीजाणुओं के कारण बासी खाद्य-पदार्थों/शोरबे में उनकी वृद्धि होती है तथा जटिल रचना वाले जीव लैंगिक जनन द्वारा भविष्य की पीढ़ियों को जन्म देते हैं। फिर भी यह प्रश्न तो अनुत्तरित ही रह जाता है कि सबसे प्रथम जीवधारी अस्तित्व में कैसे आया होगा? किस प्रकार के रासायनिक मिश्रणों ने जीवन की उत्पत्ति को सम्भव बनाया होगा? जीवन के प्रारम्भिक स्वरूपों ने ऊर्जा के किन स्त्रोतों का उपयोग किया होगा? पृथ्वी पर जीवन की उत्पत्ति को लेकर इस तरह के ढेरों प्रश्नों के अन्तिम निष्कर्ष ढूँढ़ना एक विकट चुनौती है।

इस बात को समझने के लिए कि किन विभिन्न चरणों में जीवन की उत्पत्ति हुई होगी, हमें समस्त जीवधारियों की बुनियादी क्रियात्मक इकाई कोशिका के स्तर पर जाना होगा। कोशिका सभी जीवों की आधारभूत इकाई मानी जाती है। एक कोशिका अपने आप में पूर्ण रूप से क्रियात्मक इकाई होती है जो कि एककोशिकीय जीवों जैसे बैक्टीरिया, अमीबा, पैरामीशियम, यीस्ट आदि द्वारा प्रदर्शित किया जाता है। वास्तव में प्रत्येक कोशिका को एक ऐसी लघु फैक्ट्री के समान माना जा सकता है जो जीवित रहने, गति करने, वातावरण से भोज्य पदार्थों के अवशोषण एवं अपने ही समान सन्तति उत्पन्न करने हेतु जनन करने के लिए आवश्यक ऊर्जा उत्पन्न कर सके। इस चमत्कारिक अद्भुत कार्य को करने के लिए कोशिका प्रोटीन नामक सूक्ष्म मशीनों का उपयोग करती है। प्रत्येक प्रकार का प्रोटीन कोशिका के लिए विशिष्ट कार्य करता है। प्रोटीन निर्माण एक विस्तृत प्रक्रिया द्वारा किया जाता है, जिसके अन्तर्गत कोशिका के आनुवंशिक पदार्थ से प्राप्त निर्देशों के अनुसार ऐमीनो अम्लों को स्थानान्तरण की प्रक्रिया के एक निश्चित क्रम में जोड़ा जाता है। कोशिका का आनुवंशिक पदार्थ डिऑक्सीराइबोन्यूक्लीक अम्ल (डीएनए) होता है जो कोशिकीय प्रक्रियाओं को सम्पन्न करने के लिए समस्त सूचनाओं का संग्रहण करता है। इस तरह से वह 'जीवन के ब्लू प्रिंट' का कार्य करता है। स्वयं डीएनए का निर्माण अनेक प्रकार के एंजाइमों की क्रिया द्वारा सम्पन्न होता है। सभी एंजाइम भी प्रोटीन ही होते हैं। अर्थात डीएनए में संग्रहित सूचना के अनुरूप प्रोटीनों का संश्लेषण होता है एवं डीएनए के निर्माण में प्रोटीन आवश्यक होते हैं। यह इन दो प्रकार के महत्त्वपूर्ण जैविक अणुओं के परस्पर आधारित निर्माण की प्रक्रिया है, जो जीवन की उत्पत्ति को रहस्यमय बनाती है। इन दोनों अणुओं, डीएनए या प्रोटीन में से पहले कौन अस्तित्व में आया होगा अर्थात पहले सूचना या क्रिया (उत्प्रेरण)? यह प्रश्न पहले कौन 'मुर्गी या अण्डा' के समान ही दुविधापूर्ण है।

इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए वैज्ञानिकों ने अनेक प्रकार के प्रयास किए हैं, एक सम्भावित उत्तर है कि दोनों ही नहीं! इसके बजाए रासायनिक रूप में डीएनए का सम्बन्धी एक अन्य जैविक अणु आरएनए सर्वप्रथम अस्तित्व में आया होगा। आरएनए एक अनोखा जैविक अणु है, जो डीएनए एवं प्रोटीन दोनों के कार्य कर सकता है अर्थात आनुवंशिक सूचनाओं का संग्रहण (जैसे कि आरएनए वायरसों में) तथा उपापचयी क्रियाओं के उत्प्रेरण में (राइबोजाइम के रूप में अर्थात आरएनए के अनुक्रम जो एंजाइम के समान कार्य करते हैं)। चूँकि आरएनए ही एकमात्र ऐसा अणु है जो उपरोक्त दोनों गुणों का उपार्जन कर सकता है (केवल अपवाद स्वरूप एवं अत्यन्त असाधारण परिस्थितियों में), यह सम्भव है कि प्रारम्भिक जीवधारी आरएनए के विशिष्ट अणु हों जो एक नेटवर्क के रूप में सामूहिक रूप से कार्य करते हों

बॉक्स - 1 : उभयस्नेही (Amphiphiles)

एम्फीफीलि दो ग्रीक शब्दों *'एम्फीस'* अर्थात 'दोनों' एवं *फिला'* अर्थात 'स्नेह' से उद्भूत हुआ है। उभयस्नेही यौगिक वे होते हैं जिनमें जलस्नेही (hydrophilic/polar) तथा जलविरोधी (hydrophilic/non-polar) दोनों ही प्रकार के रासायनिक समूह उपस्थित होते हैं। इस तरह से जलीय घोलों में उभयस्नेही अणु ऐसे आकार ले लेते हैं कि उनके जलविरोधी समूह जल से दूर ही रहें। साबुन, डिटर्जेण्ट, मक्खन एवं तेल जैसे पदार्थ जिन्हें हम दैनिक जीवन में उपयोग करते हैं, उभयस्नेही पदार्थ के ही उदाहरण हैं।

(उपापचय के समान)। इस प्रकार के आरएनए नेटवर्क में हुए बाद के विकास के कारण जीवों में जटिलता आई होगी जो हमें वर्तमान में देखने को मिलती है। किन्तु यदि इस तरह से पृथ्वी पर प्रारम्भिक जीवन का विकास हुआ है, तब ये आरएनए अणु किस तरह से आपस में जुड़े होंगे कि जीवधारियों की उत्पत्ति हो गई? वातावरण की कौन-सी परिस्थितियाँ इस प्रक्रिया में सहायक हुई होंगी?

अनेक जीवाश्म अभिलेखों ने दर्शाया है कि वर्तमान में जो जैव विविधता देखने को मिल रही हैं वह करोड़ों वर्षों के दौरान एककोशिकीय इकाइयों में हुए विकास का परिणाम है। इस विकास के कारण ही जटिल बहुकोशिकीय जीवधारी अस्तित्व में आए। यह तथ्य सुझाता है कि प्रारम्भिक जीवधारी एक कोशिका से भी अधिक सरल रचना वाले रहे होंगे। वास्तव में पृथ्वी पर जीवन सम्बन्धी खोजे गए सबसे पुरातन जीवाश्म अभिलेख जो कि हाल के वर्षों में ग्रीनलैण्ड की चट्टानों से प्राप्त किए गए हैं, वे साधारण परतनुमा रचनाएँ हैं जिन्हें स्ट्रोमेटोलाइट कहते हैं। ये स्ट्रोमेटोलाइट, जो कि शाखा से लेकर शंकु के आकार के हो सकते हैं सायनोबैक्टीरिया जैसे सूक्ष्मजीवों की क्रिया के कारण निर्मित होते हैं। ये रचनाएँ लगभग 370 करोड़ वर्ष पुरानी हैं। इनसे पहले निर्मित कोशिका के समान रचनाएँ सम्भवतया इनसे भी अधिक सरल रही होंगी। इन पुरातन रचनाओं को प्रायः 'आदिकोशिकाएँ' (protocells) कहते हैं। राष्ट्रीय वैमानिकी एवं अन्तरिक्ष प्रशासन (नासा) की ओर से आदिकोशिका को इस प्रकार से परिभाषित किया गया है - 'आदिकोशिका एक झिल्ली से घिरा हुआ आनुवंशिक पदार्थ है, जो वृद्धि, प्रतिकृति निर्माण एवं डार्विनी विकास के लिए सक्षम है।' इस तरह की रचना की कल्पना करने के लिए एक ऐसी आदिकोशिका की कल्पना करें जिसमें केवल दो आधारभूत घटक हैं - एक बाह्य झिल्ली जो प्रोटीन या न्यूक्लीक अम्ल जैसे क्रियाशील आणविक तंत्र को घेरे हुए है। मात्र इन दो घटकों की उपस्थिति ने ही आदिकोशिका को जटिल जीवधारियों में विकसित होने योग्य बनाया होगा।

समस्त आधुनिक जीवित कोशिकाएँ भी झिल्ली से घिरी रचनाएँ होती हैं। ये झिल्लियाँ अणुओं के कोशिका के भीतर एवं बाहर आने-जाने को चयनात्मक रूप से नियंत्रित करने के साथ ही उनके उपापचयी नेटवर्क एवं आनुवंशिक पदार्थ को बाहरी वातावरण से भी सुरक्षा प्रदान करती हैं। यद्यपि कोशिकाओं को सीमित करने वाली झिल्लियों का संघटन कोशिका के प्रकार के अनुरूप बदलता रहता है, ये मुख्य रूप से जटिल लिपिड अणुओं द्वारा निर्मित होती हैं। इसके विपरीत आदिकोशिकाओं में आधुनिक कोशिकाओं की तरह ऐसी कोई विस्तृत मशीनरी नहीं थी जिसे वे जटिल लिपिड अणुओं का संश्लेषण करते हुए उनकी पूर्णता को भी बनाए रखें। इस तरह से यह सम्भव है कि उनको घेरने वाली झिल्लियाँ अत्यन्त सरल वसा अम्लों जैसे उभयस्नेही अणुओं द्वारा निर्मित रही हों। (देखिए **बॉक्स-1**) अध्ययन दर्शाते हैं कि न केवल साधारण एवं जटिल उभयस्नेही स्वयं एकत्र होकर झिल्लीनुमा रचनाओं का निर्माण करते हैं बल्कि कुछ परिस्थितियों में वे विभाजित होकर इसी तरह की और रचनाओं का निर्माण भी कर सकते हैं। अन्य प्रयोगों द्वारा दर्शाया जा चुका है कि इन रोचक अणुओं में न्यूक्लीक अम्लों एवं प्रोटीनों को सहज रूप से पुटिकाओं रूपी कक्षों में संपुटन (encapsulation) करने की क्षमता होती है। इन संपुटनकारी झिल्लियों की मुख्य भूमिका आनुवंशिक

बॉक्स-2 : जीवन पूर्व रसायनशास्त्र

जैसा कि नाम से स्पष्ट है, जीवन पूर्व रसायनशास्त्र उन रासायनिक घटनाओं का अध्ययन है, जो पृथ्वी पर जीवन के अस्तित्व में आने के पूर्व हुई थीं। इसमें कुछ ऐसी क्रियाओं का अन्वेषण किया जाता है, जैसे जैविक एकलकों का निर्माण, इन एकलकों से बहुलकों का निर्माण एवं बहुलकों के ऐसे जीवनक्षम संयोजनों का निर्माण जो अन्ततः जीवन को अस्तित्व में ला सकें। यह एक अत्याधिक अन्तरविषयी क्षेत्र है जिसमें विभिन्न विषयों जैसे रसायनशास्त्र, भूगर्भशास्त्र, कम्प्यूटर अनुकरण, खगोलशास्त्र, भौतिकशास्त्र एवं जीवविज्ञान आदि की अन्तर्दृष्टि समाहित है।

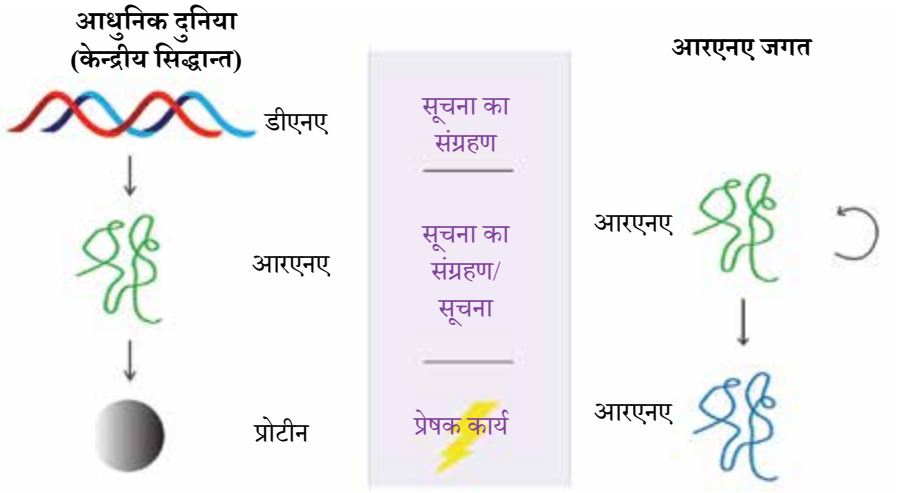

चित्र-2 : पृथ्वी पर हुए प्रारम्भिक जीवन के विकास के समय एक तथाकथित आरएनए जगत का अस्तित्व रहा होगा। माना जाता है कि आरएनए ने सूचनाओं के आदान-प्रदान अणु के रूप में कार्य करने के साथ ही तथाकथित आरएनए जगत में उत्प्रेरक का कार्य भी किया होगा।

पदार्थ की सुरक्षा करना रही होगी। फिर भी, आधुनिक कोशिका झिल्लियों के समान ही वसा अम्लों से निर्मित झिल्लियों को भी आस-पास के वातावरण से संसाधनों का चयनात्मक अवशोषण करने के लिए स्पर्धा करते हुए दर्शाया जा चुका है। विकास की प्रक्रिया के लिए यह एक अत्यन्त ही महत्त्वपूर्ण लक्षण है।

दूसरी ओर, प्रारम्भिक आनुवंशिक पदार्थ बिना किसी प्रोटीन की सहायता के कोडित सूचनाओं को अगली पीढ़ी में स्थानान्तरित करने की क्षमता रखते हैं। इस तथ्य को पिछले अनेक दशकों में स्पष्ट रूप से जीवन पूर्व रसायनशास्त्र (Prebiotic chemistry) से सम्बन्धित अनेक प्रयोगों द्वारा दर्शाया जा चुका है। (देखिए **बॉक्स-2**)। यद्यपि अकार्बनिक अभिकारकों (जैसे अमोनियम सायनेट) से कार्बनिक अणुओं (जैसे यूरिया) का संश्लेषण सर्वप्रथम फ्रेडरिक वोहलर द्वारा उन्नीसवीं सदी के आरम्भ में प्रदर्शित किया गया था, जीवन पूर्व रसायन के क्षेत्र में वास्तविक कार्य का आरम्भ यूरे-मिलर द्वारा किए गए प्रसिद्ध प्रयोग से माना जाता है। 1950 के दशक में जीव-रसायनशास्त्री स्टेनले मिलर एवं हेरॉल्ड यूरे ने प्रदर्शित किया कि ऐमिनो अम्ल जैसे जटिल कार्बनिक यौगिकों का सहज रूप से निर्माण अत्यन्त सरल रचना वाले रसायनों जैसे जल, मीथेन, अमोनिया एवं हाइड्रोजन के द्वारा नवनिर्मित पृथ्वी के समान कृत्रिम वातावरण की परिस्थितियों का निर्माण कर किया जा सकता है।

पिछले कुछ वर्षों में जीवन की उत्पत्ति पर काम करने वाले अनेक शोधकर्ता प्रारम्भिक आनुवंशिक पदार्थ के रूप में आरएनए अणु को मानने के पक्ष में रहे हैं (देखिए **चित्र-2**)। इस मत का समर्थन हमें जीवित कोशिकाओं में आरएनए द्वारा किए जाने वाले कार्यों की जानकारी से मिलता है। जैसा कि हम पूर्व में देख चुके हैं आरएनए न केवल सूचनाओं का संग्राहक अणु है बल्कि आधुनिक कोशिकाओं में प्रोटीन संश्लेषण हेतु उत्प्रेरक का कार्य भी करता है। यह तथ्य कि आरएनए अणु आधुनिक कोशिकाओं में प्रोटीन निर्माण मशीनरी में प्रमुख कार्य का निष्पादन करता है, इस बात को दृढ़ता से समर्थन भी देता है कि पृथ्वी पर आरम्भ में होने वाले जीवन के विकास के समय भी तथाकथित आरएनए जगत का अस्तित्व रहा होगा। वैज्ञानिक दर्शा चुके हैं राइबोन्यूक्लियोटाइड स्वयं एकत्र होकर आरएनए बहुलकों का निर्माण बिना किसी जैविक एंजाइम के सम्पूर्ण रासायनिक वातावरण में कर सकते हैं। वैज्ञानिक आरएनए अणुओं का विकास एंजाइमों (या राइबोजाइम) की क्रिया द्वारा प्रयोगशाला में सफलतापूर्वक दर्शा चुके हैं। दुनिया भर के वैज्ञानिक इन दिनों आरएनए और इसी के समान न्यूक्लीक अम्ल अणुओं की हूबहू रासायनिक प्रतिकृति बनाने के प्रयास कर रहे हैं। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि आधुनिक कोशिकाओं के प्रतिकृति निर्माण की प्रक्रिया में अत्यधिक नियंत्रण द्वारा अनेक प्रोटीन एक साथ मिलकर कार्य करते हैं, मात्र रासायनिक क्रियाओं द्वारा इस लक्ष्य को प्राप्त कर लेना आसान नहीं होता है।

हमारी प्रयोगशाला में इस बात को समझने सम्बन्धी शोधकार्य हो रहा है कि रसायनों के उद्भव तथा नवनिर्मित पृथ्वी के समान कृत्रिम परिस्थितियाँ निर्मित कर एंजाइम की अनुपस्थिति में न्यूक्लीक अम्लों की प्रतिकृति निर्माण का आधार क्या है। हम यह भी समझ बनाने का प्रयास कर रहे हैं कि जीवन पूर्व अणु जैसे लिपिड, मिट्टी के कण आदि की उपस्थिति में आरएनए के एकलकों द्वारा आरएनए बहुलकों के निर्माण की क्या प्रक्रिया हो सकती है? हम विशेष रूप से तथाकथित आरएनए जगत से एंजाइम मुक्त सूचना प्रेषी अणुओं की प्रतिकृतियाँ बनाने की दर एवं सटीकता को समझने का प्रयास कर रहे हैं। इन अध्ययनों का उद्देश्य प्रारम्भिक पृथ्वी पर आदिकोशिकाओं के उद्भव एवं विकास को समझना है।

निष्कर्ष के रूप में ऐसा प्रतीत होता है कि पृथ्वी पर जीवन के प्रारम्भिक इतिहास में सरल आदिकोशिकाओं का उद्भव जटिल रसायनशास्त्र की प्रक्रिया से जीवविज्ञान की ओर परिवर्तन को दर्शाता है। फिर भी इस प्रक्रिया को समझने में कतिपय चुनौतियाँ अभी भी रह गई हैं। इनमें से एक चुनौती तो आरएनए (या न्युक्लीक अम्लों) के बार-बार स्वतः प्रतिकृति चक्रों का प्रदर्शन है जिसे ''आणविक जीववैज्ञानिकों का स्वप्न'' कहा जाता है। दूसरी चुनौती के रूप में यह दर्शाना है कि स्वतंत्र जीवित रह सकने वाली आदिकोशिकाओं जैसी रचनाएँ विकास के योग्य हैं। परिणामस्वरूप, हमें हमारे लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए परखनली में कृत्रिम कोशिका निर्मित करने की दिशा में बहुत कुछ करना है। फिर भी, यह सम्भव है एवं यदि प्राप्त कर लिया तो हमारी पृथ्वी पर जीवन की उत्पत्ति सम्बन्धी चुनौतीपूर्ण प्रश्नों में से कुछ का उत्तर हम खोज सकेंगे।

Note: Credits for the image used in the background of the article title: Class I Ligase Ribozyme. David Shechner, Wikimedia Commons.
URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Class_I_Ligase_Ribozyme.jpg. License: CC-BY-SA.

नीरजा बापट बायोटेक्नोलॉजी में स्नातक एवं स्नातकोत्तर डिग्री लेने के पश्चात् पुणे स्थित इण्डियन इंस्टिट्यूट ऑफ साइंस एजूकेशन एवं रिसर्च (आईआईएसईआर) नामक संस्था में प्री-बायोटिक केमिस्ट्री में डॉक्टरेट की उपाधि हेतु अध्ययनरत हैं। मुख्य रूप से उनका कार्य सह विलेय एवं आणविक क्राउडिंग की एंजाइम मुक्त स्थानान्तरण क्रियाओं की भूमिका को आरएनए जगत परिकल्पना के सन्दर्भ में समझने पर केन्द्रित है। उनसे nirja.bapat@students.iiserpune.ac.in सम्पर्क किया जा सकता है।

चैतन्य मुंगी ने जयहिन्द कॉलेज मुम्बई से बायोटेक्नोलॉजी में स्नातक डिग्री लेने के पश्चात सन् 2011 में आईआईएसईआर पुणे में समाकलित पीएचडी कोर्स में प्रवेश लिया। इनका कार्य उन रासायनिक प्रक्रियाओं को समझना है जिनके कारण नवनिर्मित पृथ्वी पर बहुलकों का संश्लेषण हुआ होगा। चैतन्य की रुचि विज्ञान के लोकव्यापीकरण एवं सम्प्रेषण में भी रही है। उनसे cvmungi@students.iiserpune.ac.in पर सम्पर्क किया जा सकता है।

सुधा राजमणि पुणे स्थित आईआईएसईआर की केमिकल ओरिजिन ऑफ़ लाइफ (COoL) प्रयोगशाला में सहायक प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष हैं। इनका प्रमुख कार्य उन क्रमिक घटनाओं को स्पष्ट करना है जिनके कारण जीवन पूर्व पृथ्वी पर प्रारम्भिक जीवन की उत्पत्ति एवं विकास हुआ होगा। **अनुवाद :** भरत पूरे

जीवविज्ञान शिक्षा के एशियाई संगठन का छब्बीसवाँ द्विवार्षिक सम्मेलन एक प्रतिवेदन

रीतिका सूद और गीता अय्यर

जीवविज्ञान शिक्षा के एशियाई संगठन का छब्बीसवाँ द्विवार्षिक सम्मेलन 20-23 सितम्बर, 2016 को गोवा में आयोजित किया गया। जीवविज्ञान शिक्षा में वर्तमान रुझानों के व्यवहार और चुनौतियों पर शिक्षकों और शोधकर्ताओं के बीच सम्प्रेषण को बढ़ावा देना इस सम्मेलन का केन्द्र बिन्दु था। इस प्रतिवेदन में सम्मेलन की प्रमुख बातों का विवरण दिया गया है।

इस विचार से प्रेरित होकर कि शिक्षक समुदाय का आपस में जुड़ाव (नेटवर्क) होने पर शिक्षकों और विद्यार्थियों दोनों को लाभ होगा, फिलिपिंस के जीवविज्ञान शिक्षकों के एक समूह ने एक लाभ-निरपेक्ष (नॉन-प्रॉफिट) संगठन जीवविज्ञान शिक्षा का एशियाई संगठन (Asian Association of Biology Education, AABE) की शुरुआत 1966 में की। आज एएबीई के सदस्य 16 एशियाई देशों में हैं। संगठन की भारतीय शाखा की शुरुआत के उपलक्ष्य में छब्बीसवाँ द्विवार्षिक सम्मेलन सितम्बर, 2016 में गोवा में आयोजित किया गया। इस वर्ष के सम्मेलन का विषय था - जीवविज्ञान शिक्षा और शोधकार्य में रुझान : व्यवहार और चुनौतियाँ। सम्मेलन का उद्घाटन लक्ष्मीकान्त पारसेकर, मुख्यमंत्री, गोवा द्वारा किया गया जिन्होंने शिक्षक की भूमिका के बारे में अपने स्वयं के जीवन से उदाहरण देते हुए सारगर्भित भाषण दिया।

राष्ट्रीय प्रतिरक्षा विज्ञान संस्थान, नई दिल्ली के प्रोफ़ेसर सत्यजीत रथ का भाषण सम्मेलन के विषय के लिए बहुत प्रासंगिक था। उन्होंने जीवविज्ञान शिक्षा के वर्तमान व्यवहार में चिन्ताजनक रुझानों की चर्चा की और इस ओर ध्यान आकर्षित किया कि इनके कारण सीखने की प्रक्रिया को काफ़ी हानि पहुँच रही है। एक प्रतिरक्षाविज्ञानी (immunologist) होने के नाते उन्होंने उदाहरण दिया कि जीवविज्ञान शिक्षा के वर्तमान व्यवहार संकीर्ण रूप से रोगों तक केन्द्रित होकर रह गए हैं, जबकि उन्हें रोगों से परे जाकर

एएबीई के उद्देश्य

- एशियाई देशों में जीवविज्ञान के अध्यापन में सुधार करना (और उनमें शोधकार्य को बढ़ावा देना)।
- समय-समय पर एशियाई देशों के जीवविज्ञान शिक्षकों के सम्मेलन आयोजित करना।
- एशिया में एक ऐसी संस्था स्थापित करना जो अध्यापन सामग्रियों, पत्रिकाओं और शोधपत्रों, विशेषज्ञों और शिक्षकों के विनिमय के लिए केन्द्र के रूप में कार्य कर सके और इस संस्था और विभिन्न देशों में इसी प्रकार का कार्य करने वाली संस्थाओं के बीच सम्प्रेषण के रास्ते खोल सके।
- हर एशियाई देश में जीवविज्ञान अध्यापन केन्द्र की स्थापना को बढ़ावा देना।

चित्र-1 : राष्ट्रीय प्रतिरक्षा विज्ञान संस्थान, नई दिल्ली के प्रोफ़ेसर सत्यजीत रथ एएबीई सम्मेलन में भाषण देते हुए।
Credits: Reeteka Sud. License: CC-BY-NC.

"इस सम्मेलन से भारत में जीवविज्ञान के अध्यापन की वर्तमान स्थिति के बारे में मेरी समझ निश्चित रूप से विकसित हुई।"

- एक सहभागी

स्वास्थ्य और समाज पर उसके प्रभाव की चर्चा करनी चाहिए। ऐसा प्रतीत होता है कि कई अन्य विषयों के समान जीवविज्ञान के सीखने-सिखाने की प्रक्रियाएँ स्वास्थ्य को समझने पर नहीं, अपितु परीक्षा उत्तीर्ण करने पर केन्द्रित हो गई हैं। प्रोफ़ेसर रथ ने कहा, क्या यह रुझान बदल सकता है और जीवविज्ञान के पाठ्यक्रम का केन्द्र 'स्वच्छता' जैसे न्यूनकारी दृष्टिकोण (reductionist view) से 'स्वास्थ्य' जैसे अधिक व्यापक दृष्टिकोण की ओर मोड़कर अन्तर्सम्बन्धों को स्पष्ट कर सकता है। उदाहरण के लिए व्यक्तियों के स्वास्थ्य और उन समुदायों के स्वास्थ्य के बीच के अन्तर्सम्बन्ध जिनके वे सदस्य हों? क्या शिक्षा के उद्देश्य को "पुनर्भाषित" करके उसे केवल एक रोज़गारोन्मुखी शिक्षा देने, जिसमें जानकारी की प्रचुरता हो, की अपेक्षा स्वयं सोच सकने वाले ज्ञानवान नागरिक निर्माण करने पर केन्द्रित किया जा सकता है?

भारतीय विज्ञान संस्थान (बेंगलूरु) की प्रोफ़ेसर रोहिणी बालकृष्णन ने सहभागियों को एक बहुत ज्ञानवर्धक प्रक्रिया से गुज़रने का अवसर दिया। इस बात पर ज़ोर देते हुए कि क्यों-प्राकृतिक इतिहास (Natural History) जीवविज्ञान का एक महत्त्वपूर्ण भाग होना चाहिए, उन्होंने इस तथ्य को रेखांकित किया कि दुर्भाग्य से आज यह विषय जीवविज्ञान की कक्षाओं में दिखाई नहीं देता है। यह शिक्षकों की भर्ती के समय स्पष्ट होता है - विभाग शायद ही कभी प्राकृतिक इतिहास में प्रशिक्षित व्यक्तियों को लेते हैं। जीवविज्ञान हमारे चारों ओर है, किन्तु खेद की बात है कि 'आधुनिक जीवविज्ञान' केवल प्रयोगशालाओं और आणविक विश्लेषण तक सिमटकर रह गया है, जहाँ प्रकृति का केवल अवलोकन करके सीखने के लिए कोई स्थान नहीं है। उन्होंने इस बात को रेखांकित किया कि हमारे मत्स्यपालन, कृषि, औषधियाँ, स्वास्थ्य से सम्बन्धित मुद्दे, यहाँ तक कि जलवायु परिवर्तन के कारण पैदा हुआ वर्तमान संकट, सभी किसी-न-किसी प्रकार से प्राकृतिक इतिहास पर निर्भर हैं। मनुष्य का कल्याण केवल अणुओं के सांख्यिक विश्लेषण से संचालित नहीं हो सकता, उसका पुख़्ता आधार प्राकृतिक इतिहास में होना चाहिए। उनका कथन सत्यजीत रथ के कथन से मेल खाता है जिन्होंने इसी को जीवविज्ञान शिक्षा में न्यूनीकरण का वर्चस्व कहा था।

"कुछ उत्साही और समर्पित स्कूली शिक्षकों से मिलकर मुझे बहुत अच्छा लगा और प्रेरणा मिली। मैं यहाँ श्री राजेश पाटिल का विशेष उल्लेख करना चाहूँगा। उनके विचार न केवल रचनात्मक और नवाचारी थे, वे ऊर्जा और उत्साह से भरे हुए थे। मैं यह सोचता रहा कि एक अच्छा शिक्षक बनने की यही कुंजी है और मैं वास्तव में प्रेरित हुआ।"

- एक सहभागी

"मैंने देखा कि पाठ्यक्रम में दी जाने वाली शिक्षा के सन्दर्भ में शोधकार्य करने वाली संस्थाओं के लचीलेपन और केवल शिक्षा देने वाले महाविद्यालयों के बीच एक खाई है। यह स्वाति पाटणकर के भाषण से स्पष्ट हुआ जहाँ उन्होंने स्नातक कक्षाओं में प्रश्न पूछने की रचनात्मक विधियों के उदाहरण दिए।"

- एक सहभागी

इसमें कोई शक़ नहीं कि हमारा शिक्षा तंत्र कई अवरोध खड़े करता है - पाठ्यक्रम में विषयवस्तु लगातार बढ़ती जा रही है, और

"यह देखकर अच्छा लगा कि कई उत्साही शिक्षक चुनौती भरी परिस्थितियों में भी सीखने की प्रक्रिया को रोमांचक बना रहे हैं।"

- एक सहभागी

परीक्षा के पहले इस सब को पूरा करना शिक्षकों और विद्यार्थियों के लिए बहुत अधिक कठिन होता है। किन्तु जैसा मुम्बई आईआईटी की प्रोफ़ेसर स्वाति पाटणकर ने कहा जब शिक्षक कक्षा में होता है तब उसे काफ़ी स्वायत्तता होती है और वह 'ढाँचे से बाहर' आ सकता है। यदि प्रबन्धन उचित हो तो इस उपागम का परिणाम बहुत अधिक प्रभावशाली हो सकता है। अपने कथन के समर्थन में उन्होंने अपनी स्वयं की कक्षा का उदाहरण दिया जहाँ पढ़ाई जाने वाली (और परीक्षा में प्रश्नों के रूप में पूछी जाने वाली) तथ्यात्मक जानकारी को ऐसे व्यापक सन्दर्भ में प्रस्तुत किया जाता है जिससे विद्यार्थी अपने आप को जोड़ सकते हैं। इसके परिणामस्वरूप, जो तथ्य वे केवल रटकर याद कर लेते थे वे विद्यार्थियों के लिए अर्थपूर्ण हो जाते हैं। कक्षा में शिक्षक को केवल निष्क्रिय दर्शक बनकर देखने वाले विद्यार्थी अपने स्वयं की सीखने की प्रक्रिया में सक्रिय सहभागी बन जाते हैं।

इस सम्मेलन में सहभागिता ने हम कई सदस्यों को जीवविज्ञान की शिक्षा में सुधार की नितान्त आवश्यकता के बारे में निश्चित रूप से अधिक गहराई से सोचने के लिए मजबूर कर दिया। वास्तव में, यह आवश्यकता ही वह बड़ा कारण है जिसके चलते अब भारतीय शाखा की, और 50 वर्षों से अधिक पहले एशियाई संगठन की स्थापना की गई। संस्थापक सदस्यों ने यह अनुभव किया कि नेटवर्क द्वारा आपस में जुड़ा हुआ शिक्षक समुदाय एक-दूसरे से सीखने, और इस प्रक्रिया से सर्वांगीण शिक्षा प्रणाली में परिवर्तन के लिए, अधिक समर्थ होगा।

सम्मेलन ने विविध पृष्ठभूमि, विचारधारा और व्यवहार वाले व्यक्तियों के विचारों के आदान-प्रदान के लिए एक बहुत अच्छा मंच प्रदान किया। इस तथ्य को देखते हुए कि इसमें लगभग 100 सहभागी थे, सम्मेलन ने आपसी सहयोग के लिए बहुत अच्छा अवसर प्रदान किया। क्या यह शिक्षकों को उन बेड़ियों को तोड़ने के लिए प्रेरित कर सका जो जीवविज्ञान की शिक्षा को सीमित करती हैं? एक सीमित दायरे में शायद हाँ, किन्तु हम इसे एक अच्छी शुरुआत के रूप में देखते हैं। इस प्रकार के सम्मेलनों का, जो नेटवर्किंग के अवसर प्रदान करते हैं, प्रेरित शिक्षकों को एक स्थान पर लाने में महत्त्वपूर्ण योगदान हो सकता है। हम एक गम्भीर परिवर्तन की अपेक्षा तभी कर सकते हैं जब जीवविज्ञान की शिक्षा के प्रति विविध उपागमों और दर्शनों वाले व्यक्ति एक साथ आएँ।

इस समूह में शामिल होने के लिए भारतीय शिक्षक, भारतीय शाखा के कार्यकारी संचालक, नरेन्द्र देशमुख से nddeshmukh1965@gmail.com पर सम्पर्क कर सकते हैं।

एएबीई के द्वारा एक पत्रिका द *एशियन जर्नल ऑफ़ बॉयोलॉजी एजुकेशन* प्रकाशित की जाती है जिसे http://www.aabe.sakura.ne.jp पर ऑनलाइन देखा जा सकता है।

रीतिका सूद इण्डिया बायोसाइंस में शिक्षा समन्वयक हैं। पेशे से तंत्रिका विज्ञानी, रीतिका विज्ञान सम्प्रेषण को लेकर बहुत उत्साहित हैं। उनसे reeteka@indiabioscience.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।

गीता अय्यर लेखक हैं और शिक्षा तथा पर्यावरण के क्षेत्रों में सलाहकार का कार्य स्वतंत्र रूप से करती हैं। उन्होंने शिक्षा, पर्यावरण और प्राकृतिक इतिहास के विषयों पर व्यापक लेखन किया है। उनसे brownfishowl@yahoo.co.uk पर सम्पर्क किया जा सकता है।

Published by Azim Premji Foundation for Development
Pixel 'B', PES College of Engineering Campus, Electronics City, Bengaluru - 560100
Printed by SCPL, Bengaluru - 560062. **Editor:** Ramgopal Vallath

चार्ल्स डार्विन के 'प्रजातियों की उत्पत्ति' के प्रकाशित होने के दो साल बाद खोजा गया, ***आर्कियोप्टेरिक्स*** विकासवादी सिद्धान्त का समर्थन करने वाला एक महत्त्वपूर्ण साक्ष्य है।

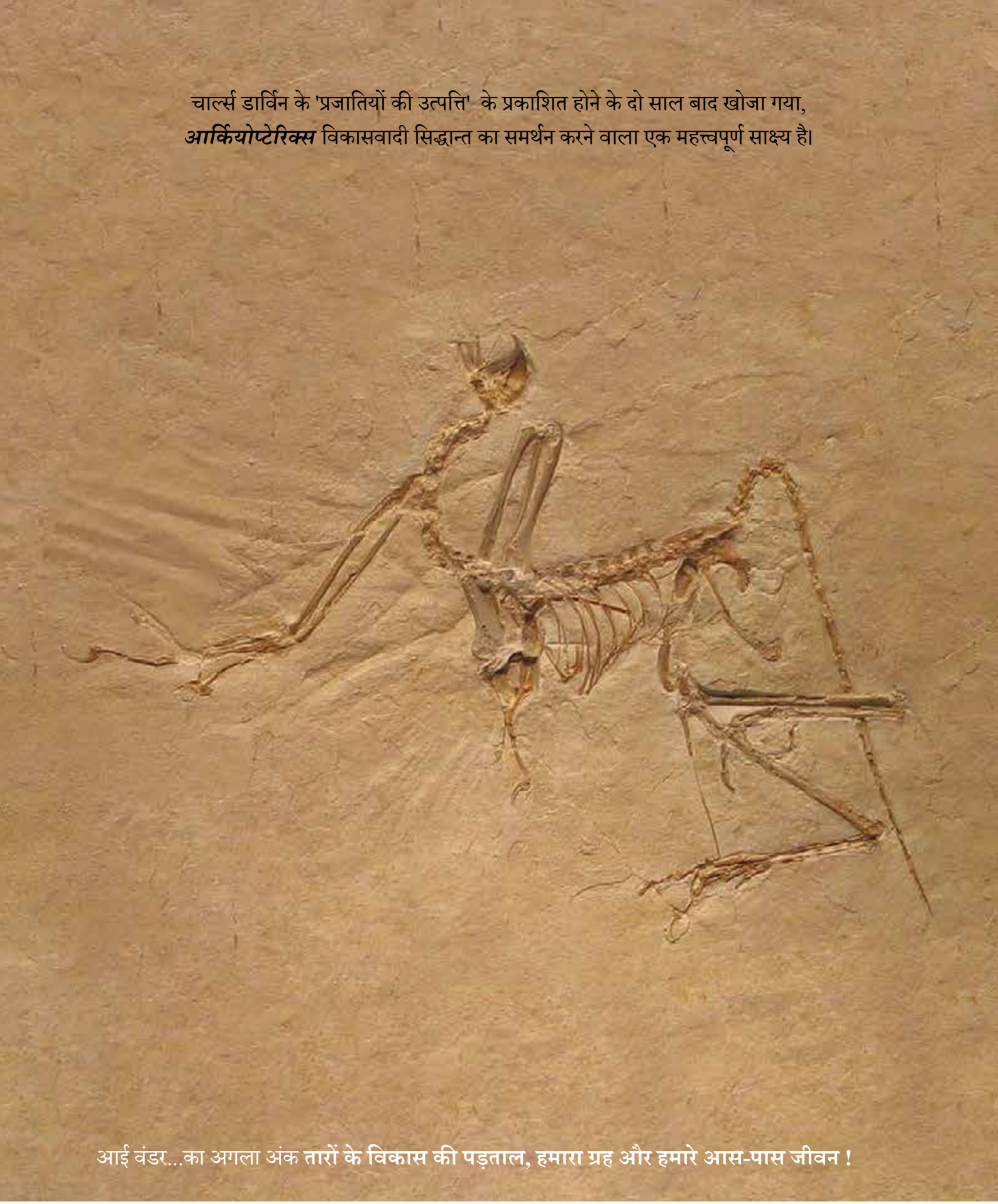

आई वंडर...का अगला अंक **तारों के विकास की पड़ताल, हमारा ग्रह और हमारे आस-पास जीवन !**